क्र.सं.
६४

ऋग्वेद संहिता

(वैदिकजीवनभाष्ययुता)

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और
भाषा अनुवाद टिप्पणी और मन्त्रों के
आशय पर व्याख्यान से युक्त

क्र. सं. ६४

NEPAL SANSKRIT UNIVERSITY
पुस्तकालय

R.

रत्न पुस्तक भण्डार
"ग्रीन हाउस"
२७१, माईतीघर
काठमाडौं, नेपाल
फोन : ४-२४०८५०

वे० - ६४३

ऋग्वेद संहिता

(वैदिकजीवनभाष्ययुता)

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और
भाषा अनुवाद टिप्पणी और मन्त्रों के
आशय पर व्याख्यान से युक्त

प्रथम मण्डल : नवम खण्ड

NEPAL SANSKRIT UNIVERSITY
पुस्तकालय

सम्पादक
शिवनाथ आहिताग्नि
पं० शंकरदत्त शास्त्री

NAG PUBLISHERS

नाग प्रकाशक
११ए/यूए, जवाहर नगर, दिल्ली-७

नाग प्रकाशक
(१) ११ए/यू. ए. जवाहरनगर, दिल्ली-७
(२) ८ ए/यू. ए. ३ जवाहर नगर, दिल्ली-७
(३) जलालपुर माफी (चुनार-मिर्जापुर) उ० प्र०

ISBN 81-7081-246-1(SET)

पुस्तकालय

प्रथम संस्करण १९०४
द्वितीय संस्करण १९९१

R
Acc. २५०५९ / २९०६१

मूल्य : रु०

श्री नागशरण सिंह द्वारा नाग प्रकाशक, जवाहर नगर, दिल्ली से
प्रकाशित ज्ञान आफसेट, शहजादा बाग, दिल्ली से मुद्रित ।

वेद-६४३

ऋ० मं०१ सू० १६५

इन्द्रोदेवता, अगस्त्यऋषिः ।

विनियोगः-

१—१५ । एतत्सूक्तं संसवचातुर्विंशकयोर्मरुत्वतीयशस्त्रे निविद्धानीयात्पूर्वं विनियुक्तम आ०६।६।१४,७।३।३)

,, आभिप्लविके पञ्चमेऽहनि मरुत्वतीये विनियुक्तम् (आ० ७।५)

,, महाव्रते मरुत्वतीयशस्त्रे विनियुक्तम् (ऐ०आ०५।१।१)

,, विषुवति मरुत्वतीये निविद्धानीयम् (आ०८।६।६)

सूक्त का भावार्थ ।

समान आयु वाले और समान निवासस्थान वाले मरुत किस एक जैसी शोभा से युक्त हुए हैं ? किस प्रयोजन से ? ये कहां से आए हैं ? क्या ये वीर धन की इच्छा से बल की स्तुति करते हैं? ॥ १ ॥ इन जवानोंने किस की स्तुति को स्वीकार किया है? किसने मरुतों को अपने यज्ञ की ओर फेरा है ?, अन्तरिक्ष में श्येन पक्षियों की न्याईं उड़ते हुए इन को हम किस विशाल मन से विश्राम करावें ? ॥२॥ हे इन्द्र ! आप महान् होकर किस लिये अकेले जाते हो ? हे सज्जनों के पालक ! आप का क्या अभीष्ट है ? हम शोभा वालों के साथ जाते हुए जो आप पूछते हो, सो हे घोड़ों वाले ! हमें जो कुछ कहना है सो कहो ॥ ३ ॥ हे मरुतो ! स्तुति के राग सुनना मेरा अभीष्ट है, निचोड़ा हुआ सोम मेरे लिये सन्तोष कारी है, प्रहार किया हुआ मेरा बलवान वज्र चलता है, मनुष्य मुझ से प्रार्थना करते हैं, और उनके स्तोत्र मेरी कामना करते हैं,

वे घोड़े उनकी ओर हमें ले जाते हैं ॥ ४ ॥ हे इन्द्र ! हम भी इसीलिये साथियों से युक्त हुए २ और अपने बलों से शरीरों को बिगाड़ते हुए बलों की न्याईं इन घोड़ों को रथ में जोड़ते हैं, आप हमारी प्रकृति को तो जानते ही हैं ॥ ५ ॥ हे मरुतो ! वह तुम्हारी प्रकृति कहां गई थी जब तुमने वृत्र के मारने के लिये मुझे अकेले जाने दिया, मैं निःसन्देह प्रचंड बलवान और महान हूं और मैंने वज्र से सब शत्रुओं को वशीभूत किया है ॥ ६ ॥ हे वीर ! आपने हम साथियों की सहायता से बलों को मिला कर बहुत कुछ किया है, हे सब से अधिक बल वाले ! हम भी अपने मनोबल से चाहें तो बहुत कर्म करने में समर्थ हैं ॥ ७ ॥ हे मरुतो ! मैंने अपने क्रोध से बलवान होकर निजबल से वृत्र को मारा है, वज्र हाथ में लिये हुए मैंने ही मनुष्य के लिये सब को आनन्द देने वाले और सुन्दर पति वाले जलों को बनाया है ॥ ८ ॥ हे धनवान ! आप से अधिक दीनता से रहित कोई नहीं है, न आप जैसा विख्यात कोई देव है, हे अत्यन्त बढ़े हुए ! आपको पहुंचने वाला न कोई जन्मा है और न कोई जन्मेगा, इसलिये जो आपने करना है सो करो ॥ ९ ॥ हे मरुतो ! अकेले ही मेरा ऐकपत्य बल हो, बुद्धि से प्रगल्भ मैं जो बिचारूं सो कर सकता हूं, मैं उग्रता में प्रसिद्ध हूं और जो कुछ मैंने प्रवर्तन किया है उस सब का मैं इन्द्र ही स्वामी हूं ॥ १० ॥ हे शूरवीर मरुतो ! अब मैं तुम्हारे स्तोत्र से प्रसन्न हुआ हूं, जो तुम मित्रों ने मुझ अत्यन्त पूज्य और शूरवीर मित्र इन्द्र के लिये बनाया है, और जो तुमने अपने शरीरों से मेरे शरीर के लिये रचा है ॥११॥ हे मरुतो ! चमकते हुए आपने निन्दारहित यश और बलों को धारण करते हुए हर्षित रूप से प्रकट होकर मुझे पहले भी हर्षित किया है वैसे ही अब भी करो ॥ १२ ॥ हे मरुतो ! यहां पर किसने तुम्हारा सम्मान किया है ? हे मित्रो ! तुम मित्रों की ओर जाओ, हे प्रकाश वालो ! भक्तों की स्तुतियों को सेवन

करते हुए तुम उनको इन मेरे नियमों का ज्ञान कराओ ॥ १३ ॥ जैसे कोई सेवा करने वाले के लिये पारितोषक देता है, ऐसे मुझ मान के पुत्र को जैसी मेरी बुद्धि है मरुतों ने कवि बनाया है, हे मरुतो ! आप इस विप्र की ओर लौटो, यह स्तोता आप के ताईं ये स्तुति के वाक्य भेंट करता है ॥ १४ ॥ हे मरुतो ! मान के पुत्र मान्दार्य का यह स्तोत्र और यह वाणी आप के लिये हों, आप हमारे शरीर को बल देने के लिये अन्न के साथ आवें और हम अन्न को बल को और शीघ्र दान करने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ १५ ॥

इन्द्रो देवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

कयाशुभासवयसः सनीळाः समान्यामरुतः संमिमिक्षुः । कयामती कुतएतासएतेऽर्चन्तिशुष्मंवृषणोवसूया ॥ १ ॥

कया	कया	किस से
शुभा	शोभया	शोभा से

सऽव॑यसः	समानवयस्काः	एक आयु वाले
सऽनी॑ळाः	समानस्थानाः	एक स्थान वाले
स॒मा॒न्या	समान्या	एक जैसी से
म॒रु॑तः	मरुतः	मरुत
सम्	सम्+	–
मि॒मि॒क्षुः	सम्+मिमिक्षुः संयुक्ताःसञ्जाताः	युक्त हुए हैं
कया॑	कया	किस से
म॒ती	मत्या	मति से
कुत॑ः	कुतः	कहां से
आऽइ॑तासः	आगताः	आए हैं
ए॒ते	एते	ये

अर्चन्ति	स्तुवन्ति	स्तुति करते हैं
शुष्मम्	बलम्	बल को
वृषणः	वीराः	वीर
वसुऽया	धनेच्छया	धन की इच्छा से

संस्कृतार्थः ।

समानवयस्काः समानस्थानाः (च) मरुतः कया समान्या शोभया संयुक्ताः (सन्ति ?) एते कया मत्या कुतः (च) आगताः ? (किम्एते) वीराः धनेच्छया बलं स्तुवन्ति ? ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

एक आयु वाले (और) एक स्थान वाले मरुत किस एक जैसी शोभा से युक्त हुए हैं, ये किस मति से (और) कहां से आए हैं ? (क्या ये) वीर धन की इच्छा से बल की स्तुति करते हैं ? ॥ १ ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टप्छन्दः।११।११।११।११

कस्यब्रह्माणिजुजुषुर्युवानः को

अध्वरेमरुतआववर्त । श्येनाँइव
ध्रजतोअन्तरिक्षे केनमहामनसारीरमाम ॥ २ ॥

कस्य	कस्य	किस के
ब्रह्माणि	स्तुतीः	स्तुतियों को
जुजुषुः	सेवितवन्तः	सेवन किया है
युवानः	युवानः	जवानों ने
कः	कः	कौन
अध्वरे	यज्ञे	यज्ञ में
मरुतः	मरुतः	मरुतों को
आ	आ +	

ववर्त	आ + ववर्त, आवर्तितवान्	फेरा है
श्येनान् ऽइव	श्येनानिव	श्येनों (बाजों) की न्याईं
ध्रजतः	गच्छतः	जाते हुओं को
अन्तरिक्षे	अन्तरिक्षे	अन्तरिक्ष में
केन	केन	किस से
महा	महता	महान से
मनसा	मनसा	मन से
रीरमाम	विश्रमयाम	विश्राम करावें

संस्कृतार्थः।

युवानः(मरुतः)कस्य स्तुतीः सेवितवन्तः,(एतान्) मरुतः को यज्ञे आवर्तितवान्, अन्तरिक्षे श्येनानिव गच्छतः(एनान्)केन महता मनसा विश्रमयाम॥ २॥

भाषार्थः।

जवान (मरुतों) ने किस की स्तुतिओं को सेवन किया है, (इन) मरुतों को किसने यज्ञ में फेरा है, अन्तरिक्ष में श्येनों की न्याइँ जाते हुए (इन) को हम किस महान मन से विश्राम करावें ॥ २ ॥

इन्द्रोदेवता,निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः।१-।११।११।११

कुतस्त्वमिन्द्रमाहिनःसन्नेकोयासिसत्पतेकिंतइत्था। संपृच्छसेसमराणःशुभानैर्वोचेस्तन्नोहरिवोयत्तेअस्मे ॥ ३ ॥

कुतः	कस्मात्	किस लिये
त्वम्	त्वम्	तू

इ॒न्द्र॒	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
मा॒हिनः	महान्	महान
सन्	सन्	हुआ २
ए॑कः	एकः	अकेला
या॒सि॒	गच्छसि	तू जाता है
स॒त्ऽप॒ते॒	हे सतां पालक !	हे सत्पुरुषों के पालने वाले !
किम्	किम्	क्या
ते॒	तव	तेरा
इ॒त्था	सत्यम् (निघं० ३।१०)	सचमुच
सम्	सम् +	–
पृ॒च्छसे॒	सम्+पृच्छसे, सम्यक्पृच्छसि	तू खूब पूछता है

ऋ०मं०१ सू०१६५ मं०३ (४५५०)

सम्ऽअराणः	सङ्गच्छमानः	सङ्गति करता हुआ
शुभानैः	शोभमानैः	शोभते हुओं से
वोचेः	ब्रूहि	तू बोल
तत्	तत्	सो
नः	अस्मान्	हम को
हरिऽवः	हे अश्वयुक्त !	हे घोड़ों वाले
यत्	यत्	जो
ते	तव	तेरा
अस्मे०	अस्मासु (सप्तम्याःशेआदेशः)	हम में

संस्कृतार्थः ।

हे सत्पते ! इन्द्र ! त्वं महान् सन् कस्मादेको गच्छसि, किं तव (अभीष्टम्) खलु, (त्वम्) शोभमानैः (अस्माभिः) सङ्गच्छमानः (सन्) सम्यङ्

पृच्छसि,हे अश्वयुक्त ! यदस्मासु तव (वक्तव्यमस्ति) तदस्मान् ब्रूहि ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

हे सज्जनों के पालक इन्द्र ! आप महान हुए २ किसलिये अकेले जाते हो, सचमुच आपका क्या (मनोरथ है) आप (हम) शोभावालों के साथ जाते हुए खूब पूछते हो, हे घोड़ों वाले ! हमों आपको जो (कहना हो) सो हमें कहो ॥ ३ ॥

इस मंत्र में मानो मरुत इन्द्र से सम्भाषण करते हैं ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।२ १।१ २।१ १।१ १।

ब्रह्माणिमेमतयःशंसुतासःशुष्म-
इयर्तिप्रभृतोमेअद्रिः । आशासते
प्रतिहर्यन्त्युक्थेमाहरीवहतस्तानो
अच्छ ॥ ४ ॥

ब्रह्माणि	स्तुतयः	स्तुतियाँ

मे॒	मम	मेरे
म॒तयः॑	प्रार्थनाः (आ०को०)	प्रार्थनाएँ
शम्	सुखकराः	सुख के करने वाले
सु॒तासः॑	निष्पीडिताः (सोमाः)	निचोड़े हुए (सोम)
शु॒ष्मः॑	बलवान्	बलवान
इ॒य॒र्ति॒	प्राप्नोति	प्राप्त होता है
प्रऽभृ॑तः	प्रहृतः	चलाया हुआ
मे॒	मम	मेरा
अद्रिः॑	वज्रः	वज्र
आ	आ+	–
शा॒स॒ते॒	आ+शासते, प्रार्थयन्ते	प्रार्थना करते हैं

प्रति॑	प्रति+	-
ह॒र्य॒न्ति॒	प्रति+हर्यन्ति, कामयन्ते	कामना करते हैं
उ॒क्था	स्तोत्राणि	स्तोत्र
इ॒मा	इमौ	ये
ह॒री॰	अश्वौ	दोनों घोड़े
व॒ह॒त॒ः	प्रापयतः	ले जाते हैं
ता	तानि	उन को
न॒ः	अस्मान् (आत्मनईश्वरत्वाद् बहुवचनम्)	हम को
अच्छ॑	अभिलक्ष्य	लक्ष्य कर

संस्कृतार्थः ।

स्तुतयः, प्रार्थनाः, निष्पीडिताः (सोमाश्च) मम सुखकराः (भवन्ति) बलवान् मम वज्रः प्रहृतः (सन् शत्रून्) प्राप्नोति, (मनुष्या माम्) प्रार्थयन्ते

(तेषाम्) स्तोत्राणि (च माम्) कामयन्ते, इमावश्वौ तानि अभिलक्ष्य मां प्रापयतः ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

स्तुतियाँ प्रार्थनाएँ (और) निचोड़े हुए (सोम) मेरे सुख के देने वाले (हैं) बलवान् मेरा वज्र चलाया हुआ (शत्रुओं को) प्राप्त होता है, (मनुष्य मुझ से) प्रार्थना करते हैं (और उनके) स्तोत्र (मेरी) कामना करते हैं, ये दोनों घोड़े उनकी ओर मुझको लेजाते हैं ॥ ४ ॥

यह मानो इन्द्र मरुतों के ताईं उत्तर देते हैं ।

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।१३।११।१३।११।

अतो॑व॒यम॑न्त॒मेभि॑र्युजा॒नाः स्व-
क्ष॑त्रेभिस्त॒न्व१॒॑ः शुम्भ॑मानाः । महो॑-
भि॒रेता॒ँउप॑युज्महे॒न्विन्द्र॑स्व॒धामनु॒
हिनो॑ब॒भू॑थ ५ ।

अतः॑	अतः	इसलिये
व॒यम्	वयम्	हम
अ॒न्त॒मेभि॑ः	समीपंनिवसद्भिः	पास रहने वालोंसे
यु॒जा॒नाः	युक्ताःसन्तः	युक्त हुए २
स्वऽक्ष॑त्रेभिः	स्वबलैः	अपने बलों से
त॒न्व॑ः	शरीराणि	शरीरों को
शु॒म्भ॑मानाः	शोभयन्तः	सिंगारते हुए।
मह॑ःऽभिः	बलैः	बलों से
एता॑न्	एतान्	इन को।
उप॑	उप+,	–
यु॒ज्म॒हे॒	उप+युज्महे, योजयामः	जोड़ते हैं।

(तेषाम्) स्तोत्राणि (च माम्) कामयन्ते, इमावश्वौ तानि अभिलक्ष्य मां प्रापयतः ॥ ४ ॥

भाषार्थः।

स्तुतियाँ प्रार्थनाएँ (और) निचोड़े हुए (सोम) मेरे सुख के देने वाले (हैं) बलवान् मेरा वज्र चलाया हुआ (शत्रुओं को) प्राप्त होता है, (मनुष्य मुझ से) प्रार्थना करते हैं (और उनके) स्तोत्र (मेरी) कामना करते हैं, ये दोनों घोड़े उनकी ओर मुझको लेजाते हैं ॥ ४ ॥

यह मानो इन्द्र मरुतों के ताईं उत्तर देत हैं।

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।ऽ१।ऽ१।ऽ१।ऽ१।

अतो॑व॒यम॑न्त॒मेभि॑र्युजा॒नाः स्वक्ष॑त्रेभिस्त॒न्व॑१॒ःशुम्भ॑मानाः । महो॑भि॒रेताँ॒उप॑युज्महे॒न्विन्द्र॑स्व॒धामनु॒ हिनो॑ब॒भूथ ५ ।

अत॑ः	अतः	इसलिये
व॒यम्	वयम्	हम
अ॒न्त॒मे॑भिः	समीपंनिवसद्भिः	पास रहने वालोंसें
यु॒जा॒नाः	युक्ताःसन्तः	युक्त हुए २
स्वऽक्ष॑त्रेभिः	स्वबलैः	अपने बलों सें
त॒न्व॑ः	शरीराणि	शरीरों को
शुम्भ॑मानाः	शोभयन्तः	सिंगारते हुए।
मह॑ःऽभिः	बलैः	बलों से
एता॑न्	एतान्	इन को।
उ॑प	उप+,	–
यु॒ज्म॒हे॒	उप+युज्महे, योजयामः	जोड़ते हैं।

नु	(उपमार्थे) (यास्कः)	मानों
इन्द्र॑	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
स्व॒धाम्	स्वभावम्	स्वभाव को
अनु॑	अनु+	-
हि	एव	ही
नः॒	अस्माकम्	हमारे
ब॒भूथ॑	अनु + बभूथ, अनुभूतवानसि	तूने अनुभव किया है

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! अतः समीपंनिवसद्भिः युक्ताः सन्तः स्वबलैः शरीराणि(च) शोभयन्तः (वयम्) बलैरिव एतान् (अश्वान्) (रथे) योजयामः, (त्व तु) अस्माकं स्वभावम् अनुभूतवानसि एव ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! इस लिये पास रहने वालों से युक्त

हुए २ (और) अपने बलों से शरीरों को सिंगारते हुए हम बलों से मानो इन (घोड़ों) को (रथमें) जोड़ते हैं, आपने (तो) हमारे स्वभाव का अनुभव किया ही है ॥ ५ ॥

मरुत मानो इन्द्र को कहते हैं कि हम भी आप के साथ चलने के लिये उद्यत हुए हैं, जैसा आप जानते हैं कि हम स्वभाव से ही आप के साथी हैं।

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः।३ १।३ १।६ १।३ १।

क्व॑१॒स्या वो॑ मरुतः स्व॒धासी॒-
द्यन्मामेकं॑ स॒मध॑त्ताहि॒हत्ये॑। अ॒हं
ह्यू१॒ग्रस्त॑वि॒षस्तुवि॑ष्मा॒न्विश्व॑स्य॒
शत्रो॒रन॑मं वध॒स्नैः ॥ ६ ॥

क्व॑	क्क	कहां
स्या	सः	वह

ऋ०मं०१सू०१६५ मं०६ (४५५८)

व॒ः	युष्माकम्	तुम्हारा
म॒रु॒त॒ः	हे मरुतः !	हे मरुतो
स्व॒धा	स्वभावः	स्वभाव
आ॒सी॒त्	आसीत्	था
यत्	यत्	जो
माम्	माम्	मुझ को
ए॑कम्	एकम्	अकेले को
स॒म्ऽअध॑त्त	यूयं स्थापितवन्तः	तुमने लगाया
अ॒हि॒ऽहत्ये॑	वृत्रस्य हननार्थम्	वृत्र के मारने के लिये
अ॒हम्	अहम्	मैं
हि	खलु	सचमुच

उ॒ग्रः	भयानकः	भयानक
त॒वि॒षः	बलवान्	बलवान्
तुवि॑ष्मान्	महान्	महान्
विश्व॑स्य	सर्वम् (कर्मणिषष्ठी)	सब को
शत्रो॑ः	शत्रुजातम् (कर्मणिषष्ठी)	शत्रुओं को
अन॑मम्	वशीकृतवानस्मि (अन्तर्भावितण्यर्थः)	मैंने वशीभूत किया है
व॒ध॒ऽस्नैः	वज्रप्रक्षेपणैः (वधइतिवज्रनाम निघं० २।२०)	वज्र के चलाने से

संस्कृतार्थः ।

हे मरुतः ! स युष्माकं स्वभावः काऽऽसीत् यदेकं मां यूयं वृत्रस्य हननार्थं स्थापितवन्तः, अहं खलु उग्रो बलवान् महान् (चाऽस्मि) सर्वं शत्रुजातम् (च) वज्रप्रक्षेपणैर्वशीकृतवानस्मि ॥ ६ ॥

भावार्थः ।

हे मरुतो ! यह तुम्हारा स्वभाव कहां था

ऋ०मं०१सू०१६५ मं०६ (४५५८)

व॒ः	युष्माकम्	तुम्हारा
म॒रु॒त॒ः	हे मरुतः !	हे मरुतो
स्व॒धा	स्वभावः	स्वभाव
आ॒सी॒त्	आसीत्	था
यत्	यत्	जो
माम्	माम्	मुझ को
ए॑कम्	एकम्	अकेले को
स॒म्ऽअध॑त्त	यूयं स्थापितवन्तः	तुमने लगाया
अ॒हि॒ऽहत्ये॑	वृत्रस्य हननार्थम्	वृत्र के मारने के लिये
अ॒हम्	अहम्	मैं
हि	खलु	सचमुच

उग्रः	भयानकः	भयानक
तविषः	बलवान्	बलवान्
तुविष्मान्	महान्	महान्
विश्वस्य	सर्वम् (कर्मणिषष्ठी)	सब को
शत्रोः	शत्रुजातम् (कर्मणिषष्ठी)	शत्रुओं को
अनमम्	वशीकृतवानस्मि (अन्तर्भावितण्यर्थः)	मैंने वशीभूत किया है
वधऽस्नैः	वज्रप्रक्षेपणैः (वध इति वज्रनाम निघं० २।२०)	वज्र के चलाने से

संस्कृतार्थः।

हे मरुतः! स युष्माकं स्वभावः क्वाऽऽसीत् यदेकं मां यूयं वृत्रस्य हननार्थं स्थापितवन्तः, अहं खलु उग्रो बलवान् महान् (चाऽस्मि) सर्वं शत्रुजातम् (च) वज्रप्रक्षेपणैर्वशीकृतवानस्मि ॥ ६ ॥

भाषार्थः।

हे मरुतो! वह तुम्हारा स्वभाव कहां था

जो तुम ने अकेले मुझ को वृत्र के मारने के लिये लगाया, सचमुच मैं भयानक, बलवान् (और) महान् (हूं) (और) मैंने सब शत्रुओं को वज्र चला कर वशीभूत किया है ॥ ६ ॥

मानो इन्द्र कहते हैं कि तुम्हारे स्वभाव की परीक्षा तो उसी समय होगई जब तुमने वृत्र के मारने के लिये मुझे अकेले जाने दिया।

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः।११।१२।१३।१४।

भूरि॑चकर्थ॒युज्ये॑भिर॒स्मे स॑मा॒नेभि॑र्वृषभ॒पौंस्ये॑भिः। भूरी॑णि॒हिकृ॒णवा॑माशवि॒ष्ठेन्द्र॒ क्रत्वा॑मरु॒तो॒यद्वशा॑म।७।

भूरि॑	प्रभूतम्	बहुत
च॒क॒र्थ॒	कृतवानसि	तूने किया है
युज्ये॑भिः	सहचरैः	साथियों से

अस्मे०	अस्माभिः	हम से
समानेभिः	समानैः	समानों से
वृषभ	हे वीर !	हे वीर
पौंस्येभिः	बलैः	बलों से
भूरीणि	बहूनि	बहुतों को
हि	एव	ही
कृणवाम	कर्तुं समर्थाः स्मः	हम कर सकते हैं
शविष्ठ	हे बलवत्तम !	हे सब से अधिक बलवान्
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
क्रत्वा	मनोबलेन	मनोबल से
मरुतः	मरुतः (अनुदात्तत्वंछान्दसम्)	मरुत

यत्	यानि (विभक्तेर्लुक्)	जिन को
वश्मा॑म	इच्छाम	हम चाहें

संस्कृतार्थः ।

हे वीर ! (त्वम्) सहचरैरस्माभिः समानैर्बलैः (च) प्रभूतं कृतवानसि, हे बलवत्तम ! इन्द्र ! (वयम्) मरुतः (अपि) मनोबलेन बहूनि (कर्माणि) कर्तुं समर्थाः स्मो यानि इच्छाम ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

हे वीर ! आपने हम साथियों की सहायता से (और) समान बलों से बहुत (कुछ) किया है, हे सब से अधिक बल वाले ! इन्द्र ! हम मरुत (भी) मनोबल से बहुत (कर्म) जिनको हम चाहें कर सकते हैं ॥ ७ ॥

यह मानो मरुतों का वचन है ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११।

वधीं॑वृ॒त्रंम॑रुतइन्द्रि॒येण॒ स्वेन॒

भामेनतविषोबभूवान्। अहमेतामनवेविश्वश्चन्द्राः सुगाअपश्चकरवज्रबाहुः॥८॥

वधीम्	हतवानस्मि	मैंने मारा है
वृत्रम्	वृत्रम्	वृत्र को
मरुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो
इन्द्रियेण	बलेन	बल से
स्वेन	स्वकीयेन	अपने से
भामेन	क्रोधेन (निघं०२।१३)	क्रोध से
तविषः	बलवान्	बलवान्
बभूवान्	सम्भूतः	हुआ हूं

अ॒हम्	अहम्	मैंने
ए॒ताः	एताः	इन को
मन॑वे	मनवे	मनु के लिये
वि॒श्वऽच॑न्द्राः	सर्वेषामाह्लादकाः	सब के प्रसन्न करनेवालों को
सु॒ऽगाः	शोभनगमनाः	सुन्दर चलने वालों को
अ॒पः	अपः	जलों को
च॒क॒र॒	कृतवानस्मि	किया है
वज्र॑ऽबाहुः	वज्रस्य धारकः	वज्र रखने वाला

संस्कृतार्थः।

हे मरुतः! स्वकीयेन क्रोधेन बलवान् सञ्जातः अहम् (स्व-) बलेन वृत्रं हतवानस्मि, वज्रबाहुः

(अहमेव) मनवे सर्वेषामाह्लादकाः शोभनगमनाः (च) अपः कृतवानस्मि ॥ ८ ॥

भाषार्थः।

हे मरुतो! अपने क्रोध से बलवान् हुए २ मैंने (अपने) बल से वृत्र को मारा है, वज्र हाथ में लिये हुए मैंने (ही) मनु के लिये सब को प्रसन्न करने वाले (और) सुन्दर चलने वाले जलों को बनाया है ॥ ८ ॥

इन्द्रो देवता, त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११।

अनुत्तमातेमघवन्नकिर्नुनत्वा-

वाँअस्तिदेवताविदानः। नजायमा-

नोनशतेनजातो यानिकरिष्याकृ-

णुहिप्रवृद्ध ॥ ९ ॥

अनुत्तम	अदीनः	(दीनता से रहित

घा	+आ	–
ते॒	ते+आ, त्वदधिकः	तुझ से अधिक
म॒घ॒ऽव॒न्	हे धनवन्!	हे धनवान्
नकि॑ः	न कश्चित्	न कोई
नु	अपि	भी
न	न	नहीं
त्वाऽवा॑न्	त्वत्सदृशः	तेरे तुल्य
अ॒स्ति॒	अस्ति	है
दे॒वता॑	देवः	देव
विदा॑नः	विख्यातः	प्रसिद्ध
न	न	नहीं

जाय॑मानः	उत्पद्यमानः	उत्पन्न होता हुआ
नश॑ते	प्राप्तुंशक्नोति	पहुंच सकता है
न	न	नहीं
जा॒तः	उत्पन्नः	उत्पन्न हुआ २
या॑नि	यानि	जो
क॒रि॒ष्या	कर्तव्यानि	कर्तव्य
कृ॒णु॒हि	कुरु	कर
प्र॒ऽवृ॒द्ध॒	हे प्रवृद्ध !	हे खूब बढ़े हुए

संस्कृतार्थः ।

हे धनवन् ! त्वदधिकः कश्चिदपि अदीनः न (अस्ति) न (च) त्वत्सदृशो विख्यातः (अन्यः) देवोऽस्ति, हे प्रवृद्ध ! न जायमानो न (च) जातः (कश्चित्) (त्वाम्) प्राप्तुं शक्नोति (त्वम्) यानि कर्तव्यानि (सन्ति तानि) कुरु ॥ ९ ॥

भाषार्थः।

हे धनवान्! आप से अधिक कोई भी दीनता से रहित नहीं है, (और) न आप जैसा प्रसिद्ध (दूसरा) देव(है) हे खूब बढ़े हुए! न उत्पन्न होता हुआ (और) न उत्पन्न हुआ २ (कोई आपको) पहुंच सकता है, आप जो करने के योग्य (कर्म हैं उन को) करें ॥९॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११।

एकस्यचिन्मेविभ्वस्त्वोजो यानु
दधृष्वान्कृणवैमनीषा । अहंह्यू१-
ग्रोमरुतोविदानो यानिच्यवमिन्द्र
इदीशएषाम् ॥ १० ॥

एकस्य	एकस्य	अकेले के
चित्	एव	ही

(४५१९) ऋ०मं०१ सू०१६५मं०१०

मे॒	मम	मेरा
वि॒ऽभु	ऐकपत्यम्	ऐकपत्य
अ॒स्तु॒	अस्तु	हो
ओजः॑	बलम्	बल
या	यया (विभक्तेःलुः)	जिस से
नु	खलु	सचमुच
द॒धृ॒ष्वान्	धृष्टः	प्रगल्भ
कृ॒ण॒वै॑	कर्तुम्	करने के लिये
म॒नी॒षा	मनीषया (,,)	बुद्धि से
अ॒हम्	अहम्	मैं
हि	खलु	सच मुच

उ॒ग्रः	भयानकः	भयानक
म॒रु॒त॒ः	हे मरुतः !	हे मरुतो
विदा॑नः	विख्यातः	प्रसिद्ध
यानि॑	यानि	जिन को
च्यव॑म्	प्रवर्तितवानस्मि	मैंने चलाया है
इन्द्र॑ः	इन्द्रः	इन्द्र
इत्	एव	ही
ई॒शे॒	ईश्वरोऽस्मि	स्वामी हूं
ए॒षा॒म्	तेषाम् (तलोपः)	उन का

संस्कृतार्थः।

हे मरुतः ! एकस्यैव मम ऐकपत्यं बलमस्तु, मनीषया धृष्टः (अहम्) यत् (किञ्चित्) कर्तुम् (उत्सहे तत् करोमि) अहं खलु उग्रो विख्यातः(अस्मि)

यानि (कर्माणि) प्रवर्तितवानस्मि तेषाम् (अहम्) इन्द्रः एव ईश्वरोऽस्मि ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

हे मरुतो ! अकेले ही मेरा ऐकपत्य बल हों, बुद्धि से प्रगल्भ (मैं) (जो कुछ) करने का (उत्साह करता हूं वह कर लेता हूं) मैं सचमुच उग्र प्रसिद्ध हूं, जिन (कर्मों) को मैंने चलाया है उनका मैं इन्द्र ही स्वामी हूं ॥ १० ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।१ १।

अम॑न्दन्मामरुत॒ःस्तोमो॒अत्र॒
यन्मे॑नर॒ःश्रुत्यं॒ब्रह्म॑च॒क्र। इन्द्रा॑य॒वृष्णे॒सुम॑खाय॒मह्यं॒ सख्ये॒सखा॑यस्त॒न्वे॑त॒नूभि॑ः ॥ ११ ॥

अम॑न्दत्	मादितवान्	प्रसन्न किया है

ऋ०मं०१सू०१६५मं०११ (४५७२)

मा॒	माम्	मुझ को
म॒रु॒तः॒	हे मरुतः !	हे मरुतो
स्तोमः॑	स्तोत्रम्	स्तोत्र ने
अत्र॑	अत्र	यहां
यत्	यत्	जो
मे॒	मह्यम्	मेरे लिये
न॒रः॒	हे नरः !	हे नरो
श्रु॒त्य॑म्	श्रोतव्यम्	सुनने योग्य को
ब्रह्म॑	स्तवनम्	स्तुति को
च॒क्र	कृतवन्तःस्थ	तुमने किया है
इन्द्रा॑य	इन्द्राय	इन्द्र के लिये

वृष्णे॑	वीराय	वीर के लिये
सुऽम॑खाय॒	सुपूज्याय	अत्यन्त पूज्य के लिये
म॑ह्यम्	मह्यम्	मेरे लिये
सख्ये॑	सख्ये	मित्र के लिये
सखा॑यः	सखायः	मित्र
त॒न्वे॑	शरीराय	शरीर के लिये
त॒नूभिः॑	शरीरैः	शरीरों से

संस्कृतार्थः ।

हे नरः ! मरुतः ! अत्र (युष्माकम्) स्तोत्रं मां मादितवान्, यत् सखायो यूयं सुपूज्याय वीराय (च) मह्यं सख्ये इन्द्राय (निज-शरीरैर्मम शरीरार्थं श्रोतव्यं स्तवनं कृतवन्तः ॥ ११ ॥

भाषार्थः ।

हे नर मरुतो ! यहां (तुम्हारे) स्तोत्र ने मुझे

प्रसन्न किया है, जो तुम मित्रों ने अत्यन्त पूज्य (और) बीर मुझ मित्र इन्द्र के लिये (अपने) शरीरों से मेरे शरीर के लिये सुनने योग्य स्तवन को बनाया है ॥ ११ ॥

मरुतोदेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

ए॒वेदे॒तेप्रति॑मा॒रोच॑माना॒ अने॑-
द्य॒ःश्रव॒एषो॒दधा॑नाः। स॒ञ्चक्ष्याम॑-
रुतश्च॒न्द्रव॑र्णा॒ अच्छा॑न्तमेछ॒दया॑-
थाचनू॒नम् ॥ १२ ॥

ए॒व	एवम्	ऐसे
इत्	एव	ही
ए॒ते	एते	इन्होंने

प्रति	प्रति	की ओर
मा	माम्	मुझ को
रोचमानाः	दीप्यमानाः	चमकते हुए
अनेद्यः	निन्दारहितम्	निन्दा से रहित को
श्रवः	यशः	यश को
आ	च	और
इषः	बलानि	बलों को
दधानाः	धारयन्तः	धारण करते हुए
सम्ऽचक्ष्य	प्रकटीभूय	प्रकट होकर
मरुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो
चन्द्रऽवर्णाः	प्रमुदितस्वरूपाः	आनन्दस्वरूप वाले

अ॒च्छा॑न्त	हर्षितवन्तःस्थ	तुमनें हर्षित किया है
मे॒	माम् (कर्मणिषष्ठी)	मुझ को
छ॒दया॑थ	हर्षयथ	हर्षित करते हो
च॒	अपि	भी
नू॒नम्	इदानीम्	अब

संस्कृतार्थः ।

हे मरुतः! एवमेव एते दीप्यमानाः (यूयम्) निन्दारहितं यशोबलानि च धारयन्तो मां प्रति प्रमुदितस्वरूपाः (सन्तः) प्रकटीभूय मां हर्षितवन्तःस्थ, इदानीमपि हर्षयथ ॥ १२ ॥

भाषार्थः ।

हे मरुतो! ऐसे ही इन चमकते हुए आपने निन्दारहित यश और बलों को धारण करते हुए मेरी ओर आनन्दस्वरूप वाले प्रकट होकर मुझे हर्षित किया है, अब भी हर्षित करते हो ॥ १२ ॥

मरुतो देवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

कोन्वत्र॑मरुतोमामहेव॒ः प्रया॑त-
न॒सखीं॒रच्छा॑सखायः। मन्मा॑निचि-
त्रापिवा॒तय॑न्त ए॒षां॑भूत॒नवे॑दाम-
ऋ॒ता॑नाम् ॥ १३ ॥

कः	कः	किस ने
नु	खलु	सचमुच
अत्र॑	अत्र	यहां
म॒रु॒त॒ः	हे मरुतः !	हे मरुतो
म॒म॒हे॒	सम्मानितवान्	सम्मान किया है
व॒ः	युष्मान्	तुम को

ऋ०मं०१सू०१६५मं०१३ (४५७८)

प्र	प्र+	–
या॒त॒न॒	प्र+यातन, प्रगच्छत	जाओ
सखी॑न्	सखीन्	मित्रों को
अच्छ॑	प्रति	की ओर
स॒खा॒य॒ः	हे सखायः !	हे मित्रो
मन्मा॑नि	स्तोत्राणि	स्तोत्रों को
चि॒त्रा॒ः	हे दीप्तिमन्तः !	हे प्रकाश वालो !
अ॒पि॒ऽवा॒त॑यन्तः	सेवमानाः (आ०को०)	सेवन करते हुए
ए॒षाम्	एषाम्	इन के
भू॒त॒	भवत	तुम हो

नवे॑दाः	ज्ञापकाः	ज्ञान कराने वाले
मे॒	मम	मेरे
ऋ॒ता॑नाम्	नियमानाम्	नियमों के

संस्कृतार्थः ।

हे मरुतः! अत्र कः खलु युष्मान् सम्मानितवान्? हे सखायः! (यूयम्) सखीन् प्रति गच्छत, हे दीप्तिमन्तः! स्तोत्राणि सेवमानाः (यूयम्) एषां मम नियमानां ज्ञापकाः भवत ॥ १३ ॥

भावार्थः।

हे मरुतो! यहाँ सचमुच किसने तुम्हारा सम्मान किया है? हे मित्रो! तुम मित्रों की ओर जाओ, हे प्रकाश वालो! स्तोत्रों को सेवन करते हुए तुम इन मेरे नियमों के ज्ञान कराने वाले बनो ॥ १३ ॥

मरुतोदेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

आय॑द्दुव॒स्याद्दु॒वसे॒नका॒रु॒रस्मा-

ञ्चक्रेमान्यस्यमेधा। ओषुवर्त्तमरुतोविप्रमच्छेमाब्रह्माणिजरितावोअर्चत् ॥ १४ ॥

आ	खलु+	–
यत्	यथा	जैसे
दुवस्यात्	आ+दुवस्यात् परितोषयेत्	पारितोषक देवे
दुवसे	परिचरन्तम् (द्वितीयार्थे षष्ठी)	सेवा करने वाले को
न	इव	मानो
कारुः	कविम् (विभक्तेः सुः)	कवि को
अस्मान्	माम् (वचनव्यत्ययः)	मुझ को

च॒क्रे	कृतवान्	बनाया है
मा॒न्यस्य॑	मानपुत्रस्य	मान के पुत्र की
मे॒धा	मेधया (विभक्तेर्लुक्)	बुद्धि से
ओ०	आ+	–
सु	सुष्ठु	भली प्रकार
व॒र्त॒	आ+वर्त,आवर्तध्वम् (व्यत्ययेनपरस्मैपदम्)	लौटो
म॒रु॒तः॒	हे मरुतः !	हे मरुतो
विप्र॑म्	विप्रम्	विप्र को
अच्छ॑	प्रति	की ओर
इ॒मा	इमानि	इन को
ब्रह्मा॑णि	स्तुतिवाक्यानि	स्तुतिके वचनोंको

जरिता	स्तोता	स्तोता
वः	युष्मभ्यम्	तुम्हारे लिये
अर्चत्	अर्पयति	भेट करता है

संस्कृतार्थः ।

यथा (कश्चित्) परिचरन्तं परितोषयेत् तथा (इन्द्रः) मानपुत्रस्य (मम) मेधया मां कविं कृतवान्, हे मरुतः! (यूयम्) विप्रं प्रति सुष्ठु आवर्तध्वम्, स्तोता युष्मभ्यम् इमानि स्तुति वाक्यानि अर्पयति ॥ १४ ॥

भाषार्थः ।

जैसे (कोई) सेवा करने को लिये पारितोषक देवे, वैसे (इन्द्र ने मुझ) मान के पुत्र की बुद्धि से (मुझको कवि बनाया है, हे मरुतो! आप विप्र की ओर भली प्रकार लौटो, स्तोता आप के ताईं यह स्तुति [illegible] वाक्य भेट करता है ॥ १४ ॥

अगस्त्य ऋषि का दूसरा नाम मान्दार्य और मान का पुत्र होने से मान्य भी है।

मरुतोदेवताः, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

एषवःस्तोमोमरुतइयंगीर्मान्दार्यस्यमान्यस्यकारोः । एषायासीष्टतन्वेवयां विद्यामेषंवृजनंजीरदानुम् ॥ १५ ॥

एषः	एषः	यह
वः	युष्मभ्यम्	तुम्हारे लिये
स्तोमः	स्तोमः	स्तोत्र
मरुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो
इयम्	इयम्	यह
गीः	वाणी	वाणी

मान्दार्यस्य	मान्दार्यस्य	मान्दार्य का
मान्यस्य	मानपुत्रस्य	मान के पुत्र का
कारोः	कवेः	कवि का
आ	आ+	–
इषा	अन्नेन	अन्न से
यासीष्ट	आ+यासीष्ट, आगच्छत	आओ
तन्वे	शरीराय	शरीर के लिये
वयाम्	बलम्	बल को
विद्याम	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इषम्	अन्नम्	अन्न को
वृजनम्	बलम्	बल को

जी॒रऽदा॑नुम्	क्षिप्रदानशीलताम्	शीघ्र दान करने के स्वभाव को

संस्कृतार्थः ।

हे मरुतः ! मानपुत्रस्य मान्दार्यस्य कवेः इदं स्तोत्रमियं वाणी (च) युष्मभ्यम् (भवेताम्) (यूयम्) शरीराय बलम् (दातुम्) अन्नेन सह आगच्छत, (वयम्) अन्नं बलं क्षिप्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ १५ ॥

भाषार्थः ।

हे मरुतो ! मान के पुत्र मान्दार्य का यह स्तोत्र (और) यह वाणी आपके लिये (हों) आप शरीर के लिये बल (देने को) अन्न के साथ आवें, हम अन्न बल (और) शीघ्र दान करने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ १५ ॥

इति पञ्चषष्ट्यधिकशततमं सूक्तम् ।

ऋ०मं०१सू०१६६

मरुतोदेवता, अगस्त्यऋषिः ।

विनियोगोलैङ्गिकः ।

सूक्त का भावार्थ ।

हे बलवान नाद वाले मरुतो ! वीर इन्द्र को ध्वजारूप जो आपका वेगवान गण है, हम उसके प्राचीन महत्त्व का वर्णन करते हैं, हे सामर्थ्य वालो ! आप ज्वाला की न्याईं मार्ग को जलाते हुए योद्धाओं की न्याईं बल के कर्म को करो ॥ १ ॥ युद्धों में शत्रुओं के रगड़ने वाले मरुत सदा बालक की न्याईं मिठास को धारण करते हुए खेलों को खेलते हैं, ये रुद्र के पुत्र नमस्कार करने वाले की रक्षा के साथ प्राप्त होते हैं, ये स्वतःबलवान हवि देने वाले को दुःख नहीं देते हैं ॥ २ ॥ जिस हवि देने वाले भक्त के लिये मरण-रहित रक्षकों ने धन की बहुतायत को दिया है उसके लिये मित्रों की न्याईं सुख को करने वाले मरुत देशों को खूब जल से सींचते हैं ॥ ३ ॥ हे मरुतो ! जिन आपने बलों द्वारा देशों को घेर लिया है उन आपके स्वयं रुकने वाले वाहन आगे उड़ते हैं, उस समय सारे भुवन और घर कांपते हैं, सचमुच बर्छियों को उठा कर चलने पर आपकी गति विचित्र दीखती है ॥ ४ ॥ हे मरुतो ! जब तेज से युक्त गति वाले और मनुष्यों के हितकारी आप पर्वतों को गुंजाते हैं और द्यौ की पीठ को कंपाते हैं तब वनस्पति डरती हैं और ओषधि रथारूढ की न्याईं दौड़ती हैं ॥ ५ ॥ हे भयानक मरुतो ! किसी से न दुखाए जाने वाले गण से युक्त आप हमारे लिये कल्याण की इच्छा से दयाबुद्धि को बढ़ावें, जहां कुतरने वाले दांतों वाली आपकी तलवार काटती है, वहां ठीक बढ़ाई हुई बर्छी

की न्याईं पशुओं का घात करती है ॥ ६ ॥ स्थिर दानी, न छीजने वाले धन से युक्त, द्रोह से रहित और यज्ञों में खूब स्तुति किये हुए मरुत मदकारक सोम के पीने के लिये स्तोत्रों को गाते हैं, ये वीर इन्द्र के मुख्य बलकर्मों को जानते हैं ॥ ७ ॥ हे महान उग्र और बल वाले मरुतो ! आप सौ पालों वाले गढों द्वारा घात से और पाप से उस मनुष्य की रक्षा करें, जिस पर आपने अनुग्रह किया है और जिस को आप सन्तानके पालन द्वारा नाश से बचाते हैं ॥ ८ ॥ हे मरुतो ! आपके रथों में संपूर्ण कल्याण हैं, उन में एक दूसरे से बढ कर बल भरे हुए हैं, यात्रा में आपके कंधों में कंगन पड़े रहते हैं, आपका धुरा उचित काल में पहियों को घुमाता है॥९॥ इनकी मनुष्य हितकारी भुजाओं में बहुत कल्याण हैं, छातियों पर सोने के हार, कंधों में भयंकर अभ्यंग और चक्रधाराओं में छुरियाँ हैं, इन्होंने ऐश्वर्य को इस तरह धारण किया हुआ है जैसे परों को पक्षी॥१०॥ जो मरुत महत्त्व के कारण महान, बलवान, ऐश्वर्यवान और द्यौ में होने वाले नक्षत्रों की समान दूरसे दीखने वाले, गम्भीर ध्वनि वाले, सुन्दर जिह्वा वाले, मुख से गाने वाले, चारों ओर गर्जने वाले और इन्द्र से मेल रखने वाले हैं ॥११॥ हे ऊंचे जन्म वाले मरुतो ! यह आपका महत्त्व है, आपका दान अदिति के नियमकी न्याईं लंबा है, जिस पुण्यकर्मा मनुष्य को आपने दान दिया है उसको इन्द्र भी त्यागने से नहीं ठगता । १२ । हे मरणरहित मरुतो ! यह आप का बन्धुभाव है जो पुराने युग में आपने अनेक वार स्तोत्र की रक्षा की है, वीर मरुतों ने इस स्तुति से मनुष्यजाति के लिये सुनाई की कृपा करके साथ ही कर्म के ज्ञान को कराया है ॥ १३ ॥ हे वेगवान मरुतो ! मैं इन यज्ञों द्वारा इस अभिलाषा की पूर्ति को मांगता हूं कि हम आर्य आप के दान से बहुतायत को प्राप्त करके चिरकाल तक बढें और हमारे पुरुष खेती की भूमियों में सब ओर फैलें ॥ १४ ॥ हे मरुतो ! मान के पुत्र मुझ मान्दार्य कवि का यह स्तोत्र और

ऋ०मं०१ सू०१६६मं०१ (४५८८)

यह वाणी आपके लिये हों,आप हमारे शरीरों को बल देने के लिये अन्नों के साथ आवें और हम अन्न को बल को और शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ १५ ॥

मरुतोदेवताः, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२

तन्नुवोचामरभसायजन्मने
पूर्वंमहित्वंवृषभस्यकेतवे। ऐधेवयामन्
मरुतस्तुविष्वणो युधेवशक्रास्
तविषाणिकर्तन ॥ १ ॥

तत्	तत्	उस को
नु	इदानीम्	अब
वोचाम	ब्रूमः	हम कहते हैं
रभसाय	वेगवते	वेगवाले के लिये

जन्म॑ने	गणाय	गण के लिये
पू॒र्व्य॑म्	पुरातनम्	प्राचीन को
म॒हि॒ऽत्वम्	महत्त्वम्	महत्त्व को
वृ॒ष॒भस्य॑	वीरस्य	वीर के
के॒तवे॑	ध्वजरूपाय	ध्वजा रूपके लिये
ए॒धाऽइ॑व	ज्वालाइव	ज्वालाओं की न्याईं
याम॑न्	मार्गे	मार्ग में
म॒रु॒तः॒	हे मरुतः !	हे मरुतो
तु॒वि॒ऽस्व॒नः॒	हे बलोपेत ध्वनियुक्ताः !	हे बलयुक्त गर्ज वालो !
यु॒धाऽइ॑व	योद्धार इव	योद्धाओं की न्याईं
श॒क्राः॒	हे सामर्थ्योपेताः !	हे सामर्थ्य वालो

तविषाणि	बलकर्माणि	बल के कर्मों को
कर्तन	कुरुत	करो

संस्कृतार्थः ।

हे बलोपेतध्वनियुक्ताः! मरुतः! वीरस्य (इन्द्रस्य) ध्वजरूपाय वेगवते (च युष्मद्-) गणाय इदानीं तत् पुरातनं महत्त्वं ब्रूमः, हे सामर्थ्योपेताः ! (यूयम्) मार्गे ज्वालाइव (गच्छन्तः) योद्धारइव बलकर्माणि कुरुत ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

हे बलयुक्त गर्ज वाले मरुतो ! वीर (इन्द्र) के ध्वज रूप (और) वेगवान (आप के) गण के लिये अब हम उस प्राचीन महत्त्व का वर्णन करते हैं, हे सामर्थ्य वालो ! आप मार्ग में ज्वालाओं की न्याईं (चलते हुए) योद्धाओं की न्याईं बल के कर्म को करो ॥ १ ॥

मरुतोदेवताः, जगती छन्दः ।१२।१२।१२।१२

नित्यंनसूनुंमधुबिभ्रतउपक्री-

डन्तिक्रीडाविदथेषुघृष्वयः। नक्ष-
न्तिरुद्राअवसानमस्विनं नमर्धन्ति
स्वतवसोहविष्कृतम् ॥ २ ॥

नित्यम्	सर्व्वदा	सदा
न	इव	की न्याईं
सूनुम्	शिशुम्	बालक को
मधु	माधुर्य्यम्	मिठास को
बिभ्रतः	उप+बिभ्रतः, धारयन्तः	धारण करते हुए
उप	उप+	–
क्रीडन्ति	क्रीडन्ति	खेलते हैं

क्री॒ळाः	क्रीडाः	खेलों को
वि॒दथे॑षु	युद्धेषु	युद्धों में
घृष्व॑यः	(शत्रूणाम्) घर्षकाः	(शत्रुओं के) रगड़ने वाले
नक्ष॑न्ति	प्राप्नुवन्ति (निघं० २।१४)	प्राप्त होते हैं
रु॒द्राः	रुद्रपुत्राः	रुद्र के पुत्र
अव॑सा	रक्षया	रक्षा के साथ
न॒म॒स्विन॑म्	नमस्कुर्वन्तम्	नमस्कार करते हुए को
न	न	नहीं
म॒र्ध॒न्ति	क्लेशयन्ति	कष्ट देते हैं
स्वऽत॑वसः	स्वतोबलवन्तः	अपने आप बलवान्
ह॒वि॒ःऽकृत॑म्	हविषःसम्पादकम्	हवि के तैयार करने वाले को

संस्कृतार्थः ।

युद्धेषु (शत्रूणाम्) घर्षकाः (मरुतः) सर्वदा शिशुमिव माधुर्य्यं धारयन्तः (सन्तः) क्रीडाः क्रीडन्ति, (एते) रुद्रपुत्राः नमस्कुर्वन्तं रक्षया प्राप्नुवन्ति, स्वतोबलवन्तः (चैते) हविषःसम्पादकं न क्लेशयन्ति ॥ २ ॥

भाषार्थ ।

युद्धोंमें (शत्रुओंके) रगड़ने वाले (मरुत)सदा बालक की न्याईं मिठास को धारण करते हुए खेलों को खेलते हैं (ये) रुद्र के पुत्र नमस्कार करने वाले को रक्षा के साथ प्राप्त होते हैं (और) स्वयं बलवान (ये) हवि के तैय्यार करने वाले को क्लेश नहीं देते ॥ २ ॥

मरुतोदेवताः, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२।

यस्माऊमासोअमृताअरासत
रायस्पोषंचहविषाददाशुषे । उक्षन्त्यस्मैमरुतोहिताइव पुरुरजांसिपयसामयोभुवः ॥ ३ ॥

यस्मै॑	यस्मै	जिस के लिये
ऊमा॑सः	रक्षितारः	रक्षा करने वाले
अ॒मृता॑ः	मरणरहिताः	मरण से रहित
अरा॑सत	दत्तवन्तः (रासतिर्दानार्थः, निघं० ३।२०)	दिया है
रा॒यः	धनस्य	धन की
पोष॑म्	प्राचुर्य्यम्	बहुतायत को
च॒	(पूरणः)	–
ह॒विषा॑	हविषा	हवि द्वारा
द॒दा॒शुषे॑	दानिने	देने वाले के लिये
उ॒क्षन्ति॑	सिञ्चन्ति	सींचते हैं

अस्मै	तस्मै (तलोपः)	उसके लिये
मरुतः	मरुतः	मरुत
हिताःऽइव	मित्राणीव	मित्रों की न्याईं
पुरु	प्रभूतम्	बहुत
रजांसि	देशान्	देशों को
पयसा	जलेन	जल से
मयःऽभुवः	सुखस्य भावयितारः	सुख के देने वाले

संस्कृतार्थः।

मरणरहिता रक्षितारो मरुतो यस्मै हविषा दानिने धनस्य प्राचुर्यं दत्तवन्तः, तस्मै मित्राणीव सुखस्य भावयितारः (सन्तः) देशान् जलेन प्रभूतं सिञ्चन्ति ॥ ३ ॥

भाषार्थ ।

मरण से रहित रक्षा करने वाले मरुतों ने जिस

हवि द्वारा देने वाले के लिये धनों की बहुतायत कों दिया है उसके लिये मित्रों की न्याईं सुखकारक (होकर) देशों को खूब जल से सींचते हैं ॥ ३ ॥

मरुतो देवताः, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२।

आयेरजां॑सि॒तवि॑षीभि॒रव्य॑त॒
प्र॒वएवा॑स॒ःस्वय॑तासोअध्रजन्। भय॑-
न्ते॒विश्वा॒भुव॑नानिह॒र्म्या चि॒त्रोवो॒-
याम॒ःप्रय॑तास्वृ॒ष्टि॑षु ॥ ४ ॥

आ	खलु	सचमुच
ये	ये	जिन्होंने
रजां॑सि	देशान्	देशों को
तवि॑षीभिः	बलैः	बलों से

आव्य॑त	आ+अव्यत, व्याप्तवन्तः	घेर लिया है
प्र	पुरतः	आगे
व॒ः	युष्माकम्	तुम्हारे
एवा॑सः	वाहनानि	वाहन
स्वऽयतासः	स्वतोयतानि	अपने आप रुकने वाले
अ॒ध्र॒ज॒न्	उड्डयन्ते (लडर्थेलङ्)	उड़ते हैं
भय॑न्ते	बिभ्यति	डरते हैं
विश्वा॑	विश्वानि	सब
भु॑वनानि	भुवनानि	भुवन
ह॒र्म्या	हर्म्याणि	घर
चि॒त्रः	विचित्रा	विचित्र
व॒ः	युष्माकम्	तुम्हारी

यासः	गतिः	गति
प्रऽयतासु	प्रोद्यतासु	उठाने पर
ऋष्टिषु	शक्तिषु	बर्छियों में

संस्कृतार्थः ।

(हे मरुतः !) ये (यूयम्) बलैर्देशान् व्याप्तवन्तः (तेषाम्) युष्माकं स्वतोयतानि वाहनानि पुरतः उद्धयन्ते, (युष्मत्तः) सर्वाणि भुवनानि गेहानि (च) बिभ्यति, प्रोद्यतासु शक्तिषु युष्माकं गतिर्विचित्रा खलु (भवति) ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे मरुतो ! जिन (आप) ने बलों से देशों को घेर लिया है (उन) आप के स्वयं रुकने वाले वाहन आगे उड़ते हैं (आप से) सारे भुवन (और) घर कांपते हैं, सचमुच बर्छियों को उठा कर चलने पर आपकी गति विचित्र (होती है) ॥ ४ ॥

मरुतोदेवताः, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२।

यत्त्वेषयामानदयन्तपर्वतान्

दि॒वोवा॑पृ॒ष्ठंनर्या॒अ॑चच्यवुः । विश्वो॑वो॒अज्म॑न्भयते॒वन॒स्पती॑रथी॒यन्ती॑व॒प्रजि॑हीत॒ओष॑धिः ॥ ५ ॥

यत्	यत्	जो
त्वे॒ष॑ऽयामाः	तेजोयुक्तगमनाः	तेज युक्त गति वाले
न॒द॑यन्त	नादितवन्तः	गुंजाया है
पर्व॑तान्	पर्वतान्	पर्वतों को
दि॒वः	दिवः	द्यौ की
वा॒	च	और
पृ॒ष्ठम्	पृष्ठम्	पीठ को
नर्या॑ः	नरेभ्योहिताः	मनुष्यों के लिये हितकारी

ऋ०मं०१ सू०१६६ मं०५ (४६००)

अचु॑च्यवुः	कम्पितवन्तः	हिलाया है
विश्व॑ः	सर्वः	सम्पूर्ण
व॒ः	युष्माकम्	तुम्हारी
अज्म॑न्	यात्रायाम् (सत्याम्)	यात्रा होने पर
भ॒य॒ते॒	बिभेति	डरता है
वन॒स्पति॑ः	वृक्षसमूहः (जातावेकवचनम्)	वृक्षों का समूह
रथि॒य- ऽन्ती॑इव	रथारूढेव	रथ पर चढ़ी हुई की न्याईं
प्र	प्र+	–
जि॒ही॒ते॒	प्र+जिहीते, प्रगच्छति	दौड़ती है
ओष॑धिः	ओषधिः	ओषधि

संस्कृतार्थः।

(हे मरुतः !) यत् तेजोयुक्तगमनाः नरेभ्यो-

हिताः (च यूयम्) पर्वतान् नादितवन्तः दिवः पृष्ठं च कम्पितवन्तः (तेन) वनस्पतिर्बिभेति, ओषधिः (च रथारूढा इव प्रगच्छति ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

(हे मरुतो !) जो तेज युक्त गति वाले और नरों के हितकारी (आपने) पर्वतों को गुंजाया है और द्यौ की पीठ को कंपाया है (इससे) वृक्ष डरते हैं (और) ओषधि रथ पर चढ़ी हुई की न्याई दौड़ती है ॥ ५ ॥

मरुतोदेवताः, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२।

यूयंनउग्रामरुतःसुचेतुनाऽरिष्टग्रामाःसुमतिंपिपर्तन। यत्रावोदिद्युद्रदतिक्रिविर्दती रिणातिपश्वःसुधितेवबर्हणा ॥६॥

ऋ०मं०१ सू०१६६ मं०६ (४६०२)

यूयम्	यूयम्	तुम
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
उग्राः	हे भयानकाः !	हे भयानको
मरुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो
सुऽचेतुना	कल्याणेच्छया	कल्याण की इच्छा से
अरिष्टऽग्रामाः	अहिंसितगणाः	न दुखाए जाने वाले गण से युक्त
सुऽमतिम्	दयाबुद्धिम्	दयाबुद्धि को
पिपर्तन	वर्धयत	बढाओ
यत्र	यत्र	जहां
वः	युष्माकम्	तुम्हारी
दिद्युत्	हेतिः	तलवार

रद॑ति	दंशयति	काटती है
क्रिवि॑ःऽदती	विकर्तनदन्तवती	कुतरने वाले दांतों वाली
रि॒णाति॑	नाशयति	मारती है
प॒श्वः	पशून्	पशुओं को
सुधि॒ता॑ऽइव	सुष्ठु प्रेरितेव	ठीक चलाई हुई की न्याईं
ब॒र्हणा॑	हननशीला (शक्तिः)	मारने वाली (बर्छी)

संस्कृतार्थः ।

हे भयानकाः ! मरुतः ! अहिंसितगणाः यूयमस्मभ्यं कल्याणेच्छया दयाबुद्धिं वर्धयत, यत्र युष्माकं विकर्तनदन्तवती हेतिर्दंशयति (तत्र) सुष्ठु प्रेरिता शक्तिरिव पशून् नाशयति ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

हे भयानक मरुतो ! न दुखाए जाने वाले गण से युक्त आप हमारे लिये कल्याण की इच्छा से दयाबुद्धि को बढ़ावें, जहां कुतरने वाले दांत वाली आपकी तलवार काटती है (वहां) ठीक

चलाई हुई बर्छी की न्याईं पशुओं का नाश करती है ॥ ६ ॥

कुतरने वाले दांतों वाली तलवार मेंह के सांटे वाली तेज वायु होसकती है, जिससे ओट में न रहने वाले पशु मर जाते हैं ॥

मरुतोदेवताः, जगतीछन्दः।१२।१२।१२।१२।

प्रस्क॒म्भदे॑ष्णाअनव॒भ्ररा॑धसो-
ऽलातृ॒णासो॑वि॒दथे॑षु॒सुष्टु॑ताः। अर्चँ॑-
न्त्य॒र्कंमदि॒रस्य॑पी॒तये॑ वि॒दुर्वी॒रस्य॑
प्रथ॒मानि॒पौंस्या॑ ॥ ७ ॥

प्र	प्रकर्षेण	खूब
स्क॒म्भऽ- दे॑ष्णाः	स्तम्भितदानाः	स्थिर दान वाले

(४६०५) ऋ०मं०१ सू०१६६ मं०७

अनवभ्र-ऽराधसः	अभ्रष्टधनाः	न छीजने वाले धन से युक्त
अलातृणासः	द्रोहरहिताः	द्रोह से रहित
विदथेषु	यज्ञेषु	यज्ञों में
सुऽस्तुताः	सुष्ठुस्तुताः	खूब स्तुति किये हुए
अर्चन्ति	गायन्ति	गाते हैं
अर्कम्	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
मदिरस्य	मदकारकस्य (सोमस्य)	सोम के
पीतये	पानार्थम्	पीने के लिये
विदुः	जानन्ति	जानते हैं
वीरस्य	वीरस्य	वीर के

प्रथमानि	मुख्यानि	मुख्यों को
पौंस्या	बलकर्माणि	बल के कर्मों को

संस्कृतार्थः ।

प्रकर्षेण स्तम्भितदानाः, अभ्रष्टधनाः, द्रोहरहिताः,यज्ञेषु सुष्ठुस्तुताः च (मरुतः)सोमस्य पानाय स्तोत्रं गायन्ति (एते) वीरस्य (इन्द्रस्य) मुख्यानि बलकर्माणि जानन्ति ॥ ७ ॥

भावार्थः ।

खूब स्थिर दान वाले, न छीजने वाले धन से युक्त, द्रोह से रहित (और) यज्ञों में खूब स्तुति किये हुए (मरुत) सोम पीने के लिये स्तोत्रों को गाते हैं (ये) वार (इन्द्र) के मुख्य बल के कर्मों को जानते हैं ॥ ७ ॥

मरुतों के आएं आएं शब्द, ऋषि को स्तोत्र प्रतीत होते हैं ॥

मरुतोदेवताः, जगतीछन्दः।१२।१२।१२।१२।

शतभुजिभिस्तमभिह्रुतेरघात्

पूर्भिरक्षतामरुतोयमावत। जनंयमु-

(५६०७) ऋ०मं०१ सू०१६६ मं०८

ग्रास्तवसोविरप्शिनः पाथनाशंसा-
त्तनयस्यपुष्टिषु ॥ ८ ॥

शतऽभुजिऽभिः	शतपार्श्वयुक्तैः	सौ पासों वालों से
तम्	तम्	उस को
अभिऽह्रुतेः	विघातात्	घात से
अघात्	पापात्	पाप से
पूःऽभिः	पूर्भिः	गढ़ों से
रक्षत	रक्षत	रक्षा करो
मरुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो
यम्	यम्	जिस को

आव॑त	यूयमनुगृहीत-वन्तः	तुमने अनुग्रह किया है
जन॑म्	मनुष्यम्	मनुष्य को
यम्	यम्	जिस को
उ॒ग्रा॒ः	हे भयानकाः !	हे भयानको
त॒व॒स॒ः	हे बलवन्तः !	हे बलवाले
वि॒ऽर॒प्शि॒न॒ः	हे महान्तः ! (निघं० ३।३)	हे महानो
पा॒थन॑	रक्षथ	रक्षा करते हो
शंसा॑त्	वधात्	नाश से
तन॑यस्य	सन्ततेः	सन्तान के
पु॒ष्टिषु॑	पालनैः (तृतीयार्थे सप्तमी)	पालन द्वारा

संस्कृतार्थः ।

हे महान्तः ! भयानकाः ! बलवन्तः ! मरुतः !

(यूयम्) शतपार्श्वयुक्तैः पूर्भिस्तं मनुष्यं विघातात् पापात् (च) रक्षत, यम् अनुगृहीतवन्तःस्थ, यम् (च) सन्ततेः पालनैः वधाद् रक्षथ ॥ ८ ॥

भावार्थ ।

हे महान ! भयानक ! बल वाले ! मरुतो ! सौ पासों वाले गढ़ों से उस मनुष्य को घात से और पाप से रक्षा करो जिस पर आपने अनुग्रह किया है (और) जिस को आप सन्तान के पालन द्वारा नाश से बचाते हो ॥ ८ ॥

मरुतोदेवताः, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२

विश्वा॑निभ॒द्राम॑रुतो॒रथे॑षुवोमि-
थ॒स्पृध्ये॑वतवि॒षाण्याहि॑ता । अंसे॒-
ष्वाव॒ःप्रप॑थेषुखा॒दयोऽक्षो॑वश्च॒क्रास॒-
मया॒विवा॑वृते ॥ ९ ॥

ऋ०मं०१ सू०१६६ मं०९ (४११०)

विश्वा॑नि	सर्वाणि	सम्पूर्ण
भ॒द्रा	कल्याणानि	कल्याण
म॒रु॒त॒ः	हे मरुतः !	हे मरुतो
रथे॑षु	रथेषु	रथों में
व॒ः	युष्माकम्	तुम्हारे
मि॒थ॒स्पृ॒ध्या॑ऽइव	परस्परं स्पर्धमानानीव	एक दूसरे के साथ मानो स्पर्धा करते हुए
त॒वि॒षाणि॑	बलानि	बल
आऽहि॑ता	स्थापितानि	रक्खे हुए
अंसे॑षु	स्कन्धेषु	कन्धों में
आ	च	और
व॒ः	युष्माकम्	तुम्हारे

प्रऽपथेषु	यात्रासु	यात्राओं में
खादयः	कङ्कणानि (आ०को०)	कंगन
अक्षः	अक्षः	धुरा
वः	युष्माकम्	तुम्हारा
चक्रा	चक्रद्वयम्	दोनों पहियों को
समया	उचितकाले (आ०को०)	उचित काल में
वि	वि+	–
ववृते	वि+ववृते,आवर्तयति	घुमाता है

संस्कृतार्थः ।

हे मरुतः ! युष्माकं रथेषु सर्वाणि कल्याणानि बलानि(च)परस्परं स्पर्धमानानाव स्थापितानि (सन्ति) यात्रासु युष्माकं स्कन्धेषु कङ्कणानि(विद्यन्ते) युष्माकमक्षः उचितकाले चक्र द्वयम् आवर्तयति ॥ ९ ॥

भाषार्थ ।

हे मरुतो! आप के रथों में सम्पूर्ण कल्याण(और) बल एक दूसरे के साथ मानो स्पर्धा करते हुए स्थापित (हैं) यात्राओं में आपके कंधों में कंगन (पड़े रहते हैं) आपका धुरा उचित काल में दोनों पहियों को घुमाता है ॥ ९ ॥

मरुतोदेवताः, निचृज्जगतीछन्दः ।११।१२।१२।१२

भूरीणिभद्रानर्येषुबाहुषु वक्षःसु
रुक्मारभसासोअञ्जयः। अंसेष्वे-
ताःपविषुक्षुराअधि वयोनपक्षान्व्य-
नुश्रियोधिरे ॥ १० ॥

भूरीणि	बहूनि	बहुत
भद्रा	कल्याणानि	कल्याण

(४६१२) ऋ०मं०१सू०१६६मं०१०

नर्ये॑षु	नृभ्योहितेषु	मनुष्यों के लिये हितकारियों में
बा॒हुषु॑	भुजेषु	भुजाओं में
वक्षः॑ऽसु	वक्षःसु	छातियों में
रु॒क्माः	स्वर्णहाराः	सोने के हार
र॒भ॒सासः॑	भयङ्कराः	भयानक
अ॒ञ्जयः॑	अभ्यञ्जनानि	अभ्यंग
अंसे॑षु	स्कन्धेषु	कंधों पर
एताः॑	एताः	ये
प॒विषु॑	चक्रनेमिषु+अधि	चक्रधाराओं में
क्षु॒राः	छुरिकाः	छुरियां
अधि॑	+अधि	–

वय॑ः	पक्षिणः	पक्षी
न	इव	जैसे
प॒क्षान्	पक्षान्	परों को
वि	वि+	–
अनु॑	अनु+	–
श्रिय॑ः	प्रतापान्	प्रतापों को
धि॒रे॒	वि+अनु+धिरे, धारितवन्तः	धारण किया है

संस्कृतार्थः ।

(मरुताम्) नृभ्योहितेषु भुजेषु बहूनिकल्याणानि, वक्षःसु स्वर्णहाराः, स्कन्धेषु भयङ्कराणि अभ्यञ्जनानि, चक्रनेमिषु एताःछुरिकाः (च) विद्यन्ते (एते) पक्षिणः पक्षानिव प्रतापान् धारितवन्तः ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

(मरुतों की) मनुष्यहितकारी भुजाओं में बहुत कल्याण, छातियों में सोने के हार, कन्धों में भयंकर

अभ्यंग और चक्र धाराओं में ये छुरियां हैं, (इन्होंने) प्रतापों को इस तरह धारण किया हुआ है जैसे परों को पक्षी ॥ १० ॥

मरुतोदेवताः, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२।

म॒हान्तो॑म॒ह्नावि॒भ्वो॒३॒॑वि॒भूत॑यो
दू॒रे॒दृशो॒येदि॒व्याइ॑व॒स्तृभिः॑। म॒न्द्राः
सु॑जि॒ह्वाःस्वरि॑तारआ॒सभिः॒ संमि॑-
श्ला॒इन्द्रे॑म॒रुतः॑परि॒ष्टुभः॑॥ ११॥

म॒हान्तः॑	महान्तः	महान्
म॒ह्ना	महत्त्वेन	महत्त्व से
वि॒ऽभ्वः॑	बलवन्तः (मा०को०)	बलवान
वि॒ऽभूत॑यः	ऐश्वर्यवन्तः	ऐश्वर्य वाले

ऋ०मं०१सू०१६६मं०११ (४१११)

दू॒रे॒ऽदृशः॑	दूरेदृश्यमानाः	दूर से दीखने वाले
ये	ये	जो
दि॒व्याःऽइ॑व	दिविभवानीव	द्यौ में होने वाले जैसे
स्तृभि॑ः	नक्षत्राणि (विभक्ति व्यत्ययः)	नक्षत्र
म॒न्द्राः	गम्भीरशब्दाः	गहरी ध्वनि वाले
सु॒ऽजि॒ह्वाः	शोभनजिह्वाः	सुन्दर जीभ वाले
स्वरि॑तारः	गायकाः	गाने वाले
आ॒सऽभि॑ः	आस्यैः	मुखों से
स॒म्ऽमि॑श्लाः	संमिश्रिताः	खूब मिले हुए
इन्द्रे॑	इन्द्रे	इन्द्र में
	मरुतः	मरुत

परिऽस्तुभः	परितोगर्जन्तः	चारोंओर से गर्जते हुए

संस्कृतार्थः।

ये मरुतो महत्त्वेन महान्तो बलवन्तः ऐश्वर्यवन्तो दिविभवानि नक्षत्राणि इव दूरे दृश्यमानाः गम्भीरशब्दाः शोभनजिह्वाः आस्यैर्गानं कुर्वाणाः(च सन्ति ते) परितोगर्जन्तः (सन्तः) इन्द्रे संमिश्रिताः भवन्ति ॥ ११ ॥

भाषार्थः ।

जो मरुत महत्त्व के कारण महान, बलवान, ऐश्वर्यवान, द्यौ में होने वाले नक्षत्रों की न्याईं दूर से दीखने वाले, गहरी ध्वनि वाले, सुन्दर जीभ वाले (और) मुखों से गान करने वाले (हैं वे)चारों ओर गर्जते हुए इन्द्र के साथ मेल रखते हैं ॥ ११ ॥

मरुतोदेवताः, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२।

तद्वःसुजातामरुतोमहित्वनं

दीर्घंवोदात्रमदितेरिवव्रतम् । इन्द्र-

श्च॒नत्यज॑सा॒विह्रु॒॑णाति॒तज्जना॑य॒-
यस्मै॑सु॒कृते॒ऽअरा॑ध्वम्॥ १२ ॥

तत्	एतत्	यह
व॒ः	युष्माकम्	तुम्हारा
सु॒ऽजा॒ता॒ः	हे उच्चजन्मानः!	हे ऊंचे जन्म वालो
म॒रु॒त॒ः	हे मरुतः!	हे मरुतो
म॒हि॒ऽत्व॒नम्	महत्त्वम्	महत्त्व
दी॒र्घम्	दीर्घम्	लंबा
व॒ः	युष्माकम्	तुम्हारा
दा॒त्रम्	दानम्	दान
अदि॑तेःऽइव	अदितेरिव	अदिति का जैसे

व्र॒तम्	व्रतम्	नियम
इन्द्र॑ः	इन्द्रः	इन्द्र
च॒न	नापि	नहीं
त्यजसा	त्यागेन	त्याग से
वि	वि+	–
ह्रु॒णा॒ति॒	वि+ह्रुणाति, वञ्चति	ठगता है
तत्	तम् (विभक्तेर्लुक्)	उस
जना॑य	मनुष्याय	मनुष्य के लिये
यस्मै॑	यस्मै	जिस के लिये
सु॒ऽकृते॑	सुकर्म्मणे	शुभ कर्म करने वाले के लिये
अरा॑ध्वम्	दत्तवन्तःस्थ	तुमने दिया है

।संस्कृतार्थः।

हे उच्चजन्मानः! मरुतः! एतद्युष्माकं

महत्त्वम् (अस्ति) युष्माकं दानमदितेर्व्रतमिव दीर्घम् (अस्ति) (तम्) इन्द्रोऽपि त्यागेन न वञ्चति यस्मै सुकर्मणे मनुष्याय (यूयम्) दत्तवन्तःस्थ ॥ १२ ॥

भाषार्थ ।

हे ऊंचे जन्म वाले ! मरुतो! यह आपका महत्त्व (है) आपका दान अदिति के नियम की न्याईं लंबा (है, उस को) इन्द्र भी त्याग द्वारा नहीं ठगते जिस सुकर्मा मनुष्य के लिये आपने दान दिया है ॥१२॥

मरुतोदेवताः, जगतीछन्दः।१२।१२।१२।१२।

तद्वोजामित्वंमरुतः परेयुगे
पुरूयच्छंसममृतासआवत। अयाधि-
यामनवेश्रुष्टिमाव्या साकंनरोदंस-
नैराचिकित्रिरे ॥ १३ ॥

तत्	तत्	सो

वः	युष्माकम्	तुम्हारा
जामिऽत्वम्	बन्धुत्वम्	बन्धुभाव
मरुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो
परे	पुरातने	पुराने में
युगे	युगे	युग में
पुरु	बहुवारम्	बहुत वार
यत्	यत्	जो
शंसम्	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
अमृतासः	हे मरणरहिताः !	हे न मरने वालो
आवत	रक्षितवन्तःस्थ	तुमने रक्षा की है
अया	अनया	इस से
धिया	स्तुत्या	स्तुति से

मन॑वे	मनुष्यजातये	मनुष्यजाति के लिये
श्रु॒ष्टिम्	श्रवणम्	सुनाइ को
आ॒व्य॑	प्रसाद्य	कृपा करके
सा॒कम्	सह	साथ
न॑रः	नरः	नरों ने
दं॒सनैः॑	कर्मभिः	कर्मों से
आ	आ+	-
चि॒कि॒त्रि॒रे॒	आ+चिकित्रिरे, ज्ञापितवन्तः	ज्ञान कराया है

संस्कृतार्थः ।

हे मरणरहिताः ! मरुतः ! तद् युष्माकं बन्धुत्वं यत् पुरातने युगे (यूयम्) बहुवारं स्तोत्रं रक्षितवन्तः-स्थ, नरः (मरुतः) अनया स्तुत्या मनुष्यजातये श्रवणं प्रसाद्य सह (एव) कर्मभिर्ज्ञापितवन्तः ॥ १३ ॥

भाषार्थ ।

हे मरण से रहित मरुतो ! सो आपका बन्धुभाव है जो पुराने युग में आपने बहुत वार स्तोत्र की रक्षा की, नर (मरुतों) ने इस स्तुति से मनुष्यजाति के लिये सुनाई की कृपा करके साथ (ही) कर्मों का ज्ञान कराया है ॥ १३ ॥

पुराने युग में बहुत वार स्तोत्र की रक्षा की है जिस से हम तक वेद के स्तोत्र पहुंचे हैं लुप्त नहीं हुए और साथ ही कर्म का ज्ञान भी चला आया है नष्ट नहीं हुआ ॥

मरुतोदेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

येनदीर्घंमरुतःशूशवाम युष्माकेनपरीणसातुरासः । आयत्ततनन् वृजनेजनास एभिर्यज्ञेभिस्तदभीष्टिमश्याम् ॥ १४ ॥

येन	येन	जिस से

ऋ०मं०१सू०१६६मं०१४ (४१२४)

दीर्घम्	दीर्घकालम्	लंबे काल तक
मरुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो
शूशुवाम	वर्धामहे	हम बढ़ें
युष्माकेन	युष्मदीयेन	तुम्हारी से
परीणसा	बाहुल्येन (निघं०३।१)	बहुतायत से
तुरासः	हे वेगवन्तः !	हे वेगवाले
आ	आ+	–
यत्	येन (विभक्तेर्लुक्)	जिस से
ततनन्	आ+ततनन्, सर्वतो विस्तृता भवन्तु	सब ओर फैलें
वृजने	शस्यभूमौ	खेती की भूमि में
जनासः	मनुष्याः	मनुष्य

ए॒भिः	एभिः	इन से
य॒ज्ञेभि॑ः	यज्ञैः	यज्ञों से
तत्	तम्	उसको
अ॒भि	अभि+	–
इष्टि॑म्	अभिलाषम्	अभिलाषा को
अ॒श्या॒म्	अभि+अश्याम्, प्राप्नुयाम्	मैं पाऊं

संस्कृतार्थः ।

हे वेगवन्तः ! मरुतः ! येन (वयम्) युष्मदीयेन बाहुल्येन दीर्घकालं वर्धामहै, येन (चास्माकम्) जनाः शस्यभूमौ सर्वतो विस्तृता भवन्तु, तमभिलाषं (अहम्) एभिर्यज्ञैः प्राप्नुयाम् ॥ १४ ॥

भाषार्थः ।

हे वेगवाले मरुतो ! जिससे हम आपकी बहुतायत के द्वारा चिरकाल तक बढ़ें, (और) जिस से (हमारे) जन खेती की भूमि में सब ओर फैलें, उस अभिलाषा को मैं इन यज्ञों द्वारा प्राप्त करूं ॥ १४ ॥

मरुतोदेवताः,निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।१०।११।

एषवःस्तोमोमरुतइयंगीर्मान्दार्यस्यमान्यस्यकारोः । एषायासीष्टतन्वेवयां विद्यामेषंवृजनंजीरदानुम् ॥ १५ ॥

एषः	एषः	यह
वः	युष्मभ्यम्	तुम्हारे लिये
स्तोमः	स्तोमः	स्तोत्र
मरुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो
इयम्	इयम्	यह
गीः	वाणी	वाणी

मा॒न्दा॒र्य॑स्य	मान्दार्यस्य	मान्दार्य का
मा॒न्य॑स्य	मानपुत्रस्य	मान के पुत्र का
का॒रोः	कवेः	कवि का
षा	आ+	–
इ॒षा	अन्नेन	अन्न के साथ
या॒सी॒ष्ट॒	आ+यासीष्ट, आगच्छत	आओ
त॒न्वे॑	शरीराय	शरीर के लिये
व॒याम्	बलम्	बल को
वि॒द्याम॑	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त हों
इ॒षम्	अन्नम्	अन्न को
वृ॒जन॑म्	बलम्	बल को

जी॒रऽदानु॑म्	शीघ्रदानशील-ताम्	शीघ्र दान करने के स्वभाव को

संस्कृतार्थः ।

हे मरुतः! मानपुत्रस्य मान्दार्यस्य कवेः एषः स्तोमः इयं वाणी (च) युष्मभ्यम् (भवेताम्, यूयम्) शरीराय बलम् (प्रदातुम्) अन्नेन सह आगच्छत, (वयम्) अन्नं बलं शीघ्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ १५ ॥

भाषार्थः ।

हे मरुतो ! मान के पुत्र मान्दार्य कवि का यह स्तोत्र (और) यह वाणी आपके लिये (हों) आप शरीर के लिये बल (देने को) अन्न के साथ आवें, हम अन्न को बल को (और) शीघ्र दान करने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ १५ ॥

इति षट्षष्ट्युत्तरशततमं सूक्तम् ।

ऋ०मं०१ सू०१६७।

इन्द्रोमरुतश्च देवताः ।

अगस्त्यऋषिः ।

विनियोगोलैङ्गिकः ।

१०। 'बयमव–' इत्येतामरुत्वतिते आदित्यं जपेत् (आ०गृ०सू०२।६।१४)

सूक्त का भावार्थ ।

हे घोड़ों वाले इन्द्र ! हम को आप की सहस्रों रक्षाएं, सहस्रों अन्न, सहस्रों धन और सहस्रों बल प्राप्त हों ॥ १ ॥ अत्यन्त बुद्धिमान मरुत अब रक्षाओं और चमकने वाले उत्तम धनों के साथ हमारी ओर आवें, क्योंकि उनके उत्तम घोड़े समुद्र के पार जाकर हिनहिनाए हैं ॥ २ ॥ जिन मरुतों के साथ घर में रहने वाली स्त्री की न्याईं विद्युत रूपी चमकती हुई सुनहरी कुल्हाड़ी संयुक्त हुई है और जिनके साथ सभा में बोलने वाली विदुषी स्त्री की न्याईं विद्युत की गरज संयुक्त हुई है ॥ ३ ॥ शीघ्र गति वाले मरुत सांझी स्त्री के समान बालिका विद्युत से अलग रहे, उन्होंने उस का परित्याग नहीं किया, परन्तु जब वह बड़ी हुई तब उसकी मित्रता को स्वीकार किया ॥ ४ ॥ जब खुल बालों वाली विद्युत देवी ने समागम के लिये मरुतों को वरा, तब वह सूर्य की सी शीघ्र गति से उनके रथ को सूर्या की न्याईं प्राप्त हुई ॥ ५ ॥ हे मरुतो ! तब आप जवानों ने शोभा वाली युवती विद्युत को रथ में बैठाया, तब आपके लिये सोम निचोड़ कर और हवि को लेकर स्तोता ने स्तोम को गाया ॥ ६ ॥ अब मैं मरुतों की सच्ची महिमा का वर्णन करता हूं, जब इन वीरों में मन लगाने वाली इनकी विद्युत

रूपी पत्नी वर्षा, को बिन्दु रूपी प्रजा को उत्पन्न करती है॥७॥ मित्र और वरुण निन्दित कर्म करने वाले से दानी की रक्षा करते हैं, निश्चल पुरुष भी गिरजाते हैं और दान देने वाला फलता फूलता है ॥ ८ ॥ हे मरुतो ! आपके बल की सीमा को हम में से किसी ने नहीं पाया, मरुतदेव दबाने वाले अपने बल से हमारे द्वेषियों को परास्त करते हैं॥ ९ ॥ हम आज इन्द्र के प्यारे हों, कल हम युद्ध में उसी को बुलावें जैसे हमारे पूर्वज बुलाते थे, प्रतिदिन हम महत्त्व की ओर जावें, और वह महान हमारे, वीरों के अनुकूल हो ॥ १० ॥ हे मरुतो ! मान के पुत्र मान्दार्य कवि का यह स्तोत्र और यह वाणी आपके लिये हैं, आप हमारे शरीरों को बल देने के लिये अन्न के साथ आवें और हम अन्न को बल को और शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ११ ॥

इन्द्रोदेवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः।१०।१२।१०।११।

सहस्रंतइन्द्रोतयोनः सहस्रमिषोहरिवोगूर्ततमाः। सहस्रंरायो मादयध्यै सहस्रिणउपनोयन्तु वाजाः ॥ १ ॥

सहस्रम्	सहस्रसंख्याकाः	हजारों

त॒	तव	तेरी
इ॒न्द्र॒	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
ऊ॒तयः॑	रक्षाः	रक्षाएँ
न॒ः	अस्मान्	हम को
स॒हस्र्॑	सहस्रसङ्ख्याकान	हजारों
इ॒षः॑	अन्नानि	अन्न
ह॒रि॒ऽवः॑	हे अश्वयुक्त !	हे घोड़ों वाले
गू॒र्तऽत॑माः	अभिमततमानि	अत्यन्त सुहावने
स॒हस्र॑म्	सहस्रसङ्ख्याकानि	हजारों
रायः॑	धनानि	धन
मा॒द॒यध्यै॑	मादयितुम्	मुदित करने के लिये

म०मं०१ सू०११मं०१ (७३१२)

स॒ह॒स्रि॑णः	सहस्रसङ्ख्याकानि	हजारों
उ॑प	उप+	–
न॒ः	अस्मान्	हम को
य॒न्तु॒	उप+यन्तु, प्राप्नुवन्तु	प्राप्त हों
वा॑जाः	बलानि	बल

संस्कृतार्थः ।

हे अश्वयुक्त ! इन्द्र ! अस्मान् तव सहस्रसङ्ख्याकारक्षाः, अभिमततमानि सहस्राणि अन्नानि, मादयितुं सहस्राणि धनानि, सहस्राणि बलानि (च) अस्मान् प्राप्नुवन्तु ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

हे घोड़ों वाले इन्द्र ! हमें आप की हजारों रक्षाएँ, अत्यन्त सुहावने हजारों अन्न, मुदित करने के लिये हजारों धन (और) हजारों बल हमको प्राप्त हों ॥१॥

मरुतोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११।

आनोऽवोभिर्मरुतोयान्त्वच्छा
ज्येष्ठेभिर्वाबृहद्दिवैःसुमायाः। अध
यदेषांनियुतःपरमाः समुद्रस्यचिद्ध-
नयन्तपारे ॥ २ ॥

आ	आ+	
नः	अस्मान्	हम को
अवःऽभिः	रक्षाभिः	रक्षाओं के साथ
मरुतः	मरुतः	मरुत
यान्तु	आ+यान्तु	आवें

ऋ०मं०१ सू०११७ मं०२ (४६३४)

पच्छ॑	अभिलक्ष्य	लक्ष्य कर
ज्येष्ठे॑भिः	प्रशस्यतमैः	अत्यंत प्रशंसनीयों के साथ
वा॒	च	और
बृ॒हत्ऽदि॑वैः	प्रभूतंद्योतमानैः	बहुत चमकते हुओं के साथ
सु॒ऽमा॒याः	सुप्रज्ञाः	अत्यन्त बुद्धिमान
अध॑	इदानीम्	अब
यत्	यत्	जो
ए॒षा॒म्	एषाम्	इन के
नि॒ऽयुत॑ः	अश्वाः	घोड़े
प॒र॒माः	उत्तमाः	उत्तम
स॒मु॒द्रस्य॑	समुद्रस्य	समुद्र के

चित्	खलु	सचमुच
धनयन्त	हेषितवन्तः	हिनहिनाए हैं
पारे	पारे	पार में

संस्कृतार्थः ।

सुप्रज्ञाः मरुतो रक्षाभिः, प्रभूतं द्योतमानैः प्रशस्यतमैः (च धनैः)सह अस्मान् प्रति आगच्छन्तु, यदिदानीमेषामुत्तमाअश्वाः समुद्रस्य खलु पारे हेषितवन्तः ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

अत्यन्त बुद्धिमान मरुत रक्षाओं और बहुत चमकने वाले अत्यन्त प्रशंसनीय (धनों) के साथ हमारी ओर आवें, जो अब इनके उत्तम घोड़े सचमुच समुद्र के पार हिन हिनाए हैं ॥ २ ॥

प्रयोजन यह है कि मरुत समुद्रों से जल लेकर इस पार आगए हैं अब तो अवश्य हमारे पास रक्षा आदि के साथ आवें।

मरुतोदेवताः,त्रिष्टुप्छन्दः।१ १।१ १।१ १।१ १।

मिम्यक्षयेषुसुधिताघृताची हिर-

ण्यनिर्णि॒गुप॑रा॒नऋ॒ष्टिः । गुहा॒चर॑-न्ती॒मनु॑षो॒नयोषा॑ स॒भाव॑तीविद॒थ्ये॑व॒ संवाक् ॥ ३ ॥

मि॒म्यक्ष॑	सम्+मिम्यक्ष, सङ्गतवती (म्यक्षतिर्गतिकर्मा निघं० २।१४)	संगत हुई है
ये॑षु	येषु	जिन में
सु॒ऽधि॑ता	कुठारिका	कुल्हारी
घृ॒ताची॑	द्योतमाना	चमकती हुई
हिर॑ण्यऽ- निर्निक्	स्वर्णरूपा (निर्णिगितिरूपनाम निघं० ३।७)	सुनहरी रूप वाली
उप॑रा	पश्चाद्भवा	पीछे होने वाली

न	इव	की न्याईं
ऋ॒ष्टिः	शक्तिः	बर्छी
गुहा॑	रहसि	गुप्त स्थान में
चर॑न्ती	चरन्ती	विचरती हुई
मनु॑षः	मनुष्यस्य	मनुष्य की
न	इव	की न्याईं
योषा॑	योषा	स्त्री
स॒भाऽव॑ती	सभावती	सभावाली
वि॒द॒थ्या॑- ऽइव	विदुषीव (आ०को०)	विदुषी की न्याईं
सम्	+सम्	–
वाक्	वाक्	वाणी

संस्कृतार्थः ।

येषु (मरुत्सु) द्योतमाना स्वर्णरूपा कुठारिका, पश्चाद्भवा शक्तिरिव, रहसि चरन्ती मनुष्यस्य योषेव (च) सङ्गतवती, (येषु च) सभावती विदुषीव वाक् (सङ्गतवती) ॥ ३ ॥

भाषार्थ ।

जिन (मरुतों) में चमकती हुई सुनहरी रूप वाली कुल्हाड़ी, पीछे रहने वाली बर्छी की न्याईं (और) गुप्त रहने वाली मनुष्य की स्त्री की न्याईं संगत हुई है (और जिनमें) सभा वाली विदुषी की न्याईं वाणी (संगत हुई है) ॥ ३ ॥

'चमकती हुई सुनहरी कुल्हाड़ी' विद्युत है जो घर में रहने वाली स्त्री की न्याईं कभी कभी प्रकट होती है और 'वाणी' बिजली की गरज है जो सभा में बोलने वाली विदुषी स्त्री की न्याईं है ।

मरुतोदेवताः,निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।१०।११।१.३।११।

परा॑शु॒भ्राअ॒यासो॑य॒व्या सा॑धार॒-
ण्ये॑वम॒रुतो॑मिमिक्षुः । नरो॒दसी॑अ-

प॑नुदन्तघो॒रा जु॒षन्त॒वृधं॑स॒ख्याय॑

दे॒वाः ॥ ४ ॥ =

परा॑	परा+	–
शु॒भ्राः	उज्ज्वलाः	उज्ज्वल
अ॒यास॑ः	क्षिप्रगतयः (आ०को०)	शीघ्र गति वाले
य॒व्या	यवीयस्या	अत्यन्त युवती से
सा॒धार॒- ण्या॑ऽइव	समान्या (स्त्रिया) इव	सांझी (स्त्री) से मानो
म॒रुत॑ः	मरुतः	मरुत
मि॒मि॒क्षुः	परा+मिमिक्षः, परागतवन्तः	अलग रहे
न	न	नहीं

रो॒द॒सी॰	रोदसीम् (विभक्तेलक्)	रोदसी को
अ॑प	अप+	–
नु॒द॒न्त॒	अप+नुदन्त, त्यक्तवन्तः	त्याग दिया
घो॒राः	भयानकाः	भयानकों ने
जु॒षन्त॑	सेवितवन्तः	सेवन किया
वृ॑धम्	वृद्धाम्	बढ़ी हुई को
स॒ख्याय॑	मित्रत्वाय	मित्रता के लिये
दे॒वाः	देवाः	देवताओं ने

संस्कृतार्थः ।

क्षिप्रगतयः उज्ज्वलाः मरुतः समान्या(स्त्रिया) इव यशीयस्या (रोदस्या) परागतवन्तः,भयानकाः देवाः (ताम्) रोदसीं न त्यक्तवन्तः (अपितु) वृद्धाम् (सताम्) मित्रत्वाय सेवितवन्तः ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

शीघ्र गति वाले उज्वल मरुत सांझी (स्त्री) की न्याईं अत्यन्त युवती (रोदसी) से अलग रहे, भयानक देवों ने (उस) रोदसी का त्याग नहीं किया, (परन्तु) बड़ी हुईं को मित्रता के लिये सेवन किया ॥ ४ ॥

'रोदसी' विद्युत का नामान्तर प्रतीत होता है ।

मरुतोदेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११।

जोषद्यदीमसुर्यासचध्यै विषितस्तुकारोदसीनृमणाः। आसूर्येव विधतोरथंगात् त्वेषप्रतीकानभसोनेत्या ॥ ५ ॥

जोषत्	छतवती	भरा
यत्	यदा	जब

ऋ०मं०१ सू०१६७ मं०५ (मरुत)

ईम्	एनम्	इस को
असुर्या	देवी (आ०को०)	देवी ने
सचध्यै	सङ्गत्यै	संगति के लिये
विसित-ऽस्तुका	विप्रकीर्णकेशा	खुले बालों वाली
रोदसी	रोदसी	रोदसी
नृऽमनाः	नृषु(मरुत्सु) दत्तमनस्का	मरुतों में मन लगाने वाली
आ	आ+	–
सूर्याऽइव	सूर्य्येव	सूर्या की न्याई
विधतः	परिचरतः	सेवा करते हुए को
रथम्	रथम्	रथ को

गात्	आ+गात्, प्राप्तवती	प्राप्त हुई
त्वेषऽप्रतीका	प्रदीप्तमुखी	चमकीले मुख वाली
नभसः	सूर्यस्य (निघं०१।४)	सूर्य की
न	इव	की न्याई
इत्या	गतिः	गति

संस्कृतार्थः ।

यदा विप्रकीर्णकेशा मरुत्सुदत्तमनस्का (च) रोदसीदेवी सक्त्यै एनम् (मरुद्गणम्) वृतवती (तदा सा) प्रदीप्तमुखी परिचरतः (मरुद्गणस्य, रथं सूर्येव सूर्यस्य गतिरिव (च) प्राप्तवती ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

जब खुले बालों वाली (और) मरुतों में मन लगाने वाली रोदसीदेवी ने इन (मरुतों) को वरा (तब वह) चमकीले मुख वाली सेवा करते हुए (मरुतों) के रथ को सूर्या की न्याई (और) सूर्य की गति की न्याई प्राप्त हुई ॥ ५ ॥

ऋ०मं०१ सू०१६७ मं०६ (१९५८)

'सूर्या' सूर्य की प्रकाशरूपा पुत्री है जिसका चन्द्रमा से विवाह हुआ देखो मण्डल १० सूक्त ८५ ॥

मरुतो देवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

आस्था॑पयन्तयुव॒तिंयुवा॑नः शु॒भेनिमि॑श्लांवि॒दथे॑षुप॒ज्राम् । अ॒र्कोयद्वो॑मरुतोह॒विष्मा॒न् गा॒य॑द्गा॒थंसु॒तसो॑मो॒दवस्यन् ॥ ६ ॥

आ	आ+	–
अ॒स्था॒प॒य॒न्त॒	आ+अस्थापयन्त, संस्थापितवन्तः	बैठाया
युव॒तिम्	युवतिम्	युवति को
युवा॑नः	युवानः	जवानों ने
शु॒भे	शोभया (तृतीयार्थे चतुर्थी)	शोभा से

निऽमि॑श्लाम्	नितरांमिश्रिताम्	खूब मिली हुई को
वि॒दथे॑षु	युद्धेषु	युद्धों में
प॒ज्राम्	बलवतीम्	बल वाली को
अ॒र्कः	स्तोता (सा०भा०)	स्तोता ने
यत्	यदा	जब
व॒ः	युष्मभ्यम्	तुम्हारे लिये
म॒रु॒तः॒	हे मरुतः!	हे मरुतो
ह॒विष्मा॑न्	हविर्युक्तः	हवि से युक्त
गाय॑त्	गीतवान्	गाया
गा॒थम्	स्तोत्रम्	स्तोत्र को

सु॒तऽसो॑मः	सोमनिष्पीडकः	सोमनिचोड़ने वाला
दु॒वस्यन्	परिचरन्	सेवा करता हुआ

संस्कृतार्थः ।

हे मरुतः ! युवानः (यूयम्) शोभया मिश्रितां युद्धेषु बलवतीम् (च) युवतिम् (रोदसीम्) (रथे) संस्थापितवन्तः यदा युष्मभ्यं सोमनिष्पीडको हविर्युक्तः स्तोता परिचरन् (सन्) स्तोत्रं गीतवान् ॥ ६ ॥

भावार्थः

हे मरुतो! (आप)जवानोंने खूब शोभा से मिली हुई (और) युद्धों में बलवाली जवान (रोदसी) को (रथ में) बैठाया जब आपके लिये सोम निचोड़ने वाले (और) हवि से युक्त स्तोता ने सेवा करते हुए स्तोत्र को गाया ॥ ६ ॥

रोदसी को रथ में बैठाया अर्थात् विद्युत को साथ लेकर वृष्टि करने के लिये स्तोता को ओर सिधारे।

मरुतोदेवताः,त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११।

प्रतं॑विवक्मि॒वक्म्यो॒यए॑षां म॒रुतां॑

महिमासत्योअस्ति । सचायदीं
वृषमणाअहंयुः स्थिराचिज्जनीर्वहते सुभागाः ॥ ७ ॥

प्र	प्र+	–
तम्	तम्	उस को
विवक्मि	प्र+विवक्मि, प्रकर्षेण वर्णयामि	खूब वर्णन करता हूँ
वक्म्यः	वक्तव्यः	कहने योग्य
यः	यः	जो
एषाम्	एषाम्	इन का
मरुताम्	मरुताम्	मरुतों का
महिमा	महिमा	महत्त्व

ऋ०मं०१ सू०११७ मं०७ (७५४८)

सत्यः	सत्यः	सच्चा
अस्ति	अस्ति	है
सचा	सह	साथ
यत्	यदा	जब
ईम्	(पूरणः)	–
वृषऽमनाः	वीरेषु दत्तमनस्का	वीरोंमें मन लगाने वाली
अहम्ऽयुः	अहङ्कारवती, मानिनीत्यर्थः	मान वाली
स्थिरा	दृढनिश्चया	दृढ निश्चय वाला
चित्	(पूरणः)	–
जनीः	प्रजाः	प्रजाओं को
वहते	धारयति	धारण करता है
सुऽभागाः	सौभाग्योपेताः	सौभाग्य वालियों को

संस्कृतार्थः।

य एषां मरुतां वक्तव्यः सत्योमहिमा अस्ति तम् (अहम्) प्रकर्षेण वर्णयामि, यदा (एषु) वीरेषु दत्तमनस्का दृढनिश्चया मानिनी (च) (रोदसी, एभिः) सह सौभाग्योपेताः प्रजाः धारयति ॥ ७ ॥

भाषार्थ।

जो इन मरुतों का कहने योग्य सच्चा महत्त्व है उसको मैं खूब वर्णन करता हूं जब (इन) वीरों में मन लगाने वाली दृढ़ निश्चय वाली (और) मान वाली (रोदसी इनके) साथ सौभाग्यवाली प्रजाओं को धारण करती हैं ॥ ७ ॥

सौभाग्य वाली प्रजाएं वर्षा की बूंदें हैं जो मरुद्गण और विद्युत के समागम से उत्पन्न होती हैं।

मरुतोदेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।

पान्ति॑मि॒त्रावरु॑णावव॒द्याच्चयत॑-
ईमर्य॒मोअप्र॑शस्ता॒न्। उ॒तच्य॑वन्ते॒
अच्यु॑ताध्रु॒वाणि॑वावृ॒धईं॑मरुतो॒दाति॑-
वारः॥८॥

पान्ति॑	रक्षतः (वचनव्यत्ययः)	रक्षा करते हैं
मि॒त्रावरु॑णौ	मित्रावरुणौ	मित्र और वरुण
अ॒व॒द्यात्	निन्दनीयात्	निन्दनीय से
चय॑ते	पीडयति (यास्कः)	दुखाता है
ई॒म्	(पूरणः)	–
अ॒र्य॒मो०	अर्यमा (उ इतिपूरणः)	अर्यमा
अप्र॑शस्तान्	निन्दनीयान्	निन्दा के योग्यों को
उ॒त	अपिच	और भी
च्य॒व॒न्ते॒	भ्रंशन्ते	गिर जाते हैं
अच्यु॑ता	भ्रंशरहितानि	न डिगने वाले
ध्रु॒वा॑णि	निश्चळानि	निश्चळ

ववृधे	वर्धते (छन्दसि लिट्)	बढ़ता है
ईम्	(पूरणः)	–
मरुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो
दातिऽवारः	दातिर्दानं वारोवरणीयः पदार्थोयस्य तथोक्तः	उत्तम पदार्थों के देने वाला

संस्कृतार्थः ।

मित्रावरुणौ निन्दनीयात् (मनुष्यात्) रक्षतः, अर्यमा निन्दनीयान् (मनुष्यान्) पीडयति, भ्रंशरहितानि निश्चलानि अपि भ्रंशन्ते, हे मरुतः ! वरणीयानांदाता वर्धते ॥ ८ ॥

भाषार्थः ।

मित्र और वरुण निन्दनीय (मनुष्य) से बचाते हैं, अर्यमा निन्दनीय (मनुष्यों) को दुखाता है, न डिगने वाले निश्चल भी गिर जाते हैं, हे मरुतो ! उत्तम पदार्थों के देने वाला बढ़ता है ॥ ८ ॥

R

२८० ६९

न डिगने वाले निश्चल भी गिर जाते हैं अर्थात जो अपने बल और बुद्धि के सहारे रह कर निन्दनीय कर्म करते हैं वे नाश को प्राप्त होते हैं।

मरुतोदेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।१११।१११।१११।

न॒हीनुवो॑मरुतो॒अन्त्य॒स्मे आ॒-
रात्ता॑च्चि॒च्छव॑सो॒अन्त॑मा॒पुः। ते
धृ॒ष्णुना॒शव॑साशूशु॒वांसोऽर्णो॒नद्वेषो॑
धृ॒षतापरि॑ष्ठुः ॥ ९॥

न॒हि	नहि	नहीं
नु	एव	ही
वः॒	युष्माकम्	तुम्हारे
म॒रु॒तः॒	हे मरुतः !	हे मरुतो

अन्ति॑	समीपम्	पास
अ॒स्मे॰	अस्मासु	हम में
आ॒रात्ता॑त्	दूरात्	दूर से
चि॒त्	अपि	और
शव॑सः	बलस्य	बल के
अन्त॑म्	अन्तम्	अन्त को
आ॒पुः	प्राप्तवन्तः	पाया है
ते	ते	वे
धृ॒ष्णुना॑	धर्षकेण	दबाने वाले से
शव॑सा	बलेन	बल से
शू॒शु॒ऽवां॑सः	प्रवृद्धाः सन्तः	बढे हुए

अर्णः	उदकम् (निघं० १।१२)	जल
न	इव	की न्याईं
द्वेषः	द्विषः	द्वेषियों को
धृषता	सामर्थ्यंदर्शयता	सामर्थ्य को दिखाते हुए से
परि	परि+	–
स्थुः	परि+स्थुः, परिभवन्ति	परास्त करते हैं

संस्कृतार्थः ।

हे मरुतः ! युष्माकं बलस्याऽन्तमस्मासु (केऽपि) समीपं दूराच्च नह्येव प्राप्तवन्तः, ते (मरुतः) सामर्थ्यंदर्शयता धर्षकेण (च) बलेन उदकमिवप्रवृद्धाः सन्तोद्विषःपरिभवन्ति ॥ ९ ॥

भाषार्थ ।

हे मरुतो ! आपके बल की सीमा को हम में (किसी ने पास से और दूर से नहीं पाया, वे (मरुत) सामर्थ्य दिखाने वाले(और)दबाने वाले बल से जल की न्याईं बढ़े हुए द्वेषियों को परास्त करते हैं ॥९॥

इन्द्रोदेवता:, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

वयमद्येन्द्रस्यप्रेष्ठा वयंश्वोवोचेमहिसमर्ये।वयंपुरामहिचनोअनुद्यून् तन्नऋभुक्षानरामनुष्यात् ।१०।

वयम्	वयम्	हम
अद्य	अद्य	आज
इन्द्रस्य	इन्द्रस्य	इन्द्र के
प्रेष्ठाः	प्रियतमाः	अत्यन्त प्यारे
वयम्	वयम्	हम
श्वः	श्वः	कल
वोचेमहि	आह्वयाम	पुकारें

स॒ऽम॒र्यें	सङ्ग्रामे (निघं०२।१७)	युद्ध में
व॒यम्	वयम्	हम
पु॒रा	पुरा	पहिले
महि॑	महत्त्वम्	महत्त्व को
च॒	च	और
न॒ः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
अनु॑	अनु+	–
द्यून्	अनु+द्यून्, प्रतिदिनम्	प्रत्येक दिन में
तत्	सः	वह
न॒ः	अस्माकम्	हमारा
ऋ॒भु॒क्षाः	महान् (निघं०३।३)	महान्

नराम्	वीराणाम्	वीरों के
अनु	अनुकूलः	अनुकुल
स्यात्	स्यात्	हो

संस्कृतार्थः ।

वयमद्य इन्द्रस्य प्रियतमाः(भवेम)वयंश्वःसङ्ग्रामे (तमेव) आह्वयाम, पुराच वयम् (तमेवाहूतवन्तःस्मः) अस्मभ्यं प्रतिदिनम् महत्त्वम् (प्राप्नोतु) स महान् अस्माकं नराणाम् अनुकूलःस्यात् ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

हम आज इन्द्र के अत्यन्त प्यारे (हों) कल हम युद्ध में (उसी को) बुलावें और पहिले (भी) हम (उसी को बुलाते थे) हमारे लिये प्रतिदिन महत्त्व (प्राप्त हो) (वह) महान् हमारे वीरों के अनुकूल हों ॥ १० ॥

मरुतोदेवताः, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः।१३।१३।१०।११

एषवःस्तोमोमरुतइयंगीर्मान्दा-

र्यस्यमान्यस्यकारोः । एषायासीष्ट
तन्वेवयां विद्यामेषंवृजनंजीरदानुम् ॥ ११ ॥

एषः	एषः	यह
वः	युष्मभ्यम्	आप के लिये
स्तोमः	स्तोमः	स्तोत्र
मरुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो
इयम्	इयम्	यह
गीः	वाणी	वाणी
मान्दार्यस्य	मान्दार्यस्य	मान्दार्य का
मान्यस्य	मानपुत्रस्य	मान के पुत्र का

कारोः	कवेः	कवि का
आ	आ+	–
इषा	अन्नेन	अन्नके साथ
यासीष्ट	आ+यासीष्ट, आगच्छत	आओ
तन्वे	शरीराय	शरीर के लिये
वयाम्	बलम्	बल को
विद्याम	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त हों
इषम्	अन्नम्	अन्न को
वृजनम्	बलम्	बल को
जीरदानुम्	शीघ्रदान- शीलताम्	शीघ्र दान देने के स्वभाव को

संस्कृतार्थः।

हे मरुतः! मानपत्रस्य मान्दार्यस्य कवेरेषस्तोम-

इयं वाणी (च) युष्मभ्यम् (स्तः) (यूयम्) शरीराय बलम् (प्रदातुम्) अन्नेनसह आगच्छत, (वयम्) अन्नं बलं शीघ्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ ११ ॥

भावार्थः।

हे मरुतो! मान के पुत्र मान्दार्य कवि का यह स्तोत्र (और) यह वाणी आप के लिये (हैं) आप शरीर के लिये बल (देने को) अन्न के साथ आवें, हम अन्न बल (और) शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ११ ॥

इति सप्तषष्ट्युत्तरशततमं सूक्तम्।

ऋ०मं०१ सू०१६८।

मरुतोदेवता, अगस्त्यऋषिः।

विनियोगोलैङ्गिकः।

सूक्त का भावार्थ।

हे मरुतो! प्रत्येक यज्ञ में आपका एकाग्रमन और शीघ्रता करने वाला यजमान और प्रत्येक स्तोत्र में आपका देवकाम भक्त उपस्थित है, वह मैं द्यौ और पृथिवी के उपकार और रक्षा के लिये आप को सुन्दर स्तोत्रों से इधर लौटाता हूं ॥ १॥ जो आप झरनों की न्याईं स्वतः उत्पन्न हुए हैं और स्वतः बल वाले हैं, जो अन्न को और प्रकाश को बखेरते हुए प्रकट हुए हैं, जो जल की लहरों की समान सहस्रों हैं और गौ तथा बैलों की न्याईं हमारे समीपवर्ती हैं ॥ २॥ जैसे निचोड़ कर पीये ए मोटी पोरी वाले सोम हृदय में वेगयुक्त होकर ठैरते हैं वैसे वेग वाले मरुत कन्धों में मानो बर्छी और हाथों में कंगन और कटार धारण किये हुए ठैरे हैं ॥ ३॥ मरुत अपने आप जुड़ कर द्यौ से सहज हो नीचे उतरे हैं, हे मरणरहित देवो! अपने चाबुक से अपने को प्रेरण करो, बहुतों के लिये जिन का जन्म है ऐसे धूलि से रहित चमकीले शस्त्रों वाले मरुतों ने दृढ़ों को भी गिरा दिया है ॥ ४॥ हे शस्त्रों से चमकते हुए मरुतो! जबड़ों की जीभ की न्याईं आपको भीतर से कौन प्रेरण करता है, आकाश से छुटे हुए आप मानो भाड़े के टट्टू की न्याईं मार्ग में बहुत अन्नों के ढोने वाले हैं ॥ ५॥ हे मरुतो! उस महान अन्तरिक्ष का उत्तरप्रान्त कहां है और निचला प्रान्त कहां है जिस में आप आए हो, आप एकत्रित को तृणों की न्याईं बखेर देते हो और चमकते हुए जलों को बादल से अलग करके गिरा

देते हो ॥ ६ ॥ हे मरुतो ! जैसे आप की रक्षा बल वाली सुखदाई प्रकाश वाली पक्की और शत्रुओं को पीसने वाली है, वैसे आप का दान दाता को दक्षिणा की न्याईं कल्याण रूप और दैवी वृष्टिकी न्याईं दूर तक फैलने वाला है ॥ ७ ॥ जब गरज मेघों की वाणी को उच्चारण करती है तो नदियां उस की प्रतिध्वनि (गूंज) करती हैं और जब मरुत जल को पृथिवी पर गिराते हैं तो नीचे मुख करके बिजलियां मुस्कराती हैं ॥८॥ माता पृश्निने महान युद्ध के लिये चंचल मरुतों के चमकीले गण को जन्म दिया, जब उन समान रूप वाले मरुतों ने जल को उत्पन्न किया तब मनुष्यों ने बल देने वाले अन्न को सब ओर देखा ॥९॥ हे मरुतो ! यह आपका स्तोम है, यह मान के पुत्र मान्दार्य कवि की वाणी है, आप हमारे शरीरों को बल देने वाले अन्नों के साथ आवें, और हम अन्न को बल को और तुरन्त दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ १० ॥

मरुतोदेवताः, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२

यज्ञायज्ञावः समनातुतुर्वणि-
र्धियंधियं वोदेवयाउदधिध्वे। आवो-
ऽर्वाचः सुवितायरोदस्योर्महेववृत्या-
मवसेसुवृक्तिभिः ॥ १ ॥

य॒ज्ञाऽय॑ज्ञा	प्रतियज्ञे	प्रत्येक यज्ञ में
व॒ः	युष्माकम्	तुम्हारा
स॒म॒ना	एकाग्रमनस्कः (सुपां डा)	एकाग्र मन वाला
तु॒तु॒र्व॑णिः	त्वरमाणः	शीघ्रता करता हुआ
धिय॑म् ऽधियम्	प्रतिस्तोत्रे	प्रत्येक स्तोत्र में
व॒ः	युष्माकम्	तुम्हारा
दे॒व॒ऽयाः	देवकामः	देवताओं की कामना वाला
उ॑म्०	(पूरणः)	–
द॒धि॒ध्वे॒	यूयं धारयथ	तुम स्वीकार करते हो
आ	आ +	–
व॒ः	युष्मान्	तुम को

अर्वाचः	अभिमुखान्	सामने
सुविताय	कल्याणाय	कल्याण के लिये
रोदस्योः	द्यावापृथिव्योः	द्यौ और पृथिवी की
महे	महते	महान के लिये
ववृत्याम्	आ+ववृत्याम्, आवर्तयामि	फेरता हूँ
अवसे	रक्षणाय	रक्षा के लिये
सुवृक्तिभिः	शोभनैःस्तोत्रैः	सुन्दर स्तोत्रों से

संस्कृतार्थः ।

(हे मरुतः!) प्रतियज्ञे युष्माकम् एकाग्रमनस्कः स्मरमाणः (च यजमानः) प्रतिस्तोत्रे युष्माकं देवकामः (स्तोता च विद्यते) (यं यूयम्) धारयथ, (अहम्) द्यावापृथिव्योः कल्याणाय महते रक्षणाय (च) शोभनैःस्तोत्रैर्युष्मानभिमुखानावर्तयामि ॥ १ ॥

भाषार्थ ।

(हे मरुतो !) प्रत्येक यज्ञ में आपका एकाग्र मन वाला (तथा) शीघ्रता करता हुआ (यजमान और) प्रत्येक स्तोत्र में आपका देवकाम (स्तोता है जिसको) आप धारण करते हो, मैं द्यौ और पृथिवी के कल्याण के लिये (और) महती रक्षा के लिये सुन्दर स्तोत्रों से आप को सामने फेरता हूं ॥ १ ॥

पूर्वार्द्ध का यह आशय है कि प्रत्येक यज्ञ में आप को पूजने वाला और प्रत्येक स्तोत्र में आप का स्तुति करने वाला है और वह मैं हूं ॥

मरुतोदेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

व॒व्रासो॒नयंस्व॒जाःस्वत॑वस॒ इषं॒
स्व॑रभि॒जाय॑न्त॒धूत॑यः । स॒ह॒स्रि-
या॑सोअ॒पांनोर्म॑यआ॒सागावो॒वन्द्या॑-
सो॒नोक्षण॑ः ॥ २ ॥

व॒व्रास॑ः	निर्झराः (निघं० ३।२३)	झरने
न	इव	की न्याईं
ये	ये	जो
स्व॒ऽजाः	स्वत उत्पन्नाः	अपने आप उत्पन्न हुए २
स्वऽत॑वसः	स्वतोबलवन्तः	अपने आप बलवान्
इष॑म्	अन्नम्	अन्न को
स्व॑ः	प्रकाशम्	प्रकाश को
अ॒भि॒ऽजा॑यन्त	प्रादुर्भूतवन्तः	प्रकट हुए हैं
धूत॑यः	वेपयन्तः	झाड़ते हुए
स॒ह॒स्रि॒या॑सः	सहस्रसङ्ख्याकाः	हजारों

अ॒पाम्	अपाम्	जलों की
न	इव	की न्याईं
ऊ॒र्म॑यः	ऊर्मयः	लहरें
आ॒सा	समीपम्	पास
गा॑वः	गावः	गौएँ
वन्दा॑सः	वन्दनीयाः	स्तुति के योग्य
न	इव	की न्याईं
उ॒क्ष॑णः	बलीवर्दाः	बैल

संस्कृतार्थः ।

निर्झराइव स्वनउत्पन्नाः, स्वनाद्वलवन्तः, (च) ये अन्नं प्रकाशांश्च वेपयन्तः (सन्तः) प्रादुर्भूतवन्तः (ते) अपामूर्मय इव सहस्रसङ्ख्याकाः (सन्ति) वन्दनीयाः (ते) गावो बलीवर्दाः (च) इव समीप-(वर्तिनः) (सन्ति) ॥ २ ॥

भाषार्थ ।

झरनों की न्याईं अपने आप उत्पन्न (और) अपने आप बलवान् जो अन्न को और प्रकाश को झाड़ते हुए उत्पन्न हुए हैं (वे) जलों की लहरों की न्याईं हजारों (हैं) स्तुति के योग्य (वे) गोओं(और) बैलों की न्याईं समीप-(वर्ती हं) ॥ २॥

मरुतोदेवताः, जगतीछन्दः।१२।१२।१२।१२

सोमा॑सो॒नयेसु॒तास्तृ॒प्तांश॑वो
हृ॒त्सुपी॒तासो॑दु॒वसो॒नास॑ते । ए-
षा॒मंसे॑षुर॒म्भिणी॑वरारभे॒हस्ते॑षुखा॒-
दिश्च॑कृ॒तिश्च॒सन्द॑धे ॥३॥

सोमा॑सः	सोमाः	सोम
न	इव	की न्याईं
ये	ये	जो

सुताः	निष्पीडिताः	निचोड़े हुए
तृप्तऽअंशवः	पीनकाण्डाः	मोटी पोरी वाले
हृत्ऽसु	हृदयेषु	हृदयों में
पीतासः	पीताः	पीये हुए
दुवसः	वेगयुक्ताः (आ०को०)	वेगवान्
न	इव	की न्याईं
आसते	सन्ति (आ०को०)	हैं
आ	आ+	–
एषाम्	तेषाम् (तलोपः)	उन के
अंसेषु	स्कन्धेषु	कंधों में
रम्भिणी-ऽइव	शक्तिरिव	बर्छी की न्याईं

ररभे	आश्लिष्टवती	लगी हुई है
हस्तेषु	हस्तेषु	हाथों में
खादिः	कङ्कणम्	कंगन
च	(पूरणः)	–
कृतिः	कृपाणः	कटार
च	च	और
सम्	सम्+	–
दधे	सम्+दधे,सम्यग् धृता(भवति)	पकड़ी हुई है

संस्कृतार्थः ।

ये (मरुतः) यथा पीनकाण्डाःनिष्पीडिताःसोमाः हृदयेषु पीताः (सन्तः) वेगयुक्ताः (भवन्ति तथा) सन्ति तेषां स्कन्धेषु (काचित्) शक्तिरिवआश्लिष्टवती हस्तेषु कङ्कणं कृपाणश्च धृतेस्तः ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

जो (मरुत) जैसे मोटी पोरी वाले निचोड़े हुए

सोम हृदयों में पीये हुए वेगयुक्त होते हैं (वैसे) हैं उनके कंधों में बर्छी जैसी (कोई वस्तु) लगी हुई है (और) हाथों में कंगन तथा कटार पकड़े हुए हैं ॥ ३ ॥

मरुतो देवताः, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२

अ॒वस्वयु॑क्तादि॒वआवृथा॑ययु॒रम॑-
र्त्या॒ःकश॑याचोदत॒त्मना॑। अ॒रे॒णव॑-
स्तुविजा॒ताअ॑चुच्यवुर्दृ॒ळ्हानि॑चि-
न्म॒रु॒तोभ्रा॑जदृष्टयः ॥ ४ ॥

अव॑	अव +	–
स्वऽयु॑क्ताः	स्वतोयुक्ताः	अपने आप जुड़े हुए
दि॒वः	दिवः	द्यौ से

ऋ०मं०१ सू०१६८ मं०४ (४१७२)

आ	आ +	–
वृथा	अनायासेन	सहज से
ययुः	अव+आ+ययुः, अधस्तादागतवन्तः	नीचे आए हैं
अमर्त्याः	हे मरणरहिताः!	हे न मरने वाले
कश्या	कशया	चाबुक से
चोदत	प्रेरयत	प्रेरण करो
त्मना	आत्मना	अपने आप से
अरेणवः	धुलिरहिताः	धूलि से रहित
तुविऽजाताः	बह्वर्थजाताः	बहुतों के लिये जन्मे हुए
अचुच्यवुः	च्यावितवन्तः	गिराया है

दृ॒ळ्हानि॑	दृढानि	दृढ़ों को
चि॒त्	अपि	भी
म॒रुतः॑	मरुतः	मरुत
भ्राज॑त् ऽऋष्टयः	प्रदीप्तायुधोपेताः	चमकीले शस्त्रों वाले

संस्कृतार्थः।

स्वतोयुक्ताः (मरुतः) अनायासेन नीचैरागताः, हे मरणरहिताः! स्वकीयया कशया (आत्मानम्) प्रेरयत, बह्वर्थं जाताः प्रदीप्तायुधाः धूलिरहिताः(च) मरुतो दृढान्यपि च्यावितवन्तः ॥ ४ ॥

भाषार्थ।

अपने आप जुड़े हुए (मरुत) द्यौ से सहज नीचे आगए हैं, हे मरणरहित-(देवो!) अपने चाबुक से (अपने को) प्रेरण करो, बहुतों के लिये जन्मे हुए चमकीले शस्त्रों वाले (और) धूलि से रहित मरुतों ने दृढों को भी गिराया है ॥ ४ ॥

ऋ०मं०१ सू०१६८ मं०५ (४१७४)

मरुतोदेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।१ १।१ १।१ १।१ १।

कोवोऽन्तर्मरुतऋष्टिविद्युतो
रेजतित्मनाहन्वेवजिह्वया। धन्वच्युतइषांनयामनि पुरुप्रैषाअहन्यो
३नैतशः ॥ ५ ॥

कः	कः	कौन
वः	युष्मान्	तुम को
अन्तः	अन्तरतः	भीतर से
मरुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो
ऋष्टिऽविद्युतः	हे शस्त्रैर्विद्योतमानाः !	हे शस्त्रों से चमकते हुए

रेज॑ति	प्रेरयति	प्रेरण करता है
त्मना॑	आत्मना	आत्मा से
हन्वा॑ऽइव	हनूइव (द्विवचनस्याऽऽकारः)	जैसे जबड़े
जि॒ह्वया॑	जिह्वया	जीभ से
ध॒न्व॒ऽच्युत॑ः	आकाशाच्च्युताः	आकाश से छुटे हुए
इ॒षाम्	अन्नानाम्	अन्नों के
न	इव	जैसे
याम॑नि	मार्गे (आ०को०)	मार्ग में
पु॒रु॒ऽप्रैषा॑ः	बहुवाहकाः (आ०को०)	बहुत ढोने वाले
अ॒ह॒न्य॑ः	अह्ना प्रयुक्तः	दिन के हिसाब स रखा हुआ
न	इव	जैसे

एतग्वः	अश्वः (निघं० १।१४)	घोड़ा

संस्कृतार्थः ।

हे शस्त्रैर्विद्योतमानाः ! मरुतः ! युष्मान् जिह्वया हनू इव आत्मना अन्तरतः कः प्रेरयति (ये) आकाशाच्च्युताः (यूयम्) अह्ना प्रयुक्तोऽश्वइव मार्गे अन्नानां बाहुल्येन वाहकाः इव (स्थः) ॥ ५ ॥

भावार्थ ।

हे शस्त्रों से चमकते हुए मरुतो ! आपको आपके भीतर से कौन प्रेरण करता है जैसे जबड़ों को जीभ, जो आकाश से छुटे हुए आप दिन के हिसाब से रखे हुए घोड़े की न्याईं मानो मार्ग में अन्नों के बहुत ढोने वाले हो ॥ ५ ॥

मरुतोदेवताः, जगतीछन्दः।१२।१२।१२।१२

क्वस्विदस्यरजसोमहस्परं
क्वावरं मरुतोयस्मिन्नायय । य-

यच्च्यावयथविथुरेवसंहितं व्यद्रिणा
पतथत्वेषमर्णवम् ॥ ६ ॥

क्व	क+	–
स्वित्	क + स्वित्	कहां है
अस्य	अस्य	इस का
रजसः	अन्तरिक्षस्य	अन्तरिक्ष का
महः	महतः	महान् का
परम्	उत्तरप्रान्तम्	परला भाग
क्व	क	कहां
अवरम्	अधःप्रान्तम्	निचला भाग
मरुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो

ऋ०मं०१ सू०११८ मं०१ (४६७८)

यस्मिन्	यस्मिन्	जिस में
आऽयय	आगतवन्तः स्थ	आए हो
यत्	यदा	जब
च्यवयथ	च्यावयथ	गिराते हो
विथुराऽइव	शिथिलानि (तृणानि) इव	ढीले (तृणों) की न्याईं
सम्ऽहितम्	एकीभूतम्	एक हुए २ को
वि	वि+	–
अद्रिणा	मेघेन (निघं० १।१०)	बादल से
पतथ	वि+पतथ, पृथक् कृत्य पातयथ	अलग कर के गिराते हो
त्वेषम्	प्रदीप्तम्	चमकीले को
अर्णवम्	उदकम्	जल को

संस्कृतार्थः।

हे मरुतः ! तस्य महतोऽन्तरिक्षस्य उत्तरप्रान्तं क स्वित्, अधःप्रान्तम् (च) क, यस्मिन् (यूयम्) आगन्तवन्तः, यदा एकीभूतं शिथिलानि (तृणानि) इव च्यावयथ मेघेन (च) प्रदीप्तं जलं पृथक्कृत्य पातयथ ॥ ६ ॥

भाषार्थः।

हे मरुतो ! उस महान् अन्तरिक्ष का उत्तरप्रान्त कहां है (और) निचला प्रान्त कहां है जिस में आप आए हो, जब (आप) एक हुए २ को ढीले (तृणों) की न्याईं बखेर देते हो और बादल से चमकते हुए जलों को अलग कर के गिरा देते हो ॥६॥

मरुतोदेवताः, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२

सा॒तिर्नवोऽम॑वती॒स्व॑र्वती त्वे॒षा
वि॑पाकामरु॒तःपिपि॑ष्वती । भ॒द्रावो॑
रा॒तिःपृ॑ण॒तोनदक्षि॑णा पृथु॒ज्रयी॑असु॒-
र्यै॑व॒जञ्ज॑ती ॥ ७ ॥

ऋ०मं०१ सू०१६८मं०७ (४१८०)

सा॒तिः	रक्षा (आ०को०)	रक्षा
न	इव	जैसे
व॒ः	युष्माकम्	तुम्हारा
अम॑ऽवती	बलवती (आ०को०)	बल वाली
स्व॑ःऽवती	सुखवती	सुख वाली
त्वे॒षा	प्रकाशवती	प्रकाश वाली
विऽपा॑का	प्रौढा	पक्की
म॒रु॒त॒ः	हे मरुतः !	हे मरुतो
पिपि॑ष्वती	(शत्रु–) पेषणवती	(शत्रुओं के) पीसनेवाली
भ॒द्रा	कल्याणरूपा	कल्याण रूप
व॒ः	युष्माकम्	तुम्हारा

रा॒तिः	दानम्	दान
पृ॒ण॒तः	दातुः	दाता की
न	इव	की न्याईं
दक्षि॑णा	दक्षिणा	दक्षिणा
पृ॒थु॒ऽज्र॒यी॑	विस्तृतगति-युक्ता	दूर जानेवाली
अ॒सु॒र्या॑ऽइव	दैवीव	दैवी की न्याईं
जञ्ज॑ती	वृष्टिः (याचकः)	वृष्टि

संस्कृतार्थः ।

हे मरुतः ! यथा युष्माकं रक्षा बलवती सुखवती प्रकाशवती प्रौढा (शत्रु-) पेषणवती (चाऽस्ति) तथा युष्माकं दानं दातुर्दक्षिणेव कल्याणरूपं दैवी वृष्टिरिव विस्तृतगतियुक्तम् (चाऽस्ति) ॥ ७ ॥

भावार्थः ।

हे मरुतो ! जैसे आप की रक्षा बल वाली सुख

वाली प्रकाश वाली, पक्की (और शत्रुओं के) पीसने वाली (है) वैसे आपका दान दाता की दक्षिणा की न्याईं कल्याण रूप और दैवी सृष्टि की न्याईं दूर जाने वाला है ॥ ७ ॥

मरुतोदेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११

प्रति॑ष्टोभन्ति॒सिन्ध॑वःप॒विभ्यो॒
यद॒भ्रिया॒ंवाच॑मुदी॒रय॑न्ति। अव॑स्म-
यन्तवि॒द्युतः॑पृथि॒व्यां यदी॑घृ॒तंम॒-
रुतः॑प्रुष्णु॒वन्ति॑ ॥ ८ ॥

प्रति॑	प्रति+	-
स्तो॒भ॒न्ति॒	प्रति+स्तोभन्ति, प्रतिध्वनयन्ति	प्रतिध्वनि करती हैं
सिन्ध॑वः	नद्यः (निघं०१।१३)	नदियाँ
प॒विऽभ्यः॑	घनध्वनिभ्यः	गरजनाओं के प्रति

(४८८२) ऋ०मं०१ सू०१६८ मं०८

यत्	यदा	जब
पृश्नियाम्	मेघसम्बन्धिनीम्	मेघवाली को
वाचम्	वाचम्	वाणी को
उत्ऽईरयन्ति	उच्चारयन्ति	उच्चारण करते हैं
अव	अव+	–
स्मयन्त	अव+स्मयन्त, अवाङ्मुखमीषद्धसन्ति	नीचे मुख करके मुस्कराती हैं
विऽद्युतः	विद्युतः	बिजलियाँ
पृथिव्याम्	पृथिव्याम्	पृथिवी पर
यदि	यदा	जब
घृतम्	उदकम् (निघं० १।१२)	जल को

म॒रुतः॑	मरुतः	मरुत
प्रु॒ष्णु॒वन्ति॑	प्रुष्णन्ति (व्यत्ययेन श्नुः)	गिराते हैं

संस्कृतार्थः ।

नद्यो घनध्वनिभ्यः प्रतिध्वनयन्ति यदा मेघसम्बन्धिनीं वाचमुच्चारयन्ति, विद्युतः अवाङ्मुखमीषद्धसन्ति यदा मरुतः पृथिव्यामुदकानि प्रुष्णन्ति ॥ ८ ॥

भावार्थः ।

नदियां गर्जन की प्रतिध्वनि करती हैं जब वे मेघों की वाणी को उच्चारण करती हैं, बिजलियां नीचे मुख कर के मुस्कराती हैं जब मरुत पृथिवी पर जलों को गिराते हैं ॥ ८ ॥

जब बादल गरजता है तब नदियां भी वृष्टि से फूल कर गरज की गूंज उठाती हैं।

मरुतोदेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

अ॑सूत॒पृश्नि॑र्महतेरणा॑य त्वे॒ष-
म॒यासां॑म॒रुता॒मनी॑कम् । तेस॑प्स॒रा-

सो॑ऽजनय॒न्ताभ्व॒मादित्स्व॒धामि॑-
षि॒रां पर्य॑पश्यन् ॥ ९ ॥

असू॑त	उत्पादितवती	उत्पन्न किया ह
पृश्नि॑ः	पृश्निः	पृश्नि ने
म॒ह॒ते	महते	महान के लिये
रणा॑य	सङ्ग्रामाय	युद्ध के लिये
त्वे॒षम्	प्रदीप्तम्	चमकीले को
अ॒यासा॑म्	चञ्चलानाम्	चञ्चलों के
म॒रुता॑म्	मरुताम्	मरुतों के
अनी॑कम्	समूहम्	झुंड को
ते	ते	उन्होंने

स॒प्स॒रासः॑	समानरूपाः	समानरूप वालों ने
अ॒ज॒न॒य॒न्त॒	उत्पादितवन्तः	उत्पन्न किया है
अभ्व॑म्	उदकम् (निघं० १।१२)	जल को
आत्	अनन्तरम्	पीछे
इ॒त्	(पूरणः)	–
स्व॒धाम्	अन्नम् (निघं० २।७)	अन्न को
इ॒षि॒राम्	बलप्रदम्	बल देने वाले को
परि॑	परि +	–
अ॒प॒श्य॒न्	परि + अपश्यन्, परितोदृष्टवन्तः	चारों ओर देखा

संस्कृतार्थः ।

पृश्निः महते संग्रामाय चपलानां मरुतां प्रदीप्तं समूहमुत्पादितवती, ते (च) समानरूपाः (मरुतः) उदकमुत्पादितवन्तः, अनन्तरम् (जनाः) सर्वतो बलप्रदमन्नं दृष्टवन्तः ॥ ९ ॥

भावार्थः ।

पृश्नि ने महान् युद्ध के लिये चपल मरुतों के चमकीले झुंड को उत्पन्न किया, (और) उन समान रूप वाले (मरुतों) ने जल को उत्पन्न किया, पीछे (मनुष्यों ने) बल देने वाले अन्न का सब ओर देखा ॥ ९॥

'पृश्निः' तारागण से अंकित आकाश रूपी मरुतों की माता का नाम है।

मरुतो देवताः, निचृत् त्रिष्टुप्छन्दः ।२१।२३।१०।११

एषवःस्तोमोमरुतइयंगीर्मान्दार्यस्यमान्यस्यकारोः। एषायासीष्टतन्वेवयां विद्यामेषंवृजनंजीरदानुम् ॥ १० ॥

एषः	एषः	यह
वः	युष्माकम्	तुम्हारा

ऋ०मं०१सू०११८मं०१० (४१८८)

स्तोम॑ः	स्तोत्रम्	स्तोत्र
म॒रु॒त॒ः	हे मरुतः !	हे मरुतो
इ॒यम्	इयम्	यह
गीः	वाणी	वाणी
मा॒न्दा॒र्य॑स्य	मान्दार्यस्य	मान्दार्य का
मा॒न्यस्य	मानपुत्रस्य	मान के पुत्र का
का॒रोः	कवेः	कवि का
आ	आ +	–
इ॒षा	अन्नेन	अन्न के साथ
या॒सी॒ष्ट॒	आ + यासीष्ट, आगच्छत	आओ
त॒न्वे॑	शरीराय	शरीर के लिये

वयाम्	बलम्	बल को
विद्याम	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इषम्	अन्नम्	अन्न को
वृजनम्	बलम्	बल को
जीरऽदानुम्	शीघ्रदानशीलताम्	शीघ्र दान देने के स्वभाव को

संस्कृतार्थः ।

हे मरुतः! एष युष्माकं स्तोत्रम् इयं मानपुत्रस्य मान्दार्यस्य कवेः वाणी (च स्तः) (यूयम्) शरीराय बलम् (दातुम्) अन्नेन सह आगच्छत, वयमन्नं बलं शीघ्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

हे मरुतो! यह आप का स्तोत्र (और) यह मान के पुत्र मान्दार्य कवि की वाणी (है) आप शरीर के लिये बल (देने का) अन्न के साथ आवें, (और) हम अन्न को बल को (और) शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें॥ १० ॥

इत्यष्टषष्ट्यधिकशततमं सूक्तम्

ऋ० मं० १ सू० १६९ ।

इन्द्रोदेवता, अगस्त्यऋषिः ।

विनियोगः-

१-८। एतत्सूक्तं समूळ्हेदशरात्रे द्वितीये छन्दोमे मरुत्वतीये विनियुक्तम् (आ०८।७।२२)

सूक्तका भावार्थ ।

हे जगत की रचना करने वाले इन्द्र ! आप इन मरुतों को महान वेग और क्रोध से बचाने वाले हो, हम को तो इन का आशीर्वाद ही दिलाओ क्योंकि ये आपके अत्यन्त प्रिय हैं ॥१॥ हे इन्द्र ! मनुष्यों में आपके दान को जानती हुई सब देवसेनाएं आपके साथ हुईं और प्रकाश की प्राप्ति के निमित्त युद्ध होने पर मरुतों की सेना भी हंसती हुई आपके साथ हुई ॥२॥ हे इन्द्र ! आपकी बर्छी हम तक न पहुंचकर मार्गमें ही गिर गई, मरुत हमारे लिये सदा वृष्टिके जल को प्रेरण करते हैं, जैसे अग्नि काष्ठ में अत्यन्त प्रदीप्त होती है और जैसे जल टापू को चारों ओर से घेर लेते हैं वैसे मरुत हमारे लिये अन्नों को लिये हुए खड़े हैं ॥३॥ हे इन्द्र ! आप हमारे लिये ऐसे धन को दें जैसे कोई धनी अपने बन्धु को बड़ा धन देता है जिन हमारी स्तुतियोंको आप प्यार करते हैं वे वायु के स्थान को फुड़ाकर हमारे लिये मीठे अन्नों को बरसाते हैं ॥४॥ हे इन्द्र ! भलाई को प्यार करने वाले मनुष्य को आगे बढ़ाने वाले और अत्यन्त तृप्ति कारक धन आप में हैं, जो मरुतदेव प्राचीन काल से नियम पर चलने वालों को प्यारे हैं वे हम पर अत्यन्त दया करें ॥ ५ ॥ हे इन्द्र ! आप इन वीर्यवान् मरुतों की ओर क्रोध और वृष्टि के लिये [illegible] में

पुरुषार्थ करो क्योंकि इनके चौड़ी पीठ वाले वाहन ऐसे तैय्यार खड़े हैं जैसे युद्ध के मार्ग में आर्य की सेना ॥ ६ ॥ अब चितकबरे शीघ्र गामी भयानक मरुतों के चलने के शब्द की गूंज सुनती है, प्यारे मित्रों के साथ लड़ने की इच्छा करने वाले मनुष्यों को ये पापी की न्याईं वेग के साथ गिराते हैं ॥ ७ ॥ हे इन्द्र ! मान के पुत्रों के लिये आप मरुतों के साथ सत्र की उत्पत्ति के हेतु और गोप्रधान जलों को उत्पन्न करो, आप स्तुति के योग्य देवताओं के साथ स्तुति किये जाते हो, हम अन्न को बल को और शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ८ ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११

महश्चित्त्वमिन्द्रयतएतान्
महश्चिदसित्यजसोवरूता । सनो
वेधोमरुतांचिकित्वान्त्सुम्नावनु-
ष्वतवहिप्रेष्ठा ॥ १ ॥

महः	महतः	महान से
चित्	अपि	भी

ऋ०मं०१ सू०११९ मं०१ (४६९२)

त्वम्	त्वम्	तू
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
यतः	उद्वेजगात् (भा०को०)	उद्वेग से
एतान्	एतान्	इन को
मह्वः	महतः	महान से
चित्	अपि	भी
असि	असि	तू है
त्यजसः	क्रोधात् (निघं० २।२३)	क्रोध से
वरूता	रक्षिता	बचाने वाला
सः	सः	वह
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये

वेधः	हे विधातः!	हे विधाता
मरुताम्	मरुताम्	मरुतों के
चिकित्वान्	जानन्	जानता हुआ
सुम्ना	आशार्वादान्	आशीर्वादों को
वनुष्व	देहि	तू दे
तव	तव	तेरे
हि	यतः	क्योंकि
प्रेष्ठा	प्रियतमाः	अत्यन्त प्यारे

संस्कृतार्थः।

हे विधातः! इन्द्र! त्वमेतान् महतोऽपि उद्वेगात् महतोऽपि क्रोधात् (च) रक्षिताऽसि, सः जानन् (त्वम्) अस्मभ्यं मरुतामाशीर्वादानि देहि यतः (ते) तव प्रियतमाः (सन्ति) ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

हे रचना करने वाले इन्द्र! आप इनको बड़े भी उद्वेग से (और) बड़े भी क्रोध से बचाने वाले हो, वह जानने वाले आप हमारे लिये मरुतों की आशीर्वाद को दो क्योंकि (वे) आपके अत्यन्त प्यारे (हैं) ॥ १ ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।१११।११।१११

अयुज्रन्तइन्द्रविश्वकृष्टीर्वि-
दानासोनिष्षिधोमर्त्यत्रा । मरुतां
पृत्सुतिर्हासमाना स्वर्मीळ्हस्य
प्रधनस्यसातौ ॥ २ ॥

अयुज्रन्	युक्ता अभवन्	युक्त हुए हैं
ते	त्वया	तेरे साथ
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र

विश्वऽकृष्टीः	सर्वाः प्रजाः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	सारी प्रजाएं
विदानासः	जानानाः	जानती हुईं
निःऽसिधः	दानानि (ऋ०६।४४।११)	दानों को
मर्त्यऽत्रा	मर्त्येषु (सप्तम्यर्थे त्रा)	मनुष्यों में
मरुताम्	मरुताम्	मरुतों की
पृत्सुतिः	सेना	सेना
हासमाना	हसन्ती	हंसती हुई
स्वःऽमीळ्हस्य	प्रकाशप्राप्ति-साधनस्य	प्रकाश की प्राप्ति के साधन को
प्रऽधनस्य	संग्रामस्य (निघं० २।१७)	युद्ध की।

ख्यातौ	प्राप्तौ	प्राप्ति में

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! मर्त्येषु (तव) दानानि जानानाः सर्वाः (देव-) प्रजाः त्वया युक्ता अभवन्, मरुतां सेना (च) प्रकाशप्राप्तिसाधनस्य सङ्ग्रामस्य प्राप्तौ हसती (सती त्वयि युक्ता अभवत्) ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! मनुष्यों में (आपके) दानों को जानती हुईं सब (देव-) प्रजाएं (आप से) युक्त हुईं (और) मरुतों को सेना प्रकाशप्राप्ति के साधनभूत युद्ध के होने पर हंसती हुई (आप में युक्त हुई) ॥ २ ॥

प्रकाश से तात्पर्य यहां विद्या और सभ्यता के प्रकाश का है जो इन्द्र को सहायता से आर्यजाति ने इस देश में फैलाया. ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।१ १

अम्य॒क्सात॑इन्द्र ऋ॒ष्टिर॒स्मे

सने॒म्यभ्वं॑म॒रुतो॑जनन्ति । अ॒ग्नि

श्चिद्धिष्मातसेशुशुक्वानापोनद्वीपं
दधतिप्रयांसि ॥ ३ ॥

अम्यक्	असम्यक् (निघं० ४।३)	अधूरी
सा	सा	वह
ते	तव	तेरी
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
ऋष्टिः	शक्तिः	बर्छी
अस्मे०	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
सनेमि	सदा (निघं०३।२७)	सदा
अभ्वम्	उदकम् (निघं०१।१२)	जल को
मरुतः	मरुतः	मरुत

ऋ०मं०१ सू०११९ मं०३ (७१९८)

जुनन्ति	प्रेरयन्ति	प्रेरण करते हैं
अग्निः	अग्निः	अग्नि
चित्	इव (यास्कः)	की न्याईं
हि	खलु	सचमुच
स्म	(पूरणः)	
अतसे	काष्ठे (ऋ०४।४।८)	काष्ठ में
शुशुक्वान्	अतिप्रदीप्तः	अत्यन्त प्रदीप्त
आपः	आपः	जल
न	इव	जैसे
द्वीपम्	द्वीपम्	द्वीप को
दधति	धारयन्ति	धारण करते हैं
प्रयांसि	अन्नानि	अन्नों को

संस्कृतार्थः।

हे इन्द्र ! अस्मभ्यं सा तवशक्तिः असम्यक् (अभूत्) मरुतोऽस्मभ्यं सदा जलं प्रेरयन्ति यथाऽग्निः काष्ठे-अतिप्रदीप्तः (भवति) आपः (च) यथा द्वीपम् (परिवेष्टयन्ति) तथा (मरुतोऽस्मभ्यम्) अन्नानि धारयन्ति ॥ ३ ॥

भावार्थः ।

हे इन्द्र ! हमारे लिये वह आपका बर्छी अधूरी (रही) मरुत सदा हमारे लिये जल को प्रेरणा करते हैं, सचमुच अग्नि जैसे काष्ठ में अत्यन्त प्रदीप्त (होती है और) जल जैसे टापू को घेर लेते हैं (ऐसे ही मरुत हमारे लिये) अन्नों को धारण करते हैं ॥३॥

इन्द्रो देवता, निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः।१२।११।११।११

त्वंतू न॑इन्द्र॒तंर॒यिंदा॒ ओजि॑ष्ठ-
या॒दक्षि॑णयेवरा॒तिम् । स्तुत॑श्च॒या-
स्ते॑च॒कन॑न्तवा॒योः स्तनं॒नमध्वः॑पी-
पयन्त॒वाजैः॑ ॥ ४ ॥

ऋ०मं०१ सू०१६९ मं०४ (४७००)

त्वम्	त्वम्	तू
तु	तु	तो
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
तम्	तत्	उसको
रयिम्	धनम्	धन को
दाः	देहि	दे
ओजिष्ठया	अतिशयेनमहत्या	अत्यन्त बड़ी से
दक्षिणयाऽइव	दक्षिणयेव	जैसे दक्षिणा से
रातिम्	बन्धुम् (सा०भा०)	बन्धु को
स्तुतः	स्तुतयः	स्तुतियां

च॒	(पूरणः)	–
याः	याः	जि को
ते॒	तव	तेरी
च॒कन॑न्त	प्रियाःसन्ति	प्यारी हैं
वा॒योः	वायोः	वायु के
स्तन॑म्	स्तनम्	स्तन को
न	इव	जैसे
मध्व॑ः	माधुर्योपेतैः (तृतीयार्थे षष्ठी)	मीठों से
पी॒प॒य॒न्त॒	आप्याययन्ति	फुलाते हैं
वाजै॑ः	अन्नैः	अन्नों से

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! त्वंतु अस्मभ्यं तद्धनं देहि (यत्) अतिशयेन महत्या दक्षिणयाइवबन्धवे (दीयते) याःस्तुत-

यस्तव प्रियाः सन्ति (ताः) माधुर्योपेतैरन्नैरिव वायोः स्तनमाप्याययन्ति ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! आप तो हमारे लिये उस धन को दें (जो)अत्यन्त बड़ी दक्षिणा की न्याईं बन्धु को दिया जाता है, जो स्तुतियां आपको प्यारी हैं (वे) वायु के स्तन को मानों मीठे अन्नों से फुलाती हैं ॥ ४ ॥

वायु का स्तन बादल है,आशय यह है कि आपकी इष्ट स्तुति से मनुष्यों के लिये मीठे अन्नों को को लाने वाली वृष्टि प्राप्त होती है ।

इन्द्रोदेवता,विराड् त्रिष्टुप्छन्दः।१०।११।१०।११।

त्वेरायइन्द्रतोशतमाः प्रणेतारः
कस्यचिदृतायोः।तेषुणोमरुतोमृळयन्तु
येस्मापुरागातूयन्तीवदेवाः।५।

त्वे०	त्वयि	तुझ में

रायः	अर्थाः	धन
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
तोशऽतमाः	अतितोषकाः (शत्वं छान्दसम्)	अत्यन्त तुष्टि करने वाले
प्रऽनेतारः	अग्रेनेतारः	आगे बढ़ाने वाले
कस्य	कस्य + चित् प्रत्येकस्य	प्रत्येक के
चित्	+ चित्	
ऋतऽयोः	सत्यकामस्य	सचाई की कामना वाले के
ते	ते	वे
सु	सु +	–
नः	अस्मभ्यम	हमारे ताईं
मरुतः	मरुतः	मरुत
मृळयन्त	सु + मृळयन्त, सुष्ठुदयांकुर्वन्तु	खूब दया करें

ये	ये	जो
स्म	(पूरणः)	-
पुरा	प्राचीनकालात्	पहिले से
गातुय- न्तिऽइव	नियमेगन्तारः इव	नियम पर चलने वालों जैसे
देवाः	देवाः	देव

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र! त्वयि प्रत्येकस्य सत्यकामस्य अग्रेनेतारः अतितोषकाः (च) अर्याः (सन्ति) ते मरुतोऽस्मभ्यं सुष्ठु दयांकुर्वन्तु ये देवाः प्राचीनकालात् नियमेगन्तारः इव सन्ति ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! आप में प्रत्येक सचाई की कामना वाले के आगे बढ़ाने वाले (और) अत्यन्त तुष्टि करने वाले धन (हैं) वे मरुत हम पर खूब दया करें जो देव पूर्व काल से नियम पर चलने वालों की न्याईं हैं ॥ ५ ॥

इन्द्रो देवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।१०।११

प्रतिप्रयाहीन्द्रमीळ्हुषोनॄन् महः

पार्थिवेसदनेयतस्व। अधयदेषांपृथुबुध्नासएतास्तीर्थेनार्यःपौंस्यानि

तस्थुः ॥ ६ ॥

प्रति	प्रति +	–
प्र	प्र +	–
याहि	प्रति+प्र+याहि, प्रतिनिवर्तस्व	की ओर लौट।
इन्द्र	हे इन्द्र!	हे इन्द्र
मीळ्हुषः	वीर्यवतः	वीर्यवानों को
नॄन	नरान्	नरों को

ऋ०मं०१ सू०१ ११ मं०६ (४७०६)

महः	महति (सप्तम्यर्थेद्वितीया)	बड़े में
पार्थिवे	अन्तरिक्षसम्बन्धिनि	अन्तरिक्ष वाले में
सदने	स्थाने	स्थान में
यतस्व	यत्नं कुरु	पुरुषार्थ कर
अध	अथ	अब
यत्	यतः	क्योंकि
एषाम्	एषाम्	इन के
पृथुऽबुध्नासः	विस्तृतपार्श्वाणि	चौड़े पासों वाले
एताः	वाहनानि	वाहन
तीर्थे	मार्गे	मार्ग में
न	इव	की न्याईं

अ॒र्यः	आर्यस्य	आर्य की
पौंस्या॑नि	सेनाः	सेनाएँ
त॒स्थुः	स्थितवन्तः	ठैरे हैं

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! (त्वम्) वीर्यवतो नॄन् प्रति निवर्तस्व महति अन्तरिक्षस्थाने (च) यत्नं कुरु, यत इदानीं विस्तृतपार्श्वाणि एषां वाहनानि मार्गे आर्यस्य सेना इव स्थितानि सन्ति ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! आप वीर्यवान् नरों की ओर लौटो (और) अन्तरिक्ष के स्थान में पुरुषार्थ करो, क्योंकि अब चौड़े पासों वाले उनके वाहन मार्ग में आर्य की सेनाओं की न्याईं खड़े हैं ॥ ६ ॥

वीर्यवान नर मरुत हैं जिन की सहायता से इन्द्र अन्तरिक्ष में वृष्टि के लिये पुरुषार्थ करते हैं ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११।

प्रति॑घो॒राणा॒मेता॑नाम॒यासां॑ म॒रुतां॑

शृण्वआयतामुपब्दिः । येमर्त्यंपृ-
तनायन्तमूमैर्ऋणावानंनपतयन्त
सर्गैः ॥ ७ ॥

प्रति	प्रति+	–
घोराणाम्	भयानकानाम्	भयानकों की
एतानाम्	कर्बुरवर्णानाम्	चितकबरे रंग वालों की
अयासाम्	शीघ्रगमनशीलानाम्	शीघ्र चलने वालों की
मरुताम्	मरुताम्	मरुतों की
शृण्वे	प्रति+शृण्वे, प्रतिध्वनति (आ०को०)	गूंजता है
आऽयताम्	आगच्छताम्	आते हुओं का

उपब्दिः	शब्दः (निघं० १।११)	शब्द
ये	ये	जो
मर्त्यम्	मनुष्यम्	मनुष्य को
पृतनाऽ- यन्तम्	योद्धुमिच्छन्तम्	लड़ने की इच्छा वाले को
ऊमैः	प्रियमित्रैः (आ०को०)	प्यारे मित्रों से
ऋणाऽवानम्	पापिनम्	पापी को
न	इव	जैसे
पतयन्त	पातयन्ति	गिराते हैं
सर्गैः	वेगैः	वेगों के साथ

संस्कृतार्थः ।

कर्बरवर्णानां शीघ्रगमनशीलानां, भयानकानाम्

(च)आगच्छतां मरुतां शब्दः प्रतिध्वनन्ति, ये प्रियमित्रैःसहयोद्धुमिच्छन्तं मनुष्यं पापिनमिव वेगैः पातयन्ति ॥ ७ ॥

भावार्थः।

चितकबरे रंग वाले शीघ्र चलने वाले(और)भयानक आते हुए मरुतों का शब्द गूंजता है,जो प्यारे मित्रों के साथ लड़ने की इच्छा वाले मनुष्य को पापी की न्याईं वेगों के साथ गिरा देते हैं॥ ७ ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

त्वंमाने॑भ्यइन्द्रवि॒श्वज॑न्या॒ रदा॑
म॒रु॑द्भिःशु॒रुधो॒गो॑ऽग्राः । स्तवा॑नेभिः
स्तवसेदेवदे॒वैर्वि॒द्यामे॒षंवृ॒जनं॑जी॒रदा॑नुम् ॥ ८ ॥

त्वम्	त्वम्	तू
माने॑भ्यः	मानपुत्रेभ्यः	मान के पुत्रों के लिये

इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
विश्वऽजन्या	विश्वस्यजनायत्रीः (विभक्तेरात्वम्)	सब के उत्पन्न करने वालों को
रद	उत्पादय	उत्पन्न कर
मरुत्ऽभिः	मरुद्भिः सह	मरुतों के साथ
शुरुधः	अपः (निघं०४।३)	जलों को
गोऽअग्राः	गावोऽग्राः यासां ताः	गौओं के पीछे रहने वालों को
स्तवानेभिः	स्तूयमानैः	स्तुति किये जाने वालों के साथ
स्तवसे	स्तूयसे	तू स्तुति किया जाता है
देव	हे देव !	हे देव
देवैः	देवैः सह	देवताओं के साथ
विद्याम	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें

इ॒षम्	अन्नम्	अन्न को
वृ॒जन॑म्	बलम्	बल को
जी॒रऽदा॑नुम्	शीघ्रदानशीलताम्	शीघ्र दान देने के स्वभाव को

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! त्वं मरुद्भिः सह मानपुत्रेभ्यः विश्वस्य जनयित्रीः गोअग्रा अपः उत्पादय, हे देव ! (त्वम्) स्तूयमानैर्देवैः सह स्तूयसे, (वयम्) अन्नं बलं शीघ्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ ८ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! मरुतों के साथ आप मान के पुत्रों के ताईं सब के उत्पन्न करने वाले गो प्रधान जलों को उत्पन्न करें, हे देव ! आप स्तुति किये जाने वाले देवताओं के साथ स्तुति किये जाते हो, हम अन्न बल (और) शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ८ ॥

'मान के पुत्र' ऋषि के कुटुम्बी हैं ।

इत्येकोन सप्तत्युत्तरशततमं सूक्तम् ।

ऋ०मं०१सू०१७०

इन्द्रोदेवता, अगस्त्यऋषिः ।

विनियोगोलैङ्गिकः ।

सूक्त का भावार्थ ।

(इन्द्रोक्ति) हमारे लिये न आज हवि है न कल, आगे को कौन जानता है, क्योंकि मनुष्य का चित्त चंचल है और विचारा हुआ भी नष्ट होजाता है ॥ १ ॥ (अगस्त्योक्ति) हे इन्द्र ! हमें क्यों मारना चाहते हो, मरुत भी तो आपके भाई ही हैं उनके साथ अच्छा बर्ताव करो और हमें युद्ध में मत मारो ॥ २ ॥ (इन्द्रोक्ति) हे भाई अगस्त्य ! क्या तुम मित्र होकर हमारा अनादर करते हो, हम तुम्हारा मन जानते हैं तुम हम को हवि नहीं देना चाहते ॥३॥ (अगस्त्योक्ति) ऋत्विज लोग वेदी को सजावें, और वेदी के आगे अग्नि को प्रज्वलित करें, वहां पर हम अमर होने का ज्ञान कराने वाले यज्ञ को करेंगे ॥ ४ ॥ (अगस्त्योक्ति) हे धनपते ! आप धनों के राजा हैं, हे मित्रपते ! आप मित्रों के सब से उत्तम सहायक हैं, हे इन्द्र ! आप मरुतों के साथ एकचित्त होकर हमारी दी हुई हवि को यथाक्रम स्वीकार करें ॥ ५ ॥

इन्द्रोदेवता, बृहतीछन्दः ।८।८।१२।८

ननूनमस्तिनोश्वः कस्तद्वेदयदद्भुतम् । अन्यस्यचित्तमभिसं-

ऋ०मं०१ सू०१७० मं०१ (४७१४)

चरेण्यमुताधीतंविनश्यति ॥ १ ॥

न	न	नहीं
नूनम्	अद्य (आ०को०)	आज
अस्ति	अस्ति	है
नो०	नो	नहीं
श्वः	श्वः	कल
कः	कः	कौन
तत्	तत्	उस को
वेद	जानाति	जानता है
यत्	यत्	जो
अद्भुतम्	नभूतम् (यास्कः)	नहीं हुआ
अन्यस्य	अन्यस्य	दूसरे का

चित्तम्	चित्तम्	चित्त
अभि	अभितः	सब ओर से
सम्ऽचरेण्यम्	चञ्चलम्	चञ्चल
उत	अपि च	और भी
आऽधीतम्	चिन्तितम्	चिन्तन किया हुआ
वि	वि+	-
नश्यति	वि+नश्यति	नष्ट होता है

संस्कृतार्थः ।

नाद्यास्ति न श्वः, यद् न भूतं तत् को जानाति, अन्यस्य चित्तं सर्वतश्चञ्चलम् (अस्ति) चिन्तितमपि विनश्यति ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

न आज है न कल, जो नहीं हुआ है उसको कौन जानता है, दूसरे का चित्त चञ्चल (है) और चिन्तन किया हुआ भी नष्ट हो जाता है ॥ १ ॥

ऋ०मं०१ सू०१७० मं०२ (७०११)

अगस्त्य ऋषि को हृदय विक्षेप होता है कि जो हवि मैंने इन्द्र के लिये तैय्यार करके मरुतों को देदी उस पर सब की हवि की कामना करने वाले इन्द्र रुष्ट होकर कहते हैं :—

कि हमारे लिये आज भी हवि नहीं है और कल भी नहीं फिर आने की कौन जानता है, क्योंकि मनुष्य का चित्त चञ्चल है और विचारा हुआ भी नष्ट हो जाता है ॥

इन्द्रोदेवता, अनुष्टुप्छन्दः ।८।८।८।८

किंनइन्द्रजिघांससि भ्रातरो
मरुतस्तव । तेभिःकल्पस्वसाधुया
मानःसमरणेवधीः ॥२॥

किम्	किम्	क्या
नः	अस्मान्	हम को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
जिघांससि	हन्तुमिच्छसि	तू मारने की इच्छा करता

भ्रात॑रः	भ्रातरः	भाई
म॒रुत॑ः	मरुतः	मरुत
तव॑	तव	तेरे
तेभि॑ः	तैः सह	उनके साथ
क॒ल्प॒स्व॒	विहर	विहार करो
सा॒धु॒ऽया	साधुरीत्या	भले प्रकार से
मा	मा	मत
न॒ः	अस्मान्	हम को
स॒म्ऽअ॑रणे	सङ्ग्रामे (निघं० २।१७)	युद्ध में
व॒धी॒ः	विनाशय	मार

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! किमस्मान् हन्तुमिच्छसि, मरुत

अगस्त्य ऋषि को हृदय विक्षेप होता है कि जो हवि मैंने इन्द्र के लिये तैय्यार करके मरुतों को देदी उस पर भक्त की हवि की कामना करने वाले इन्द्र रुष्ट होकर कहते हैं :—

कि हमारे लिये आज भी हवि नहीं है और कल भी नहीं फिर आने की कौन जानता है, क्योंकि मनुष्य का चित्त चञ्चल है और विचारा हुआ भी नष्ट हो जाता है ॥

इन्द्रोदेवता, अनुष्टुप्छन्दः ।८।८।८।८

किंन॑इन्द्रजिघांससि॒ भ्रात॑रो
म॒रुत॒स्तव॑ । तेभि॑ःकल्पस्वसाधु॒या
मान॑ःस॒मर॑णेवधीः ॥२॥

किम्	किम्	क्या
न॒ः	अस्मान्	हम को
इ॒न्द्र॒	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
जि॒घां॒स॒सि॒	हन्तुमिच्छसि	तू मारने की इच्छा करता

भ्रात॑रः	भ्रातरः	भाई
म॒रुतः॑	मरुतः	मरुत
तव॑	तव	तेरे
तेभिः॑	तैः सह	उनके साथ
क॒ल्प॒स्व॒	विहर	विहार करो
सा॒धु॒ऽया	साधुरीत्या	भले प्रकार से
मा	मा	मत
न॒ः	अस्मान्	हम को
स॒म्ऽअ॒र॑णे	सङ्ग्रामे (निघं० २।१७)	युद्ध में
व॒धीः॒	विनाशय	मार

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! किमस्मान् हन्तुमिच्छसि, मरुतः

स्तव भ्रातरः (सन्ति) तैः सह साधुरीत्या विहर, अस्मान् सङ्ग्रामे न विनाशय ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! क्या हमें मारने की इच्छा करते हो, मरुत आप के भाई (हैं) उनके साथ भली प्रकार से विहार करो, हमें युद्ध में मत मारो ॥२॥

अगस्त्य का मन कहता है कि मैंने जो मरुतों को हवि देने की इच्छा की है इस में क्या हानि है, इस लिये यह वाक्य इन्द्र के ताईं कहते हैं ॥

इन्द्रोदेवता, अनुष्टुप्छन्दः ।८।८।८।८

किंनोभ्रातरगस्त्य सखासन्नतिमन्यसे । विद्माहितेयथामनोऽस्मभ्यमिन्नदित्ससि ॥ ३ ॥

किम्	किम्	क्या
नः	अस्मान्	हम को

भ्रा॒त॒ः	हे भ्रातः !	हे भाई
अ॒ग॒स्त्य॒	हे अगस्त्य !	हे अगस्त्य
सखा॑	सखा	मित्र
सन्	सन्	हुआ २
अति॑	अति+	–
म॒न्य॒से॒	अति+मन्यसे, अनादृयसे	तू अनादर करता है
वि॒द्म	जानीमः	हम जानते हैं
हि	खलु	सचमुच
ते॒	तव	तेरा
यथा॑	यथा	जैसे
मन॑ः	मनः	मन

अस्मभ्यम्	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
इत्	(पूरणः)	–
न	न	नहीं
दित्ससि	दातुमिच्छसि	तू देने की इच्छा करता है

संस्कृतार्थः ।

हे भ्रातरगस्त्य ! किं सखासन् अस्माननादरयसे, जानीमः खलु (वयम्) यथा तव मनः (अस्ति) (त्वम्) अस्मभ्यं दातुंनेच्छसि ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

हे भाई अगस्त्य ! क्या मित्र हो कर हमारा अनादर करते हो ? हम सचमुच जानते हैं जैसे तुम्हारा मन (है) त हमें देना नहीं चाहता ॥३॥

अगस्त्य को आत्मा कहती है कि मैंने अवश्य इन्द्र का अनादर किया है इस लिये इस मंत्र को इन्द्र के मुख में डालते हैं ॥

इन्द्रोदेवता, अनुष्टुप्छन्दः । ऽ।ऽ।ऽ।ऽ

अरं कृण्वन्तु वेदिं समग्निमिन्ध-

तांपुरः । तत्रामृतस्यचेतनं यज्ञंते
तनवावहै ॥ ४ ॥

अरम्	अरम्+	–
कृण्वन्तु	अरम्+कृण्वन्तु, अलङ्कुर्वन्तु	सजावें
वेदिम्	वेदिम्	वेदी को
सम्	सम्+	–
अग्निम्	अग्निम्	अग्नि को
इन्धताम्	सम्+इन्धताम्, प्रज्वालयन्तु	प्रदीप्त करें
पुरः	पुरस्तात्	आगे
तत्र	तत्र	वहाँ
अमृतस्य	अमृतस्य	अमृत के

चेतनम्	प्रज्ञापकम्	ज्ञान कराने वाले को
यज्ञम्	यज्ञम्	यज्ञ को
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
तनवावहै	तनवावहै	हम दोनों फैलावें

संस्कृतार्थः ।

(ऋत्विजः) वेदिमलङ्कुर्वन्तु, पुरस्तादग्निम् (च) प्रज्वालयन्तु, (आवां पत्नीयजमानौ) तत्राऽमृतस्य प्रज्ञापकं यज्ञं तुभ्यं तनवावहै ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

(ऋत्विज) वेदी को सजावें, (और) आगे अग्नि को प्रदीप्त करें हम (पत्नी यजमान) वहां अमृत के ज्ञान कराने वाले यज्ञ को आपके लिये फैलावें ॥४॥

अब अगस्त्य हृदय विक्षेप की शांति के लिये यज्ञ की तैयारी करते हैं जिस से इन्द्र प्रसन्न हों ॥

इन्द्रो देवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।११।१०।३१।११

त्वमीशिषे वसुपते वसूनां त्वंमि-

त्राणां॑मित्रप॑ते॒धेष्ठः॑ । इन्द्र॒त्वंम॒-रु॒द्भिः सं॑व॒दस्वाऽध॒प्राशा॑नऋतु॒थाह॒-वीं॑षि ॥ ५ ॥

त्वम्	त्वम्	तू
ई॒शि॒षे॒	राजाऽसि	राजा है
व॒सु॒ऽप॒ते॒	हे धनपते !	हे धनों के स्वामी
वसू॑नाम्	धनानाम्	धनों का
त्वम्	त्वम्	तू
मि॒त्राणा॑म्	मित्राणाम्	मित्रों का
मि॒त्र॒ऽप॒ते॒	हे मित्रपते !	हे मित्रोंके स्वामी
धेष्ठ॑ः	धारकतमः	सब से उत्तम धारण करने-वाला

ऋ०मं०१ सू०१७० मं०५ (७७२४)

इन्द्र॑	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
त्वम्	त्वम्	तू
म॒रुत्ऽभि॑ः	मरुद्भिः	मरुतों से
सम्	सम्+	–
व॒द॒स्व॒	सम्+वदस्व, एक चित्तोभव	एक चित्त वाला हो
अध॑	अनन्तरम्	फिर
प्र	प्र+	–
अ॒शा॒न॒	प्र+अशान, भक्षय	भक्षण कर
ऋ॒तु॒ऽथा	यथाक्रमम्	यथाक्रम
ह॒वींषि॑	हवींषि	हवियों को

संस्कृतार्थः।

हे धनपते ! त्वं धनानां राजाऽसि, हे मित्रपते त्वं मित्राणां धारकतमः (असि) हे इन्द्र ! त्वं

मरुद्भिः (सह) एकचित्तोभव, अनन्तरं यथाक्रमं हवींषि भक्षय ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे धनपति ! आप धनों के राजा हैं, हे मित्रपति ! आप मित्रों के सब से उत्तम धारने वाले हैं, हे इन्द्र ! आप मरुतों के साथ एक चित्त वाले हों, फिर यथाक्रम हवियों को खावें ॥ ५ ॥

यज्ञ में वा दूसरे किसी लौकिक कर्म में हृदय विलेख का अनादर करने से मनुष्य पतित होता है, इस को दूर करने के लिये काया के परिश्रम वा धन के व्यय का संकोच न करे, यह शिक्षा इस सूक्त से मिलती है ॥

इति सप्तत्युत्तरशततमं सूक्तम् ।

ऋ० मं० १ सू० १७१

मरुतोदेवता, अगस्त्यऋषिः ।

विनियोगोलैङ्गिकः ।

सूक्त का भावार्थ ।

हे मरुतो ! मैं इस नमस्कार के द्वारा आप के पास आता हूं और इस सूक्त के द्वारा आप वेगवालों की दयाबुद्धि को मांगता हूं, चतुराई से क्रीड़ा करते हुए आप क्रोध को दूर करो और घोड़ों को खोल कर रथ से उतरो ॥ १ ॥ हे मरुतो नमस्कार से युक्त यह स्तोत्र मेरे हृदय से रचा हुआ और मन से धारण किया हुआ है, इस को मन द्वारा प्रेम से स्वीकार करते हुए आप समीप आवें, आप सचमुच भक्ति के बढ़ाने वाले हैं ॥ २ ॥ स्तुति किये हुए मरुत हम पर कृपा करें, इन्द्र स्तुति किये जाकर हम को अत्यन्त शान्ति के देने वाले हों, हे मरुतो ! हमारे सब दिन प्रेम करने योग्य, रमणीय, उच्च और जयप्राप्ति कराने वाले हों ॥ ३ ॥ हे मरुतो ! मैं इस बलवान इन्द्र के भय से भागता हुआ कांपता हूं, इसलिये जो हवियां आप के लिये तैय्यार की थीं उन को दूर करना पड़ा, आप हम पर क्षमा करो ॥ ४ ॥ हे वीर इन्द्र ! जिस आप के बल द्वारा हम मान के पुत्र नित्य खिलने वाली उषाओं में आप का प्रातःकाल ध्यान करते हैं वह उग्र और बल के देने वाले आप भयानक मरुतों के साथ हम को यश प्रदान करो ॥ ५ ॥ हे इन्द्र ! जयशील आप इन अत्यन्त बुद्धिमान मरुतों से क्रोध को दूर करें और उन बलवान वीरों को संभालते हुए उन की रक्षा करें, हम आप की कृपा से अन्न बल और शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ६ ॥

मरुतोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

प्रतिवएनानमसाहमेमि सूक्ते-
नभिक्षेसुमतिंतुराणाम् । रराणता-
मरुतोवेद्याभि निहेळोधत्तविमुच-
ध्वमश्वान् ॥ १ ॥

प्रति	प्रति	की ओर
वः	युष्मान्	तुम को
एना	अनेन	इस से
नमसा	नमस्कारेण	नमस्कार से
अहम्	अहम्	मैं

ऋ०मं०१ सू०१७१।मं०१ (४०२८)

एमि	आगच्छामि (आङोलोपः)	आंता हूं
सुऽउक्तेन	सूक्तेन	सूक्त से
भिक्षे	याचे	मांगता हूं
सुऽमतिम्	दयाबुद्धिम्	दयावाली बुद्धि को
तुराणाम्	वेगवताम्	वेगवानों की
रराणता	रममाणाः	क्रीड़ा करते हुए
मरुतः	हे मरुतः!	हे मरुतो
वेद्याभिः	चातुर्यैःसह	चतुराइयों के साथ
नि	नि+	–
हेळः	क्रोधम् (निघं०)	क्रोध को
धत्त	नि+धत्त,अधः-स्थापयत,निवारयतेत्यर्थः	दूर करो

वि	वि+	-
मुचध्वम्	वि+मुचध्वम्, विमोचयत	छोड़ो
अश्वान्	अश्वान्	घोड़ों को

संस्कृतार्थः ।

हे मरुतः ! अहमनेन नमस्कारेण युष्मान् प्रति आगच्छामि (अनेन) सूक्तेन (च) वेगवताम् (युष्माकम्) दयाबुद्धिं याचे, चातुर्यैःसहरममाणाः(यूयम्) क्रोधं निवारयत, (रथेभ्यः) अश्वान् (च) विमोचयत ॥ १ ॥

भाषार्थ ।

हे मरुतो ! मैं इस नमस्कार के द्वारा आप के पास आता हूँ (और इस) सूक्त के द्वारा (आप) वेगवानों की दयाबुद्धि को मांगता हूं, आप चतुराई से क्रीड़ा करते हुए क्रोध को दूर करो (और रथों से) घोड़ों को छोड़ो ॥ १ ॥

मरुतोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

एषवःस्तोमोमरुतोनमस्वान्

ऋ०मं०१ सू०१७१ मं०२ (४७३०)

हृदातष्टोमनसाधायिदेवाः। उपेमायातमनसाजुषाणा ययंहिष्ठा
नमसइद्वृधासः॥ २॥

एषः	एषः	यह
वः	युष्माकम्	तुम्हारा
स्तोमः	स्तोमः	स्तोत्र
मरुतः	हे मरुतः	हे मरुतो
नमस्वान्	नमस्कारेणयुक्तः	नमस्कार से युक्त
हृदा	हृदयेन	हृदय से
तष्टः	रचितः	रचा गया
मनसा	मनसा	मन से

धा॒यि॒	अधायि	धारण किया गया
दे॒वा॒ः	हे देवाः !	हे देवो
उप॑	उप+	–
ई॒म्	(पूरणः)	–
आ	आ+	–
या॒त॒	उप+आ+यात, (अस्मत्-)समीप- मागच्छत	(हमारे) पास आओ
मन॑सा	मनसा	मन से
जु॒षा॒णाः	प्रेम्णास्वीकुर्वन्तः	प्रेम से स्वीकार करते हुए
यू॒यम्	यूयम्	तुम
हि	खलु	सचमुच
स्थ	स्थ	हो

ऋ०मं०१ सू०१७१ मं०३ (४७३२)

नम॑सः	नमस्कारस्य	नमस्कार के
इत्	(पूरणः)	–
वृ॒धास॑ः	वर्धयितारः	बढ़ाने वाले

संस्कृतार्थः ।

हे देवाः ! मरुतः ! नमस्कारेण युक्तः एष युष्माकं स्तोमो (मया) हृदयेन रचितः मनसा (च) धारितोऽस्ति (अतः) मनसा प्रेम्णा स्वीकुर्वन्तः (यूयम्) समीपमागच्छत, यूयं नमस्कारस्य खलु वर्धयितारः स्थ ॥ २ ॥

भावार्थः ।

हे मरुतदेवो ! नमस्कार से युक्त यह आपका स्तोत्र (मेरे) हृदय से रचा हुआ (और) मन से धारण किया हुआ है, (इस लिये) मन द्वारा प्रेम से स्वीकार करते हुए आप पास आवें, आप सचमुच नमस्कार के बढ़ाने वाले हैं ॥ २ ॥

मरुतोदेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।१११।१११।१११

स्तु॒तासो॑नोम॒रुतो॑मृळयन्तु॒

स्तुतोमघवाशम्भविष्ठः। ऊर्ध्वा
नःसन्तुकोम्यावनान्यहानिविश्वा-
मरुतोजिगीषा ॥ ३ ॥

स्तुतासः	स्तुताः	स्तुति किये हुए
नः	अस्मान्	हम को
मरुतः	मरुतः	मरुत
मृळयन्तु	कृपांकुर्वन्तु	कृपा करें
उत	अपिच	और भी
स्तुतः	स्तुतः	स्तुति किया हुआ
मघऽवा	इन्द्रः	इन्द्र

ऋ०मं०१ सू०१७१ मं०३ (४७३४)

शम्ऽभ॑विष्ठः	शान्त्याःभावयितृतमः	अत्यन्त शान्ति के दने वाला
ऊ॒र्ध्वा	उत्कृष्टानि	उत्तम
न॒ः	अस्माकम्	हमारे
स॒न्तु॒	सन्तु	हों
का॒म्या	काम्यानि	कामना करने योग्य
वना॑नि	रमणीयानि	रमणीय
अहा॑नि	दिनानि	दिन
विश्वा॑	सर्वाणि	सब
म॒रु॒तः॒	हे मरुतः !	हे मरुतो
जि॒गी॒षा	जेतव्यानि	जीतन के योग्य

संस्कृतार्थः।

स्तुता मरुतोऽस्मभ्यं कृपां कुर्वन्तु, स्तुत इन्द्रश्चाऽपि शान्त्या भावयितृतमः (अस्तु) हे मरुतः! अस्माकं सर्वाणि दिनानि काम्यानि रमणीयानि उत्कृष्टानि जेतव्यानि (च सन्तु)॥ ३॥

भाषार्थः।

स्तुति किये हुए मरुत हम पर कृपा करें, और स्तुति किये हुए इन्द्र भी अत्यन्त शान्ति के देने वाले (हों) हे मरुतो! हमारे सब दिन कामना करने योग्य, रमणीय, उत्कृष्ट और जीतने के योग्य (हों)॥ ३॥

मरुतोदेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

अ॒स्माद॒हंत॑वि॒षादीष॑माण॒ इ-
न्द्रा॑द्भि॒याम॑रुतो॒रेज॑मानः। यु॒ष्मभ्यं॑
ह॒व्यानिशि॑तान्यास॒न् तान्या॒रेच॑-
कृमामृ॒ळता॑नः॥ ४॥

ऋ०मं०१ सू०१७१ मं०४ (४७३६)

अ॒स्मात्	अस्मात्	इस से
अ॒हम्	अहम्	मैं
त॒वि॒षात्	बलवतः	बलवान् से
ईष॑माणः	पलायमानः	भागता हुआ
इन्द्रा॑त्	इन्द्रात्	इन्द्र से
भि॒या	भीत्या	डर से
म॒रु॒तः॒	हे मरुतः !	हे मरुतो
रेज॑मानः	कम्पमानः	कांपता हुआ
यु॒ष्मभ्य॑म्	युष्मभ्यम्	तुम्हारे लिये
ह॒व्या	हव्यानि	हवियें
निऽशि॑तानि	सम्पादितानि	तैयार की हुईं

आसन्	आसन्	थीं
तानि	तानि	उन को
आरे	दूरे	दूर में
चकृम	कृतवन्तःस्मः	हमने किया है
मृळत	कृपांकुरुत	कृपा करो
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये

संस्कृतार्थः ।

हे मरुतः ! अहमस्माद् बलवत इन्द्रात् पलायमानो भीत्या कम्पमानः(चाऽस्मि) युष्मभ्यं हव्यानि सम्पादितानि आसन् तानि (वयम्) दूरे कृतवन्तः स्मः, (यूयम्) अस्मभ्यं कृपांकुरुत ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे मरुतो ! मैं इस बलवान् इन्द्र से भागता हुआ (और) डर से कांपता (हूं) आपके लिये हवियें तैयार रखो थीं उन को हमने दूर कर दिया है, आप हम पर कृपा करो ॥ ४ ॥

जैसा पिछले सूक्त में वर्णन है, केवल मरुतों के लिये हवि तैय्यार करने से ऋषि को हृदय विलेख हुआ इस सूक्त में ऋषि ने इन्द्र को मना कर अपनी आत्मा की तुष्टि की इस में मरुतों को मनाते हैं—

इन्द्रोदेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

येनमानासश्चितयन्तउस्रा
व्युष्टिषशवसाशश्वतीनाम्। सनो
मरुद्भिर्वृषभश्रवोधा उग्रउग्रेभिः
स्थविरःसहोदाः ॥ ५ ॥

येन	येन	जिस से
मानासः	मानपुत्राः	मान के पुत्र
चितयन्ते	चिन्तयन्ति	चिन्तन करते हैं

उ॒स्राः	प्रातःकालान्	प्रातःकालों को
विऽउ॑ष्टिषु	(उषसाम्) प्रादुर्भूतिषु	(उषाओं के) खिलने पर
श॑वसा	बलेन	बल से
शश्व॑तीनाम्	नित्यानाम्	सदा होनेवालियों के
सः	सः	वह
न॒ः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
म॒रुत्ऽभि॑ः	मरुद्भिः	मरुतों से
वृ॒ष॒भ॒	हे वीर !	हे बीर
श्र॑वः	यशः	यश को
धा॒ः	धारय	धारण कर
उ॒ग्रः	भयानकः	भयानक
उ॒ग्रेभि॑ः	भयानकैः	भयानकों से

ऋ०मं०१ सू०१७१ मं०६ (५७४०)

स्थवि॑रः	पुरातनः	प्राचीन
स॒हः॒ऽदाः	बलप्रदः	बल के देने वाला

संस्कृतार्थः ।

हे वीर ! (इन्द्र !) येन (तव) बलेन नित्यानाम् (उषसाम्) प्रादुर्भूतिषु मानपुत्राः प्रातःकालान् चिन्तयन्ति (तेन) पुरातनो भयानको बलप्रदः (चत्वम्) भयानकैर्मरुद्भिः सह अस्मभ्यं यशो-धारय ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे बीर (इन्द्र !) (आपके) जिस बल से नित्य होने वाली (उषाओं) के लिखने पर मान के पुत्र प्रातःकालों का चिन्तन करते हैं (उस से) प्राचीन, भयानक और बल के देने वाले आप भयानक मरुतों के साथ हमारे लिये यश को धारण करें ॥ ५ ॥

इन्द्रोदेवता:, त्रिष्टप्छन्दः ।११।११।११।११

त्वं॑प्राहीन्द्रसही॑यसोनॄन् भवा॑

मरुद्भिरवयातहेळाः । सुप्रकेतेभिः
सासहिर्दधानो विद्यामेषं वृजनं जीर-
दानुम् ॥ ६ ॥

त्वम्	त्वम्	तू
पाहि	रक्ष	रक्षा कर
इन्द्र	हे इन्द्र!	हे इन्द्र
सहीयसः	अतिबलवतः	अत्यन्त बलवानों को
नॄन्	नरान्	वीरों को
भव	भव	तू हो
मरुत्ऽभिः	मरुद्भिः	मरुतों के साथ

अवयात-ऽहेळाः	अपगतक्रोधः	क्रोध से रहित हुआ २
सुऽप्रकेतेभिः	सुप्रज्ञानवद्भ्यः ,,	अत्यन्त बुद्धिमानों से
ससहिः	जयशील	जयशील
दधानः	धारयन्	धारण करता हुआ
विद्याम	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इषम्	अन्नम्	अन्न को
वृजनम्	बलम्	बल को
जीरऽदानुम्	शीघ्रदानशीलताम्	शीघ्र दान देने के स्वभाव को

संस्कृतार्थः।

हे इन्द्र ! जयशीलः (त्वम्) सुप्रज्ञानवद्भिः मरुद्भिः (सह) अपगतक्रोधो भव (तान्) अतिबलवतो

वीरान् धारयन् सन् रक्ष (वयम्) अन्नं बलं शीघ्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! जयशील आप अत्यन्त बुद्धिमान मरुतों के सहित क्रोध को दूर करें, (और उन) अत्यन्त बलवान् वीरों को धारण करते हुए रक्षा करें, हम अन्न बल (और) शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥६॥

इत्येकसप्तत्युत्तरशततम सूक्तम् ।

ऋ० मं०१ सू० १७२

मरुतोदेवता, अगस्त्यऋषिः ।

विनियोगोलैङ्गिकः-

सूक्त का भावार्थ।

हे सर्प की कान्ति वाले और कल्याण के देने वाले मरुतो ! आपका आगमन प्रत्यक्ष हो और आपकी रक्षा प्रत्यक्ष हो ॥१॥ हे मंगल के देने वाले मरुतो ! वह आपकी वेग से चलने वाली बर्छी हम से दूर रहे और वह वज्र दूर रहे जिसको आप फेंकते हो ॥२॥ हे शुभ के देने वालो ! तृणस्कन्द की प्रजा को न मारो, और हमारा जीवन उच्च करो ॥ ३ ॥

मरुतोदेवताः, निचृद्गायत्रीछन्दः ।७।८।८।

चि॒त्रोवो॑ऽस्तु॒याम॑श्चि॒त्रऊ॒ती
सु॑दानवः । मरु॑तो॒अहि॑भानवः ॥ १ ॥

चि॒त्रः	प्रत्यक्षः (आ०को०)	प्रत्यक्ष
वः॒	युष्माकम्	तुम्हारा
अ॒स्तु	अस्तु	हो

याम॑ः	आगमनम्	आना
चि॒त्रः	प्रत्यक्षः	प्रत्यक्ष
ऊ॒ती	रक्षा	रक्षा
सु॒ऽदा॒न॒व॒ः	हे कल्याणदानाः ! (यास्कः)	हे कल्याण के देने वालो !
म॑रुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो
अहि॑ऽभा-नवः	हे सर्पद्युतियुक्ताः !	हे सर्प की कान्ति वालो

संस्कृतार्थः ।

हे सर्पद्युतियुक्ताः ! कल्याणदानाः ! मरुतः ! युष्माकमागमनं प्रत्यक्षं रक्षणम् (च) प्रत्यक्षम् (अस्तु) ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

हे सर्प की कान्ति वाले, कल्याण के देने वाले मरुतो ! आपका आगमन प्रत्यक्ष (और) रक्षा प्रत्यक्ष हो ॥ १ ॥

मरुतोदेवताः, गायत्रीछन्दः।८।८।८।

आरेसावःसुदानवो मरुतऋञ्जतीशरुः। आरेअश्मायमस्यथ॥२॥

आरे	दूरे	दूर
सा	सा	वह
वः	युष्माकम्	तुम्हारी
सुदानवः	हे कल्याणदानाः!	हे कल्याण के देने वाले
मरुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो
ऋञ्जती	जवेन प्रचलन्ता	वेग से चलने वाली
शरुः	शक्तिः	बर्छी
आरे	दूरे	दूर

अश्मा	वज्रः	वज्र
यम्	यम्	जिसको
अस्यथ	क्षिपथ	फैंकते हो

संस्कृतार्थः ।

हे कल्याणदानाः ! मरुतः ! सा जवेन प्रचलन्ती युष्माकंशक्तिर्दूरे (भवतु) वज्रः (च) दूरे (भवतु) यं क्षिपथ ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

हे कल्याण के देने वाले मरुतो ! वह आपकी वेग से चलने वाली बर्छी दूर (हो) (और) वज्र दूर (हो) जिसको फैंकते हो ॥ २ ॥

मरुतोदेवताः, गायत्रीछन्दः ।८।८।८।

तृणस्कन्दस्यनुविशः परिवृङ्क्त सु-
दानवः । ऊर्ध्वान्नःकर्तजीवसे ॥३॥

ऋ०मं०१सू०१७२ मं०३ (४७४८)

तृ॒णा॒ऽस्क॒न्दस्य॑	तृणस्कन्दस्य	तृणस्कन्द की
नु	खलु	सचमच
विशः॑	प्रजाः	प्रजाओं को
परि॑	परि +	–
वृ॒ङ्क्त॒	परि + वृङ्क्त, परिवर्जयत	छोड़ दो
सु॒ऽदा॒न॒वः॒	हे कल्याणदानाः!	हे कल्याण के देने वाले
ऊ॒र्ध्वाँन्	ऊर्ध्वान्	ऊपर
नः॒	अस्मान्	हम को
क॒र्त॒	कुरुत	करो
जी॒वसे॑	जीवनार्थम्	जीने के लिये

संस्कृतार्थः ।

हे कल्याणदानाः (मरुतः ! यूयम्) तृणस्कन्दस्य प्रजाः खलु परिवर्जयत, अस्मान् (च) जीवनाथ-मूर्धान् कुरुत ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

हे कल्याण के देने वाले (मरुतो !) सचमुच आप तृणस्कन्द की प्रजाओं को छोड़ दो (और) हम को जीने के लिये उच्च बनाओ ॥ ३ ॥

'तृणस्कन्द' किसी का नाम प्रतीत होता है जो या तो ऋषि का पूर्वज हो या उस समय का राजा हो। छोड़ दो अर्थात् न मारो ॥

इति द्विसप्तत्यधिकशततमं सूक्तम् ।

ऋ० मं०१ सू० १७३

इन्द्रोदेवता, अगस्त्यऋषिः ।

विनियोगः-

१-१३। एतत्सूक्तं समूल्हे दशरात्रे तृतीये छन्दोमे मरुत्वतीयशस्त्रे विनियुक्तम् (आ० ८।७।२३)

सूक्त का भावार्थ ।

उद्गाता पक्षी की न्याईं दिव्य साम को गावे, हम प्रकाश की न्याईं बढ़ते हुए उस सोम का आदर करते हैं, क्योंकि कुशों से ढकी हुई वदी पर इन्द्र की पूजा के लिये हमारी गौओं का जिन को कोई मार नहीं कर सकता दूध तैय्यार है ॥ १ ॥ घोर इन्द्र भूखे हिरण की न्याईं उद्योग करते हुए स्वयं प्रेरण की हुई हविया से 'वीर' ऋत्विजों द्वारा अपना पूजन कराते हैं, हे उद्यमी ! पूजनीय आप स्तुति के उत्सुक हो, इसलिये मनुष्य होता याज्या और अनुवाक्या रूप दो दो स्तुतियां प्रत्येक आहुतिके साथ उच्चारण करता है ॥ २ ॥ होतारूप सूर्य मापे हुए रस्ते से पृथिवी के चारां ओर चलता है और शरद् से पहिले उस में गर्भ को धारण करता है, फिर तो घास को खाता हुआ घोड़ा हिनहिनाता है, गौओं की ओर ले जाया जाता हुआ बैल डकारता है और द्यौ और पृथिवी के बीच में यज्ञ करने वालों की स्तुति की वाणी दूती की न्याईं चलती है ॥ ३ ॥ हमने इन्द्र के लिये रुचिकारक हवियों को तैय्यार किया है, देवभक्त उत्तेजन करने वाले स्तोत्रों को अर्पण करते हैं, अद्भुत तेज वाले इन्द्र जो अश्विनों की न्याईं सहज से चलने वाले और रथ पर बैठने वाले हैं उन हवि और स्तोत्रों को स्वीकार करें ॥ ४ ॥ उस इन्द्र की ही स्तुति करो जो सचमुच बलवान, शूरवीर, धनवान और रथ पर बैठने वाला है,

जो सब योद्धाओं से अधिक योद्धा, नर घोड़ों वाला और जगत को ढकने वाले अन्धकार का नाश करने वाला है ॥ ५ ॥ जो महत्त्व के कारण मनुष्यों से आगे बढ़ा हुआ है उस इन्द्र के लिये द्यौ और पृथिवी कमरचन्द के लिये भी पर्याप्त नहीं हैं, उस स्वतन्त्र ने पृथिवी को अलक की न्याई और द्यौ को मुकुट की न्याईं पहना है ॥ ६ ॥ हे शूरवीर इन्द्र ! जो पृथिव्यादि लोक स्तोता को अन्नों से अनुमोदन करते हैं वे अन्धकार आदि शत्रुओं से लड़ने के लिये सज्जनों के वरने वाले, और सब से लंबी यात्रा करने वाले आप को मद से युक्त करते हैं ॥ ७ ॥ हे इन्द्र ! अन्तरिक्ष में आप के लिये जो सोम की आहुतियां दी जाती हैं यह उन्हीं का कल्याणकारक फल है जो प्रजाओं में दिव्य जल रमण करते हैं, जब आप स्तुति किये जाकर स्तोताजनों को चाहते हो तब सारी वाणी अनुकूलता से आप की सेवा करने वाली होजाती है ॥ ८ ॥ हे स्वामी ! ऐसा करो, जिस प्रकार हम अच्छे मित्र वाले और सुरक्षक से युक्त हों, जैसे मनुष्य मनुष्यों की स्तुति ले होते हैं, और जिस प्रकार आप इन्द्र हमारी स्तुति में ठैरने वाले हों, और जैसी हम स्तुति करते हैं वैसे हमारे कर्म भी शीघ्र हो जावें ॥ ९ ॥ जैसे मनुष्य मनुष्यों की स्तुति से स्पर्धा को त्याग कर स्तुति करने वाले का होजाता है वैसे इन्द्र हमारे हों, जैसे गढ़ के बीच रहने की इच्छा करने वाले लोग अच्छे शासन के लिये नगर के स्वामी को कर देते हैं वैसे मित्र की कामना वाले यज्ञों द्वारा इन्द्र को कर देते हैं ॥१०॥ कई मनुष्य यज्ञ से तो इन्द्र की सेवा करते हैं परन्तु मन से कुटिल हुए २ विचरते हैं, जैसे प्यासे को लंबे रस्ते में जल का स्थान न मिले वैसे वे मनुष्य सिद्धि को नहीं प्राप्त होते । ११ हे बलवान इन्द्र । आप हमें महा युद्धों में न त्यागो । क्योंकि हमने देवताओं में आपके लिये ही हवि का भाग दिया है और हम हवि देने वालों की वाणी आपके प्रिय मरुतों की स्तुति करती है ॥१२॥

ऋ०मं०१।सू०१७३ मं०१ (४७१२)

हे घोड़ों वाले इन्द्र! यह हमारा स्तोत्र आपके लिये है. इससे हमारे लिये कल्याण के मार्ग को प्रदान करो, हे देव ! कल्याण के लिये हमारी ओर फिरो, हम अन्न बल और शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ १३ ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।१२।१२।१२।१२।

गायत्सामनभन्यं१यथावेरर्चा-
मतद्वावृधानंस्वर्वत् । गावोधेनवो
बर्हिष्यदब्धा आयत्सद्मानंदिव्यं
विवासान् ॥ १ ॥

गायत्	गायेत्	गावे
साम	साम	साम को
नभन्यम्	दिव्यम्	दिव्य को
यथा	यथा	जैसे
वेः	पक्षी (प्रथमार्थे षष्ठी)	पक्षी

(७७५१) ऋ०मं०१ सू०१७३ मं०१

अर्चाम	सत्कुर्महे (लडर्थेलोट्)	हम आदर करते हैं
तत्	तत्	उस को
वावृधानम्	वर्धमानम्	बढ़ते हुए को
स्वःऽवत्	प्रकाशवत्	प्रकाश की न्याईं
गावः	गावः	गौएं
धेनवः	दोग्ध्र्यः	दूध देने वालीं
बर्हिषि	बर्हिषि	कुशों पर
अदब्धाः	अहिंसिताः	हिंसा से रहित
आ	आ+	–
यत्	यतः	क्योंकि
सद्मानम्	सीदन्तम्	बैठते हुए को
दिव्यम्	दिव्यम्	दिव्य को

सा०वे०१ [illegible] मं०२ ([illegible])

विवासान्	आ+विवासान्, सर्वतः परिचरन्ति	सब ओर से सेवा करता हैं

संस्कृतार्थः ।

(उद्गाता) पक्षी इव दिव्यं साम गायेत् वयम्) प्रकाशवद् वर्धमानं तत् (साम) सत्कुर्महे, यतोऽहिंसिता दोग्ध्र्यो गावो बर्हिषि सीदन्तं दिव्यम् (इन्द्रम्) सर्वतः परिचरन्ति ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

(उद्गाता) पक्षी की न्याईं दिव्य साम को गावे, हम प्रकाश की न्याईं बढ़ते हुए उस (साम) का आदर करते हैं, क्योंकि हिंसा से रहित दूध देने वाली गौएँ कुशों पर बैठने वाले दिव्य (इन्द्र) की सब ओर से सेवा करती हैं॥ १ ॥

इन्द्रो देवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः। ११।११।१०।११।

अर्चद्वृषावृषभिःस्वेदुहव्यैर्मृगोनाश्नोअतियज्जुगुर्यात्। प्रमन्दयुर्मनांगूर्तहोता भरतेमर्योमिथुनायजत्रः ॥ २ ॥

अर्चत्	अर्चयति	पूजता है
वृषा	वीरः	वीर
वृषऽभिः	वीरैः	वीरों के द्वारा
स्वऽदुष्टु-हव्यैः	स्वप्रेरितैर्हव्यैः	आप प्रेरण की हुई हवियों से
मृगः	हरिणः	हिरन
न	इव	की न्याईं
अश्नः	बुभुक्षितः	भूखा
अति	अति+	–
यत्	यः (विभक्तेर्लुक)	जो
जुगुर्यात्	अति+जुगुर्यात्, अत्यर्थमुद्युङ्क्ते	अत्यन्त उद्यम करता है

ऋ०सं०सू०१७३ मं०२ ([illegible])

प्र	प्र+	–
म॒न्द्यु॒ः	स्तुतिकामः	स्तुति चाहने वाला
म॒नाम्	स्तुतिम्	स्तुति को
गू॒र्त॒	हे उद्यमिन् !	हे उद्यमी
होता॑	होता	होता
भर॑ते	प्र+भरते, अर्पयति	अर्पण करता है
मर्य॑ः	मनुष्यः	मनुष्य
मि॒थु॒ना	मिथुनौ	जोडों का
य॑जत्रः	यजनीयः	पूजने योग्य

संस्कृतार्थः ।

वीरः (इन्द्रः) यः बुभुक्षितो हरिण इव अत्यर्थमुपभुङ्क्ते स्वप्रेरितैर्हठयैर्वीरैः (ऋत्विग्भिरात्मानम्) अर्पयति, हे उद्यमिन् ! यजनीयः (त्वम्) स्तुति-

कामः (अस्ति) (अतः) मनुष्योहोता स्तुतिमिथुनौ प्रभरते ॥ २ ॥

भाषार्थ ।

वीर (इन्द्र) जो भूखे हरिण की न्याईं अत्यन्त उद्योग करते हैं स्वयं प्रेरित की हुई हवियों से वीर (ऋत्विजों) द्वारा (अपने को) पूजते हैं, हे उद्यमी ! पूजनीय आप स्तुति के उत्सुक (हो, इसलिये) मनुष्य होता स्तुति के जोड़ों को अर्पण करता है ॥२॥

आशय यह है कि इन्द्र यज्ञ और स्तुति के अत्यन्त उत्सुक हैं और मनुष्य उन्हीं की प्रेरणा से हवि और स्तुति को अर्पण करते हैं, यदि वह यज्ञ और स्तुति से उदासीन हों तो कोई यज्ञ और स्तुति को न करे ॥

स्तुति के जोड़े अनुवाक्या और याज्या जो हवि देने से पूर्व पढ़े जाते हैं ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।६१।

नक्षद्धोतापरिसद्ममितायन् भरद्गर्भमाशरदःपृथिव्याः । क्रन्ददश्वोनयमानोरुवद्गौरन्तर्दूतोनरोदसीचरद्वाक् ॥ ३ ॥

ऋ०मं०१ सू०१७३मं०२ ([illegible])

नक्षत्	गच्छति	चलता है
होता	होता	होता
परि	परि+	–
सद्म	स्थानम्	स्थान को
मिता	मितम् (विभक्तेरात्वम्)	मापे हुए को
यन्	परि+यन्, परिगच्छन्	चारों ओर घूमता हुआ
भरत्	धारयति	धारण करता है
गर्भम्	गर्भम्	गर्भ को
आ	(मर्य्यादायाम)	तक
शरदः	शरदः	शरद से
पृथिव्याः	पृथिव्याम् (सप्तम्यर्थे षष्ठी)	पृथिवी में

क्रन्दत्	क्रन्दति	हिन हिनाता है
अश्वः	अश्वः	अश्व
नयमानः	नीयमानः	लेजाया जाता हुआ
रुवत्	रौति	डकारता है
गौः	वृषभः	बैल
अन्तः	मध्ये	बीच
दूतः	दूतः	दूत
न	इव	की न्याईं
रोदसी॰	द्यावापृथिव्योः	द्यौ और पृथिवी के
चरत्	विचरति	विचरती है
वाक्	वाक्	वाणी

संस्कृतार्थः ।

होतृरूप (सूर्यः) मितं स्थानं परिक्रमन् (सन्) गच्छति, (सः) शरदः प्राक् पृथिव्यां गर्भं धारयति, (तदा) अश्वः क्रन्दति, नीयमानः वृषभः (च) रौति, द्यावापृथिव्योर्मध्ये दूत इव वाग्विचरति ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

होतारूप (सूर्य) नापे हुए स्थान के चारों ओर घूमता हुआ चलता है, वह शरद से पहले पृथिवी में गर्भ को धारण करता है, (तब) घोड़ा हिनहिनाता है और लेजाया जाता हुआ बैल डकारता है (और) द्यौ और पृथिवी के बीच दूत की न्याईं वाणी विचरती है ॥ ३ ॥

वाणी से प्रयोजन स्तुति की वाणी का हो सकता है जिसको यज्ञ करने वाले हवि के साथ उच्चारण करते हैं वही देवता और मनुष्यों के बीच में दूत का काम करती हुई फिरती है ॥

इन्द्रो देवता,विराट्स्थानाछन्दः।२।११।२।११

ताकर्माऽषतराऽस्मै प्रच्यौत्नानिदेवयन्तोभरन्ते । जुजोषदिन्

(४७४१) ऋ०४।०१ य०।१७।४०७

न्द्रोदस्मवर्चा नासत्येवसुग्म्योरथेष्ठाः ॥ ४ ॥

ता	तानि	उन को
कर्म	कृतवन्तः स्मः (लुङिच्लेर्लुक्)	हमने किया है
अषऽतरा	रुचिरतराणि	अधिक रुचि के योग्यों को
अस्मै	अस्मै	इस के लिये
प्र	प्र+	–
च्यौत्नानि	उत्तेजकानि (आ०को०)	उत्तेजन करने वालों को
देवऽयन्तः	देवकामाः	देव भक्त
भरन्ते	प्र+भरन्ते, अर्पयन्ति	अर्पण करते हैं
जुजोषत्	स्वीकरोतु	स्वीकार करे

इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र
दस्मऽवर्चाः	अद्भुततेजाः	अद्भुत तेज वाला
नासत्या ऽइव	असत्यरहितौ (अश्विनौ) इव	अश्विनों की न्याईं
सुग्म्यः	अनायासेन गन्ता	सहज से चलने वाला
रथेऽस्थाः	रथस्थायी	रथपर ठैरनेवाला

संस्कृतार्थः ।

(वयम्) अस्मै (इन्द्राय) तानि (हवींषि) रुचिरतराणि कृतवन्तःस्मः, देवकामाः उत्तेजकानि स्तोत्राणि अर्पयन्ति, अश्विनाविव अनायासेन गन्ता रथस्थायी (च) अद्भुततेजा इन्द्रः (एतानि) स्वीकरोतु ॥ ४ ॥

भावार्थः ।

हमने इस (इन्द्र) के लिये उन हवियों को अधिक रुचि के योग्य बनाया है, देवभक्त उत्तेजक

स्तोत्रों को अर्पण करते हैं,(वह) अश्विनों की न्याईं सहज से जाने वाले(और)रथ पर ठैरने वाले अद्भुत तेजस्वी इन्द्र (इन को) स्वीकार करें ॥ ४ ॥

इन्द्रोदेवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः।११।१०।११।११।

तमुष्टुहीन्द्रंयोहसत्वा यःशूरोमघवायोरथेष्ठाः। प्रतीचश्चिद्योधीयान्वृषण्वान् ववव्रुषश्चित्तमसोविहन्ता ॥ ५॥

तम्	तम्	उस को
ऊम्०	एव	ही
स्तुहि	स्तुहि	स्तुति कर
इन्द्रम्	इन्द्रम्	इन्द्र को

ऋ०सं०१८०१७२ मं०५ (४७६४)

यः	यः	जो
ह॒	खलु	सचमुच
सत्वा॑	सत्त्ववान्	बलवान्
यः	यः	जो
शूरः	शूरः	वीर
म॒घऽवा॑	धनवान्	धनवान्
यः	यः	जो
र॒थे॒ऽस्थाः	रथस्थायी	रथ पर ठैरने वाला
प्र॒ती॒चः	अभिमुखंप्राप्नुवतः	सामनेआएहुएसे
चि॒त्	अपि	भी
योधी॑यान्	योद्धृतमः	अधिक योद्धा

वृष॑ण्ऽवान्	नराश्वेनोपेतः	नर घोड़े से युक्त
व॒व्रु॒ष॑ः	आवरकस्य	ढकने वाले के
चि॒त्	अपि	भी
तम॑सः	अन्धकारस्य	अन्धकार के
वि॒ऽह॒न्ता	विनाशकः	नाश करने वाला

संस्कृतार्थः।

(हे आर्य्यगण ! त्वम्) तमिन्द्रमेव स्तुहि यः खलु सत्ववान् यः शूरो धनवान् रथस्थायी (चाऽस्ति) (यः) अभिमुखं प्राप्नुवतोऽपि योद्धृतमः, नराश्वोपेतः, आवरकस्यापि अन्धकारस्य विनाशकः (चाऽस्ति) ॥ ५ ॥

भाषार्थः।

(हे आर्य्यगण !) उस इन्द्र की ही स्तुति करो जो सचमुच बलवान् जो बीर धनवान् (और रथ पर ठैरने वाला है) (जो) सामने आए हुओं से भी अधिक योद्धा, नर घोड़े से युक्त, और ढकने वाले अन्धकार का भी नष्ट करने वाला है ॥५॥

ऋ०मं०१ सू०१७३ मं०६ (४७८६)

इन्द्रोदेवता,त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

प्रयदित्थामहिनानृभ्यो अस्त्यरंरोदसीकक्ष्येनास्मै । संविव्यइन्द्रोवृजनंनभूमा भर्तिस्वधावाँओपशमिवद्याम् ॥ ६ ॥

प्र	अग्रे	आगे
यत्	यः (विभक्तेर्लुक्)	जो
इत्था	खलु	सचमुच
महिना	महत्त्वेन	महत्त्व से
नृभ्यः	मनुष्येभ्यः	मनुष्यों से
अस्ति	अस्ति	है

अर॑म्	पर्याप्तम्	पर्याप्त (म.दि.)
रोद॑सी०	द्यावापृथिव्यौ	द्यौ और पृथिवी
क॒क्ष्ये॒०	कटिबन्धने	कमरबन्द में
न	न	नहीं
अ॒स्मै॒	अस्मै	इस के लिये
सम्	सम्+	–
वि॒व्ये॒	सम+विव्ये, संवीतवान्	पहना है
इन्द्रः॑	इन्द्रः	इन्द्र ने
वृ॒जन॑म्	अलकम् (मा०को०)	जुल्फ़
न	इव	की न्याईं
भूम॑	भूमिम्	पृथिवी को

भर्ति	धारयति	धारण करता है
स्वधाऽवान्	स्वेच्छावान्	स्वतन्त्र
ओपशम्ऽइव	मुकुटमिव (आ०को०)	मुकुट की न्याईं
द्याम्	द्याम्	द्यौ को

संस्कृतार्थः ।

यः (इन्द्रः) महत्त्वेन मनुष्येभ्यः अग्रे अस्ति तस्मै द्यावापृथिव्यौ कटिबन्धनार्थं न पर्य्याप्ते (स्तः)स्वेच्छावान् इन्द्रो भूमिम् अलकमिव संवीतवान् द्याम् च) मुकुटमिव धारयति ॥ ६ ॥

भाषार्थ ।

जो (इन्द्र) महत्त्व के कारण मनुष्यों से आगे है उस के लिये द्यौ और पृथिवी कमरबन्द के लिये पर्याप्त नहीं (हैं) स्वतन्त्र इन्द्र ने पृथिवी को अलक की न्याईं पहना है,(और वह)द्यौ को मुकुट की न्याईं धारण करते हैं ॥ ६ ॥

इन्द्रोदेवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः।११।६।१।१०।११।

समत्सुत्वाशूरसतामुराणं प्रप-

थिंतमंपरितंसयध्यै। सजोषसइन्द्रं
मदेक्षोणीः सूरिंचिद्येअनुमदन्तिवाजैः ॥ ७ ॥

समत्ऽसु	सङ्ग्रामेषु (निघं०३।१)	युद्धों में
त्वा	त्वाम्	तुझ को
शूर	हे शूर !	हे वीर
सताम्	सताम्	सत्पुरुषों के
उराणम्	वरितारम्	वरने वाले को
प्रपथिन्ऽतमम्	अतिदीर्घयात्रिणम्	अत्यन्त लंबी यात्रा करने वाले को
परिऽतंसयध्यै	अलङ्कुर्वन्ति	सजाते हैं

सऽजोषसः	समानमनस्काः	समान मन वाले
इन्द्रम्	इन्द्रम्	इन्द्र को
मदे	मदाय	मद के लिये
क्षोणीः	पृथिव्यादिलोकाः	पृथिवी आदि लोक
सूरिम्	स्तोतारम् (निघं० ३।१६)	स्तुति करने वाले को
चित्	अपि	भी
ये	ये	जो
अनुऽमदन्ति	अनुमादयन्ति	आनन्दित करते हैं
वाजैः	अन्नैः	अन्नों से

संस्कृतार्थः ।

हे शूर ! समानमनस्काः पृथिव्यादिलोकाः सन्तो

वरितारं अतिदीर्घयायिणम् (च) त्वामिन्द्रं युद्धेषु मदाय अलङ्कुर्वन्ति ये (तव) स्तोतारमपि अन्नैरनुमादयन्ति ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

हे वीर ! पृथिवी आदि लोक एक चित्त वाले (होकर) सत्पुरुषों के वरने वाले (और) अत्यन्त लंबी यात्रा करने वाले आप इन्द्र को युद्धों में मद के लिये सजाते हैं जो आपके स्तोता को भी अन्नों से आनन्दित करते हैं ॥ ७ ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः।१११।१११।१११।

एवाहितेशंसवनासमुद्र आपो-
यत्तआसुमदन्तिदेवीः। विश्वातेअ-
नुजोष्याभूद्गौः सूरींश्चिद्यदिधि-
षावेषिजनान् ॥ ८ ॥

एव	एवम्	ऐसे

हि	एव	ही
ते॒	तव	तेरे
शम्	कल्याणकारिण्यः	कल्याण करने वालीं
सव॑ना	सोमाहुतयः	सोम की आहुतियां
स॒मु॒द्रे	अन्तरिक्षे (निघं० १।३)	अन्तरिक्ष में
आप॑ः	आपः	जल
यत्	यतः	जिस से
ते॒	तव	तेरी
आ॒सु	आसु	इन में
मद॑न्ति	माद्यन्ति	मोद करती हैं
दे॒वीः	देव्यः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	देवियाँ

(४७७२) ऋ०८।०१ सू०१७१ मं०८

विश्वा॑	सर्वा	सारी
ते॒	तुभ्यम्	तेरे लिये
अनु॑	अनु+	–
जोष्या॑	अनु+जोष्या,आनुकूल्येनसेविनी	अनकूलता से सेवा करने वाली
भू॒त्	भवति	होजाती है
गौः	वाक् (निघं० १।११)	वाणी
सू॒रीन्	स्तोतॄन् (निघं० ३।१६)	स्तोताओं को
चि॒त्	(पूरणः)	–
यदि॑	यदा	जब
धि॒षा	स्तुत्या	स्तुति से
वेषि॑	कामयसे	तू कामना करता है

ज॑नान्	मनुष्यान्	मनुष्यों को

संस्कृतार्थः ।

(हे इन्द्र !) एवमेव अन्तरिक्षे तव सोमाहुतयः कल्याणकारिण्यः (सन्ति) यतो देव्यआपः आसु तव (प्रजासु) माद्यन्ति, सर्वा वाणी तुभ्यमानुकूल्येन सेविनी भवति यदा (त्वम्) स्तोतॄन् मनुष्यान् स्तुत्या कामयसे ॥ ८ ॥

भाषार्थः ।

(हे इन्द्र !) ऐसे ही अन्तरिक्ष में आप के सोम की आहुतियाँ कल्याण करने वाली (हैं) जिस से जल देवियाँ इन (आपकी) (प्रजाओं) में मोद करती हैं, सारी वाणी आप के लिये अनुकूलता से सेवा करने वाली हो जाती है जब आप स्तोता मनुष्यों को स्तुति से कामना करते हो ॥ ८ ॥

अन्तरिक्षमें देवता इन्द्र को मानो सोम को आहुतियाँ देते हैं जिस के फल से वर्षा का जल गिरता है ॥

इन्द्रोदेवता,निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः।।११।१०।१३।३१।

असा॑म॒यथा॑सुष॒खायएन स्वभि॒ष्ट॑योन॒रांनशंसैः॑। अस॒द्यथा॑न॒इन्द्रो॑

वन्दनेष्ठास्तुरोनकर्मनयमानउक्था ॥ ८ ॥

असाम	भवेम	हम हों
यथा	यथा	जिस प्रकार
सुऽसखायः	शोभनमित्रोपेताः	अच्छे मित्र वाले
एन	हे स्वामिन् !	हे स्वामी
सुऽअभिष्टयः	सुरक्षकयुक्ताः (आ०को०)	अच्छे रक्षक से युक्त
नराम्	नराणाम्	मनुष्यों की
न	इव	मानो
शंसैः	स्तुतिभिः	स्तुतियों से

ऋ०मं०१ सू०१७३ मं०९ (४७७६)

असत्	भवेत्	हो
यथा	यथा	जिस प्रकार
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र
वन्दनेऽस्थाः	स्तुतिस्थायी	स्तुति पर ठैरने वाला
तुरः	त्वरमाणः	शीघ्रकारी
न	इव	की न्याईं
कर्म	कर्म	कर्म को
नयमानः	प्रापयन्	प्राप्त कराता हुआ
उक्था	स्तुत्या	स्तुति से

संस्कृतार्थः।

हे स्वामिन् ! (तथा कुरु) यथा (वयम्) नराणां

स्तुतिभिरिव शोभनमित्रोपेताः शोभनरक्षकोपेताः(च) भवेम, यथा (च) इन्द्रः अस्मभ्यं स्तुतिस्थायी त्वरमाण इव स्तुत्या कर्म प्रापयन् (च) भवेत् ॥ ९ ॥

भाषार्थ ।

हे स्वामी ! (ऐसा करो) जिस प्रकार हम मनुष्यों की स्तुतियों से मानो अच्छे मित्र (और) सुरक्षक से युक्त हों, जिस प्रकार इन्द्र हमारे लिये स्तुति पर ठैरने वाले (और शीघ्रकारी की न्याइँ स्तुति से कर्म को प्राप्त कराने वाले हों ।९।

अच्छा मित्र और अच्छ रक्षका यहां इन्द्र है जिस को हम स्तुति द्वारा प्राप्त कर सकते हैं ॥

इन्द्रोदेवताः, त्रिराड्त्रिष्टुप्छन्दः ।९।११।११।११।

विष्पर्धसोनरांनशंसैरस्माकासदिन्द्रोवज्रहस्तः । मित्रायुवोनपूर्पतिंसुशिष्टौ मध्यायुवउपशिक्षन्तियज्ञैः ॥ १० ॥

विऽस्प॑र्धसः	स्पर्धारहिताः	स्पर्धा से रहित
न॒राम्	नराणाम्	मनुष्यों की
न	इव	मानो
शंसै॑ः	स्तुतिभिः	स्तुतियों से
अ॒स्माक॑	अस्माकम्	हमारा
अ॒स॒त्	भवेत्	हो
इन्द्र॑ः	इन्द्रः	इन्द्र
वज्र॑ऽहस्तः	वज्रधारी	वज्रधारी
मि॒त्र॒ऽयुव॑ः	मित्रकामाः	मित्रों की कामना वाले
न	इव	जैसे
पःऽप॑तिम्	पुरस्वामिनम्	नगर के स्वामी को

सुऽशिष्टौ	सुशासने	सुन्दर शासन में
मध्यऽयुवः	मध्येऽवस्थितिं कामयमानाः	मध्य में स्थिति की कामना वाले
उप	उप+	-
शिक्षन्ति	उप+शिक्षन्ति, उपेत्य ददति	देते हैं
यज्ञैः	यज्ञैः	यज्ञों के द्वारा

संस्कृतार्थः ।

नराणां स्तुतिभिः स्पर्धारहिताः (मनुष्याः) इव वज्रधारी इन्द्रोऽस्माकं भवेत्, (पुर-)मध्येऽवस्थितिं कामयमानाः यथा सुशासने (निमित्तभूते) पुरपतिम् (उपेत्य ददति) तथा मित्रकामाः यज्ञैः (इन्द्रम्) उपेत्य ददति ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

मनुष्यों की स्तुतियों से जैसे मनुष्य स्पर्धा से रहित (हो जाते हैं) वैसे वज्रधारी इन्द्र हमारे हों, जैसे (पुर के) बीच रहने की इच्छा वाले सुशासन के (निमित्त) नगर के स्वामी को (देते हैं) वैसे मित्रों की कामना वाले यज्ञों द्वारा (इन्द्र को) देते हैं ।१०।

पहिले पाद का यह आशय है कि इन्द्र को अपना बनाने के लिये बहुत से मनुष्य हम से स्पर्धा करते हैं, परन्तु जैसे स्तुति करने से मनुष्य स्तुति करने वाले के पक्षपाती बन जाते हैं वैसे इन्द्र स्पर्धा रहित होकर केवल हमारे बन जावें ॥

इन्द्रो देवता। निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।१०।११।११।११।

य॒ज्ञोहिष्मेन्द्रं॒कश्चि॑दृ॒न्धन् जु॑हुरा॒णश्चि॒न्मन॑सापरि॒यन्। ती॒र्थेनाच्छा॑ता॒तृ॒षा॒णमोको॑ दी॒र्घोनसि॒ध्रमाकृ॑णो॒त्यध्वा॑ ॥ ११ ॥

य॒ज्ञः	यज्ञेन (विभक्तेःसुः)	यज्ञ से
हि	खलु	सचमुच
स्म॒	(पूरणः)	—
इ॑न्द्रम्	इन्द्रम्	इन्द्र को

कः	कः+	–
चि॒त्	कः+चित्	कोई
ऋ॒न्धन्	परिचरन् (निघं०३।४)	सेवा करता हुआ
जु॒हु॒रा॒णः	कुटिलः	कुटिल
चि॒त्	तु	परन्तु
मन॑सा	मनसा	मन से
प॒रि॒ऽयन्	परिगच्छन्	फिरता हुआ
ती॒र्थे	मार्गे	मार्ग पर
न	इव	जैसे
अच्छ॑	प्रति	की ओर
त॒तृषा॒णम्	पिपासायुक्तम्	प्यासे को

ओ॑कः	स्थानम्	स्थान को
दी॒र्घः	दीर्घः	लंबा
न	न	नहीं
सि॒ध्रम्	सिद्धिप्रदम्	सिद्धि देने वाले को
आ	आ +	-
कृ॒णो॒ति॒	आ+कृणोति, समीपमानयति (आ०को०)	समीप लाता है
अध्वा॑	मार्गः	मार्ग

संस्कृतार्थः ।

कश्चिद्यज्ञोखलु इन्द्रं परिचरन् मनसातुकुटिलः (भूत्वा) परिगच्छन् (विद्यते) यथा दीर्घोमार्गः पिपासायुक्तं मार्गे सिद्धिप्रदं स्थानं प्रति नानयति (तथा यज्ञस्तं कुटिलम्, फलं प्रति नानयति) ॥ ११ ॥

भावार्थः ।

कोई यज्ञ से सचमुच इन्द्र की सेवा करता हुआ

परन्तु मनसे कुटिल हुआ फिरता (है) जैसे लंबा मार्ग प्यासे को मार्ग में सिद्धि देने वाले स्थान की ओर नहीं लाता (ऐसे ही यज्ञ उस कुटिल को फल की ओर नहीं लाता) ॥ ११ ॥

इन्द्रोदेवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः।१।१।१०।११।११।

मोषूणइन्द्राऽत्रपृत्सुदेवैरस्ति
हिष्मातेशुष्मिन्नवयाः। महश्चिद्य-
स्यमीळ्हुषोयव्या हविष्मतोमरु-
तोवन्दतेगीः ॥ १२ ॥

मो०	मा (उ इति पूरणः)	मत
सु	(पूरणः)	–
नः	अस्मान्	हम को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र

ऋ०४अ०१६सू०१७मं०१२ (७७८७)

अत्र	अत्र	यहां
पृत्सु	सङ्ग्रामेषु (निघं० २।१७)	युद्ध में
देवैः	देवैः	देवताओं के साथ
अस्ति	अस्ति	है
हि	खलु	सचमुच
स्म	पूरणः)	–
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
शुष्मिन्	हे बलवन् !	हे बलवान्
अवयाः	अवयुज्यपृथक्कृतः(हविर्भागः)	हवि का भाग
महः	महतः	महान् के
चित्	(पूरणः)	–

यस्य॑	यस्य	जिस के
मी॒ळ्हुषः॑	वीर्यवतः	वीर्यवान के
य॒ठ्या	यठ्यान्, कामयमानान्	चाहने वालों को
ह॒विष्म॑तः	हविर्युक्तस्य	हवि से युक्त की
म॒रु॑तः	मरुतः	मरुतों को
वन्द॑ते	पूजयति	पूजती है
गीः	वाणी	वाणी

संस्कृतार्थः।

हे बलवन् ! इन्द्र ! (त्वम्) अत्र सङ्ग्रामेषु अस्मान् मा (त्यज, यतः) देवैः सह तुभ्यम् (अपि हविर्भागोऽस्ति खलु, महतो वीर्यवतो यस्य (तव) इच्छुकान् मरुतो हविर्युक्तस्य (मम) वाणी पूजयति ॥ १२ ॥

भाषार्थः।

हे बलवान् इन्द्र ! (आप) यहां युद्धों में हमें न (त्यागें क्योंकि) देवताओं के साथ आपके

लिये (भी) सचमच हवि का भाग है, महान वीर्यवान जिस (आप) के चाहने वाले मरुतों को (मुझ हविदेने वाले की वाणी पूजती है ॥ १२ ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११

एषस्तोमइन्द्रतुभ्यमस्मे एतेनगातुंहरिवोविदोनः। आनोववृत्याः सुवितायदेव विद्यामेषंवृजनंजीरदानुम् ॥ १३ ॥

एषः	एषः	यह
स्तोमः	स्तोमः	स्तोत्र
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
तुभ्यम्	तुभ्यम्	तेरे लिये

(७७८७) ऋ०मं०१सू०१७३मं०१३

अ॒स्मे०	अस्माकम्	हमारा
ए॒ते॑न	एतेन	इस से
गा॒तुम्	मार्गम्	मार्ग को
ह॒रि॒ऽवः॒	हे अश्वयुक्त !	हे घोड़ों से युक्त
वि॒दः॒	लभस्व	प्राप्त करो
नः॒	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
आ	आ+	-
नः॒	अस्मान्	हम को
व॒वृ॒त्याः॒	आ+ववृत्याः, आवर्तस्व	फिरो
सु॒वि॒ताय॑	कल्याणाय	कल्याण के लिये
दे॒व॒	हे देव !	हे देव

विद्याम	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इषम्	अन्नम्	अन्न को
वृजनम्	बलम्	बल को
जीरदानुम्	शीघ्रदानशील- ताम्	शीघ्र दान देने के स्वभाव को

संस्कृतार्थः ।

हे देव ! अश्वयुक्त ! इन्द्र ! एषोऽस्माकंस्तोमस्तुभ्यम् (अर्पित) एतेनाऽस्मभ्यं मार्गलभस्व कल्याणाय अस्मान् (प्रति) आवर्तस्व, (वयम्) अन्नंबलं शीघ्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ १३ ॥

भाषार्थः ।

हे देव ! हे घोड़ों से युक्त ! इन्द्र ! यह हमारा स्तोत्र आपके लिये (है) इससे हमारे लिये मार्ग को प्राप्त करो, कल्याण के लिये हमारी (ओर) फिरो, हम अन्न बल (और) शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ १३ ॥

मार्ग को प्राप्त करने से यह प्रयोजन है कि हमें कल्याण का रस्ता बताओ अर्थात् हमें कल्याण की ओर प्रेरण करो ।

इति त्रिसप्तत्यधिकशततमं सूक्तम् ।

ऋ०मं०१ सू०१७४।

इन्द्रोदेवता, अगस्त्यऋषिः

विनियोगः–

१-१०। एतत्सूक्तं पृष्ठ्ये षडहे स्तोमवृद्धौ स्तोमातिशंसनार्थं होत्रकैः शंस्तव्यम् (आ०७।१२।२।)

सूक्त का भावार्थ।

हे इन्द्र! आप और जो देवता हैं वे हमारे राजा हैं, हे प्राणवान! आप हमारे वीरों की और हमारी रक्षा करें, आप सत्पुरुषों के पालक धनवान और हमारे तारने वाले हैं, आप सच्चे धन के देने वाले और बल के देने वाले हैं ॥१॥ हे इन्द्र! आप ने निरादर के वचन बोलने वाली दस्युजाति को दीन किया है, जब शरद ऋतु में शरण देने वाले उन के सात गढ़ों को आप ने छिन्न भिन्न किया, हे निर्दोष! आप ने सदा चलने वाले जलों को बहाया और युवा पुरुकुत्स के लिये शत्रु को अधीन किया ॥ २ ॥ हे बहुतों से बुलाए जाने वाले इन्द्र! आप रण में शूरवीरों से रक्षित सेनाओं के नेता बनो और सभ्यता के प्रकाश को प्रेरण करो जो उनके द्वारा फैलता है, आप हमारे घरों में निरन्तर रहने वाली अग्निहोत्र की अग्नि की रक्षा करो जिससे हमारे दर्शपूर्णमास आदि कर्म स्थायी रहें ॥ ३ ॥ हे इन्द्र! आप के यश बढ़ाने के लिए शत्रु आपके वज्र के महत्त्व से मारे जाकर अपने स्थान में सोए, जब आपने युद्ध से जलों को और गौओं को छुड़ाया और घोड़ों पर चढ़ कर साहस से शत्रु के धनों को निःशेष किया ॥ ४ ॥ हे इन्द्र! कुत्स के अगवैया बनो जिस को आप प्यार करते हो, वायु के घोड़े आप को सुखदायी और शीघ्र लाने वाले हों, सूर्य अपने पहिये को समीप लावें और वज्रधारी आप शत्रुओं के सामने जावें

ऋग्वेद् सू०१७४ मं०१ (७४१०)

॥ ५ ॥ हे घोड़ों वाले इन्द्र ! भक्त की प्रेरणा से बढ़े हुए आपने अपने मित्रों के सताने वाले दानहीन दस्युओं को मारा है, जिन्हों ने आप को मनुष्य के साथ रहने वाला मित्र अनुभव कर लिया है उनका वंश इस पृथिवी में सन्तान द्वारा चिरस्थायी बन गया है ॥ ६ ॥ हे इन्द्र ! हृदय में स्तोत्र की प्राप्ति होने पर ऋषि ने आप की स्तुति की है, आप ने दस्यु को पृथिवी पर सुलाया, धनवान इन्द्र ने अग्नि वायु और सूर्य इन तीन विचित्र दानियों को उत्पन्न किया और आर्यों पर अत्याचार करने वाले कुयवाच को मार कर घर में सुलाया ॥ ७ ॥ हे इन्द्र ! आप के सनातन आकाश संबन्धि पराक्रम को सम्प्रदाय के नैरन्तर्य के लिए नए ऋषियों ने प्राप्त करके गाया है, आप ने गढ़ों को तोड़ते हुए की न्याईं नास्तिक जाति को छिन्न भिन्न किया है और देवशून्य निन्दक के शस्त्र को नीचे गिराया है ॥ ८ ॥ हे इन्द्र ! शत्रुओं को कंपाने वाले आप ने घरघराते हुए जलों को बहती हुई नदियों की न्याईं बहाया है, हे शूरवीर ! जब आप ने समुद्र की लांघा तब तुर्वश और यदु को पार लंघाया ॥ ९ ॥ हे इन्द्र ! आप सदा हमारे हो, आप मनुष्य की पीड़ा से अत्यन्त निवृत्त हुए २ उनके रक्षक हो, आप युद्ध के लिए सामने आने वालों से हम को मिलाने वाले हो, हम अन्न को बल को और शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ १० ॥

इन्द्रोदेवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।११।१०।११।३१।

त्वंराजेन्द्रयेचदेवारक्षानॄन्पाह्य-
सुरत्वमस्मान् । त्वंसत्पतिर्मघ-

वा॑न॒स्तरु॑त्र॒स्त्वंस॒त्योवस॑वानःस-
हो॒दाः ॥ १ ॥

त्वम्	त्वम्	तू
राजा॑	राजा	राजा
इ॒न्द्र॒	हे इन्द्र !	हे इन्द्र !
ये	ये	जो
च॒	च	और
दे॒वाः	देवाः	देवता
रक्षा॑	रक्ष	रक्षा करो
नॄन्	नरान्	नरों को
पा॒हि	पाहि	पालो

ऋ०मं०१ सू०१७४ मं०१ (४७१२)

अ॒सु॒र॒	हे प्राणवन्!	हे प्राणवान्!
त्वम्	त्वम्	तू
अ॒स्मान्	अस्मान्	हम को
त्वम्	त्वम्	तू
सत्ऽप॑तिः	सतां पालकः	सत्पुरुषोंकापालक
म॒घऽवा॑	धनवान्	धनवान्
न॒ः	अस्माकम्	हमारा
तरु॑त्रः	तारयिता	तारने वाला
त्वम्	त्वम्	तू
स॒त्यः	सत्यः	सच्चा
वस॑वानः	धनस्य दाता	धन के देने वाला
स॒ह॒ःऽदाः	बलप्रदः	बल के देने वाला

संस्कृतार्थः।

हे प्राणवन् ! इन्द्र ! त्वम् (अस्माकम्) राजा-(असि) येच देवाः (तेऽपिराजानःसन्ति) (सः) त्वमस्मान् पाहि, नरान् (च) रक्ष, त्वं सतांपालको धनवान् अस्माकंतारकः (चाऽसि) त्वं सत्यः धनस्य दाता बलप्रदः (चाऽसि) ॥ १ ॥

भावार्थः।

हे प्राणवान इन्द्र ! आप (हमारे) राजा (हो) और जो देवता हैं (वे भी राजा हैं) (वह) आप हम को पालें (और) नरों की रक्षा करें, आप सत्पुरुषों के पालक धनवान् (और) हमारे तारने वाले (हैं) आप सच्चे धन के देने वाले (और) बल के देने वाले (हैं) ॥ १ ॥

इन्द्रोदेवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।१०।११।११।११

द॒नोविश॑इन्द्रमृ॒ध्रवा॑चः स॒प्तय-
त्पु॒रः॒शर्म॒शार॑दी॒र्द॑र्त्। ऋ॒णोर॒पो
अ॑नव॒द्यार्णा॒ यूने॑वृ॒त्रंपु॑रु॒कुत्सा॑यर-
न्धीः॥ २ ॥

म०८०१ सू०१७४ मं०२ (५७१५)

दन॑ः	दीना अकरोः	तूने दीन किया
विश॑ः	प्रजाः	प्रजाओं को
इ॒न्द्र॒	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
मृ॒ध्रऽवा॑चः	अवमानवचनाः	निरादर के वचन वालियों को
स॒प्त	सप्त	सात को
यत्	यदा	जब
पुर॑ः	पुराणि	गढ़ों का
शर्म॑	शरणयानि	शरण देने वालों को
शा॑रदीः	शरत्सम्बन्धीनि	शरद् से सम्बन्ध रखने वालों को
दर्त्॑	विदारितवानसि (पुरुषव्यत्ययः)	तूने छिन्न भिन्न किया है
ऋ॒णोः	अगमयः	तूने चलाया

अपः	अपः	जलों को
अनवद्य	हे निर्दोष !	हे निर्दोष
अर्णाः	सदा गमनशीलाः	सदा चलने वालों को
यूने	यूने	जवान के लिए
वृत्रम्	शत्रुम्	शत्रु को
पुरुऽकुत्साय	पुरुकुत्साय	पुरुकुत्स के लिए
रन्धीः	अधीनं कृतवानसि	तूने अधीन किया

संस्कृतार्थः ।

हे निर्दोष ! इन्द्र ! (त्वम्) अवमानवचनाः प्रजाः दीनाअकरोः यदा (तेषाम्) शरदतो शरण्यानि सन्त पुराणि विदारितवानसि (त्वम्) सदा गमनशीला अपः प्रवाहितवानसि यूने पुरुकुत्साय (च) शत्रुं वशीकृतवानसि ॥ २ ॥

भाषार्थ ।

हे निर्दोष इन्द्र ! आपने निरादर वचन वाली

प्रजाओं को दीन किया जब (उनके) शरद्‌तु में शरण देने वाले सात गढ़ों को छिन्न भिन्न किया (आपने) सदा चलने वाले जलों को बहाया (और) जवान पुरुकुत्स के लिये शत्रु को अधीन किया ॥२॥

निरादर के वचन बोलने वाली प्रजा दस्युजाति है जिस के गढ़ों को इन्द्र की सहायता से आर्य्यों ने तोड़ा ।

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।१०।११।११।१०

अजावृतइन्द्रशूरपत्नीर्द्यांचये-
भिःपुरुहूतनूनम् । रक्षोअग्निम-
शुषंतूर्वयाणं सिंहोनदमेअपांसिव-
स्तोः ॥ ३ ॥

अज	प्रेरय	प्रेरण करो
वृतः	सेनाः (ऋ०४।१७।९)	सेनाओं को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र

शूरऽपत्नीः	शूरैः पालिताः	वीरों से रक्षा की हुइयों को
द्याम्	प्रकाशम् (भो०को०)	प्रकाश को
च	(पूरणः)	और
येभिः	यैः	जिन से
पुरुऽहूत	हे बहुभिराहूत !	हे बहुतों से बुलाए गए
नूनम्	खलु	सचमुच
रक्षो०	रक्ष	तू रक्षा कर
अग्निम्	अग्निम्	आग को
अशुषम्	उपशमरहितम्	न बुझने वाले को
तूर्वयाणम्	स्पन्दमानम्	गति से युक्त को
सिंहः	सिंहः	सिंह

न	इव	की न्याईं
दमे॑	गृहे	घर में
अपां॑सि	कर्माणि	कर्मों को
वस्तो॑ः	वासयितुम्, स्थायीकर्तुम्	स्थायी बनाने के लिए

संस्कृतार्थः ।

हे बहुभिराहूत! इन्द्र! (त्वम्) शूरैः पालिताः सेनाः प्रेरय, यैः खलु प्रकाशम् वर्धयसि सिंह इव (चास्मत्) गृहे (वर्तमानम्) उपशमरहितं स्पन्दमानमग्निम् (च) कर्माणिस्थायीकर्तुं रक्ष ॥ ३ ॥

भावार्थः ।

हे बहुतों से बुलाए गए इन्द्र! आप वीरों से रक्षा की हुई सेनाओं को प्रेरण करो जिन से प्रकाश को (बढ़ाते हो) (और) सिंह के समान (हमारे) घर में (वर्तमान) न बुझने वाले और गति से युक्त अग्नि को कर्मों की स्थति के लिये रक्षा करो ॥ ३ ॥

तात्पर्य के लिये सूक्त के भावार्थ को देखो।

(४७११) ऋ०मं० सू०१०४ मं०४

इन्द्रोदेवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः।१०।११।११।११

शेषन्नुतइन्द्रसस्मिन्योनौ प्रशस्तयेपवीरवस्यमह्ना । सृजदर्णांस्यवयद्युधागास्तिष्ठद्धरीधृषतामृष्टवाजान् ॥ ४ ॥

शेषन्	अशेरत	सोए
नु	खलु	सचमुच
ते	तव	तेरी
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र !
सस्मिन्	स्वस्मिन्	अपने में
योनौ	स्थाने	स्थान में
प्रऽशस्तये	प्रशंसायै	प्रशंसा के लिए

ऋ०मं०१ सू०१७४ मं०४ (४८००)

पवीरवस्य	वज्रस्य	वज्र के
मह्ना	महत्त्वेन	महत्त्व से
सृजत्	अव + सृजत्, अवासृजः (पुरुषव्यत्ययः)	तू ने छोड़ा है
अर्णांसि	उदकानि	जलों को
अव	+अव	–
यत्	यदा	जब
युधा	युद्धेन	युद्ध से
गाः	गाः	गौओं को
तिष्ठत्	आरूढवानसि (पुरुषव्यत्ययः)	तू चढ़ा है
हरी०	अश्वौ	घोड़ों को
धृषता	धृष्टतया	साहस से
मृष्ट	निःशेषीकृतवान्	निःशेष किया

वाजान्	धनानि (आ०को०)	धनों को

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र! तव प्रशंसायै वज्रस्य महत्त्वेन ते (शत्रवः) स्वस्मिन् स्थाने खलु भृत्वा)अशेरत यदा(त्वम्)युद्धेन उदकानि गाः(च) अवसृष्टवान्, अश्वौ आरूढवान्, धृष्टतया(शत्रु)धनानि (च) निःशेषीकृतवान् ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र! आपको प्रशंसा के लिये वज्र के महत्त्व से वे(शत्रु) सचमुच अपने स्थान में (मरकर) सोए, जब आपने युद्ध से जलों को (और) गौओं को छोड़ा, घोड़ों पर चढ़े (और) साहस से (शत्रु के) धनों को निःशेष किया ॥ ४ ॥

इन्द्रोदेवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।१०।११।११।११

वहकुत्समिन्द्रयस्मिञ्चाक-
न्त्स्यूमन्यूऋज्रावातस्याश्वा। प्रसू-
रश्चक्रंवृहतादभीकेऽभिस्पृधोया-
सिषद्वज्रबाहुः ॥ ५ ॥

ऋ०मं०१सू०१७४मं०५ (४८०२)

वह॑	प्रणय	अगवैया बनो
कुत्स॑म्	कुत्सम्	कुत्स को
इ॒न्द्र॒	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
यस्मि॑न्	यम् (द्वितीयार्थे सप्तमी)	जिस में
चा॒कन्	कामयसे (निघं० ४।३)	तू प्रेम करता है
स्यू॒म॒न्यू॰	सुखप्रदौ (स्यूमकमितिसुखनाम, निघं० ३।६)	सुख देने वाले
ऋ॒ज्रा	शीघ्रगामिनौ	शीघ्र चलने वाले
वात॑स्य	वायोः	वायु के
अश्वा॑	अश्वौ	घोड़े
प्र	प्र +	–
सूर॑ः	सूर्यः	सूर्य
च॒क्रम्	चक्रम्	पहिये को

वृ॒ह॒ता॒त्	आनयतु	लावे
अ॒भीके॑	समीपे (आ०को०)	समीप
अ॒भि	सम्मुखम्	सामने
स्पृधः॑	शत्रून्	शत्रुओं को
या॒सि॒ष॒त्	गच्छतु	जावे
वज्र॑ऽबाहुः	वज्रस्य धारकः	वज्र के पकड़ने वाला

संस्कृतार्थः।

हे इन्द्र ! कुत्सं प्रणय यं कामयसे, वातस्य अश्वौ सुखप्रदौशीघ्रगामिनौ (च भवताम्) सूर्यः चक्रं समीपमानयतु, वज्रस्य धारकः (च) शत्रून्अभिगच्छतु ॥ ५॥

भाषार्थः।

हे इन्द्र ! कुत्स के अगवैया बनो जिससे आप प्रेम करते हो, वायु के घोड़े सुख के देने वाले (और) शीघ्रगामी (हों) सूर्य पहिये को समीप लावें, (और) वज्रधारी शत्रुओं के सामने जावें ॥ ५ ॥

इस मंत्र में ऋषि पर्व वृत्तान्त को साक्षात कर रहे हैं।

इन्द्रोदेवता, निचृत् त्रिष्टुप्छन्दः।१०।११।११.११।

जघन्वाँइन्द्रमित्रेरूञ्चोदप्रवृद्धोहरिवोअदाशून्। प्रयेपश्यन्नर्यमणांसचायोस्त्वयाशूर्तावहमानाअपत्यम्॥ ६ ॥

जघन्वान्	हतवानसि	तूने नाश किया है
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
मित्रेरून्	मित्राणामुद्वेजकान्	मित्रों के सताने वालों को
चोदऽप्रवृद्धः	प्रेरणैःप्रवृद्धः	प्रेरणाओं से बढ़ा हुआ
हरिऽवः	हे अश्वोपेत !	हे घोड़ों वाले
अदाशून्	अदातॄन्	न देने वालों को
प्र	प्र +	–

ये	ये	जिन्हों को
पश्य॑न्	प्र + पश्यन् , दृष्टवन्तः	देखा
अ॒र्य॒मण॑म्	मित्रम् (आ०को०)	मित्र को
सचा॑	सह	साथ
आ॒योः	मनुष्यस्य	मनुष्य के
त्वया॑	त्वया	तुझ से
शू॒र्ताः	दृढीकृताः (आ०को०)	दृढ़ किए गए
व॑हमानाः	धारयन्तः	धारण करते हुए
अप॑त्यम्	सन्ततिम्	सन्तान को

संस्कृतार्थः ।

हे अश्वोपेत ! इन्द्र ! प्रेरणैः प्रवृद्धः (त्वम्) मित्राणामुद्वेजकान् अदातृन् हतवानसि, ये (त्वाम्) मनुष्यस्य सहायकं मित्रमपश्यन् (ते) सन्ततिम् धारयन्तः (सन्तः) त्वया दृढीकृताः (अभवन्) ॥६॥

भाषार्थ ।

हे घोड़ों वाले इन्द्र ! प्रेरणाओं से बढ़े हुए आपने मित्रों के सताने वाले दानहीनों को मारा है, जिन्होंने (तुझ को) मनुष्य के साथ रहने वाला मित्र देखा है वे सन्तान को धारण करते हुए तुझ से स्थिर किये गए हैं ॥ ६ ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः।१०।१०।११।११।

रपत्कविरिन्द्रार्कसातौ क्षांदा-
सायापबर्हणीं कः । करत्तिस्रोम-
घवादानुचित्रा निदुर्योणेकुयवाचंमृ-
धिश्रेत् ॥ ७ ॥

रपत्	आलपितवान्	आलाप किया
कविः	ऋषिः	ऋषि ने
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र !

अ॒र्कऽसा॑तौ	स्तोत्रस्य लाभे (सति)	स्तोत्र की प्राप्ति (होने) पर
क्षाम्	पृथिवीम्	पृथिवी को
दा॒साय॑	दस्यवे	दस्यु के लिए
उ॒प॒ऽब॒र्हणी॑म्	शय्याम्	शय्या को
कः०	कृतवानसि	तू ने किया है
क॑रत्	कृतवान्	किया है
ति॒स्रः	त्रीन्	तीनों को
म॒घऽवा॑	धनवान्	धनवान् ने
दा॑नुऽचित्राः	विचित्रदानिनः	विचित्र दानियों को
नि	नि +	–

दु॒र्यो॒णे	गृहे	घर में
कुय॑वाचम्	कुयवाचम्	कुयवाच को
मृ॒धि	सङ्ग्रामे (सति)	युद्ध (होने) पर
श्रे॒त्	नि + श्रेत्, निश्रायितवान्, स्वापितवानित्यर्थः	सुलाया

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! स्तोत्रस्यलाभे (सति) ऋषिः आलपितवान्, (त्वम्) दस्यवे पृथिवीं शय्यां कृतवानसि, धनवान् (इन्द्रः) त्रीन् विचित्रदानिनः कृतवान्, सङ्ग्रामे (च सति) कुयवाचं (हत्वा) गृहे स्वापितवान् ॥ ७ ॥

भाषार्थ ।

हे इन्द्र ! स्तोत्र की प्राप्ति होने पर ऋषि ने आलाप किया, आपने दस्यु के लिये पृथिवी को शय्या बनाया, धनवान् (इन्द्र) ने तीन विचित्र दानियों को उत्पन्न किया (और) युद्ध होने पर कुयवाच को (मार कर) घर में सुलाया ॥ ७ ॥

तीन विचित्र दानी, अग्नि, वायु और सूर्य होसकते हैं। कुयवाच किसी उपद्रव करने वाले दस्यु का नाम है।

(४८०९) ऋ०मं०१ सू०१७४ मं०८

इन्द्रोदेवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।१०।११

सनातातइन्द्रनव्याआगुः सहोनभोऽविरणायपूर्वीः । भिनत्पुरो नभिदोऽरदेवीर्ननमोवधरदेवस्यपीयोः ॥ ८ ॥

सना	सनातनम्	सनातन को
ता	तम्	उस को
ते	तव	तेरे
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
नव्याः	नव्याः	नवीनों ने
आ	आ +	–
अगुः	आ+अगुः, प्राप्तवन्तः	पाया है
सहः	पराक्रमम्	पराक्रम को

नभ॑ः	आकाश-(सम्बन्धि)	आकाश(सम्बन्धी) को
अवि॑ऽरणाय	अविरत्यै	निरन्तरताके लिए
पू॒र्वीः	सम्प्रदायानाम् (आ० को०, षष्ठयर्थे द्वितीया)	सम्प्रदायों की
भि॒नत्	विदारयन्	तोड़ता हुआ
पु॑रः	पुराणि	गढ़ों को
न	इव	की न्याईं
भिद॑ः	भिन्नवानसि	छिन्न भिन्न किया है
अदे॑वीः	देवशून्याः	नास्तिक (प्रजाओं) को
न॒नम॑ः	अनमयः	तूने झुकाया है
वध॑ः	आयुधम्	शस्त्र को
अदे॑वस्य	देवशून्यस्य	देवशून्य के
पी॒याः	निन्दकस्य (ऋ०१।४७।२)	निन्दक के

संस्कृतार्थः।

हे इन्द्र! तं तव सनातनम् आकाशसम्बन्धि पराक्रमम् सम्प्रदायानामविरत्यै नूतनाः (ऋषयः) प्राप्तवन्तः, (त्वम्) पुराणि विदारयन्निव देवशून्याः (प्रजाः) भिन्नवानसि, देवशून्यस्य निन्दकस्य आयुधम् (च) अनमयः ॥ ८ ॥

भाषार्थः।

हे इन्द्र! आपके उस सनातन आकाश संबंधी पराक्रम को सम्प्रदायों की निरन्तरता के लिये नए (ऋषियों) ने प्राप्त किया है, आपने गढ़ों को तोड़ते हुए की न्याईं नास्तिक (प्रजाओं) को छिन्न भिन्न किया है (और) देवशून्य निन्दक के शस्त्र को नीचे किया है ॥ ८ ॥

'आकाशसम्बन्धी पराक्रम' वृत्रवध होसकता है ॥

इन्द्रोदेवता, विराट् त्रिष्टुप्छन्दः।१०।१०।११।१?

त्वंधुनिरिन्द्रधुनिमती ऋर्णोर-
पःसीरानस्रवन्तीः। प्रयत्समुद्रमति
शूरपर्षि पारयातुर्वशंयदुं स्वस्ति॥९॥

ऋ०मं०१ सू०१७४ मं०९ (४८१२)

त्वम्	त्वम्	तू
धुनि॑ः	कम्पयिता	कंपाने वाला
इ॒न्द्र॒	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
धुनि॑ऽमतीः	रवमतीः	घर घराते हुओं को
ऋ॒णोः	अगमयः, सञ्चालितवानसि	तू ने चलाया है
अ॒पः	अपः	जलों को
सी॒राः	नदीः (निघं० १।१४।)	नदियों को
न	इव	जैसे
स्रव॑न्तीः	प्रवहन्तीः	बहती हुइयों को
प्र	प्र +	–
यत्	यदा	जब
स॒मु॒द्रम्	समुद्रम्	समुद्र को

अति॑	अति+	–
शू॒र	हे शूर !	हे बीर
पर्षि॑	प्र+अति + पर्षि, उल्लङ्घितवान् (व्यत्ययः)	तू ने उलाँघा है
पा॒रय॑	पारितवानसि (व्यत्ययः)	तू ने पार किया है
तु॒र्व॑शम्	तुर्वशम्	तुर्वश को
य॑दुम्	यदुम्	यदु को
स्व॒स्ति	कल्याणपूर्वकम्	कल्याणपूर्वक

संस्कृतार्थः ।

हे शूर ! इन्द्र ! (शत्रूणाम्) कम्पयिता त्वं रववतीरपः प्रवहन्तीर्नदारिव सञ्चालितवानसि, यदा (त्वम्) समुद्रमुल्लङ्घितवान् (तदा) तुर्वशं यदुम् (च) कल्याणपूर्वकं पारितवानसि ॥ ९ ॥

भाषार्थः ।

हे वीर ! इन्द्र ! (शत्रुओं के) कम्पाने वाले आपने घर घरात हुए जलों को बहती हुई नदियों

की न्याईं चलाया है, जब आपने समुद्र को उलाँघा (तब) तुर्वश (और) यदु को पार लंघाया ॥ ९ ॥

तुर्वश और यदु के लिये देखो पृ०९४०

इन्द्रोदेवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।१०।१०।११।११

त्वम॒स्माक॑मिन्द्रवि॒श्वध॑स्या अवृ॒क॑तमोन॒रांनृ॑पा॒ता । सनो॒विश्वा॑सां
स्पृ॒धांस॑हो॒दा वि॒द्यामे॒षंवृ॒जनंजी॒रदा॑नुम् ॥ १० ॥

त्वम्	त्वम्	तू
अ॒स्माक॑म्	अस्माकम्	हमारा
इ॒न्द्र॒	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
वि॒श्वध॑	सर्वदा	सदा

स्याः	स्याः	तू हो
अवृकऽतमः	अहिंसकतमः	नितान्त हिंसा से रहित
नराम्	नराणाम्	मनुष्यों का
नृऽपाता	रक्षकः	रक्षक
सः	सः	वह
नः	अस्मभ्यम्	हम को
विश्वासाम्	सर्वेभ्यः (पञ्चम्यर्थे षष्ठी)	सब से
स्पृधाम्	स्पर्धमानेभ्यः (,, ,,)	युद्ध के लिए सामने आने वालों से
सहःऽदाः	जयप्रदः	जिताने वाला
विद्याम	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इषम्	अन्नम्	अन्न को

वृजनम्	बलम्	बल को
जीरऽदानुम्	शीघ्रदानशीलताम्	शीघ्र दान देने के स्वभाव को

संस्कृतार्थः।

हे इन्द्र ! त्वं सर्वदा अस्माकं भव,(त्वम्) नराणाम् अहिंसकतमो रक्षकः (असि) सः(त्वम्) सर्वेभ्यः स्पर्धमानेभ्य अस्मभ्यं जयप्रदः(असि) (वयम्)अन्नंबलं शीघ्रदान शीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ १० ॥

भावार्थः।

हे इन्द्र! आप सदा हमारे हों, आप मनुष्यों के अत्यन्त हिंसा रहित रक्षक (हैं) वह आप हमको सब युद्ध के लिये सामने आने वालों से जिताने वाले हैं, हम अन्न को, बल को (और) शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ १० ॥

इतिचतुःसप्तत्यधिकशततमं सूक्तम् ।

ऋ० मं० १ सू० १७५

इन्द्रोदेवता, अगस्त्यऋषिः ।

विनियोगः–

१-३ । द्वितीये स्वर सामनिआद्यस्तृचः स्तोत्रियः (आ०८।५।१२)

सूक्त का भावार्थ ।

हे इन्द्र ! आपने पात्र में भरे हुए मदकारक पान की न्याईं महत्त्व को पीया है, इस लिए आप मदसे युक्त हैं, सहस्रोंको जीतने वाला वीर्यवान और वेगयुक्त सोम आप वीर के लिये है ॥१॥ हे इन्द्र! हमारा मद कारक, कामना करने योग्य, वीर्यवान पान आप को ही प्राप्त हो, जो आप बलवान, धन को जिताने वाले, शत्रु की सेना को दबाने वाले और मरण से रहित हैं ॥ २ ॥ हे इन्द्र ! शूरवीर, धन को जीतने वाले और बलवान आप ही युद्धमें मनुष्य के रथ को प्रेरते हैं, आप व्रतहीन दस्यु को ऐसे जलावें जैसे पात्र को ज्वाला से ॥ ३ ॥ हे बुद्धिमान इन्द्र ! ऐश्वर्य को प्राप्त करते हुए आप सूर्य के पहिये को बल से चुरावें और वधरूप कुत्स को वायु के घोड़ों द्वारा शुष्ण के लिये लावें ॥ ४ ॥ हे इन्द्र ! आप का मद अत्यन्त बलवान और आप का संकल्प अत्यन्त यश वाला है, इनको आज्ञा दें कि शत्रु को मारें और धन को प्राप्त करावें ॥ ५ ॥ हे इन्द्र ! जिस प्रकार आप प्यासे के लिये जल की न्याईं प्राचीन स्तोताओं के लिये सुखरूप हुए हो, उस स्तुति को अनुसरण करके मैं आप को बारंबार बुलाता हूं, हम अन्न को बल को और शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ६ ॥

ऋ०मं०१ सू०१७५मं०१ (४८१८)

इन्द्रोदेवता,निचृत्स्कन्धोग्रीवीबृहतीछन्दः ८।१२।७।८

मत्स्यपा॑यिते॒मह॒ः पात्र॑स्येव

हरिवोमत्स॒रोम॑दः । वृषा॑ते॒वृष्ण॒

इन्दु॑र्वा॒जीस॑हस्र॒सात॑मः ॥ १ ॥

मत्सि॑	मादयसि	तू मद से युक्त है
अपा॑यि	अपायि	पीया गया है
ते॒	त्वया (तृतीयार्थे षष्ठी)	तुझ से
म॑हः	महत्त्वम् (आ०को०)	महत्त्व
पा॑त्रस्यऽइव	पात्रस्येव	पात्र का मानो
ह॒रि॒ऽव॒ः	हे अश्वोपेत !	हे घोड़ों से युक्त
म॒त्स॒रः	मदकारकम्	मदकारी

मदः	पानम्	पान
वृषा	वीर्यवान्	वीर्यवान्
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
वृष्णे	वीराय	बीर के लिये
इन्दुः	सोमः	सोम
वाजी	वेगयुक्तः	वेग युक्त
सहस्रसातमः	सहस्रस्य जेता	हजारोंके जीतने वाला

संस्कृतार्थः ।

हे अश्वोपेत ! (इन्द्र !) त्वया पात्रस्य मदकारकं पानमिव महत्त्वमपायि (अतः) माद्यसि, वीर्यवान् वेगयुक्तःसहस्रस्यजेता (च) सोमःतुभ्यं वीराय (एवास्त) ॥१॥

भाषार्थः ।

हे घोड़ों वाले (इन्द्र!) आपने पात्रके मद करने

वाले पान की न्याईं महत्त्व को पीया है (इसलिये) आप मद से युक्त हैं, वीर्यवान् वेगसे युक्त (और) सहस्रों के जीतने वाला सोम आप वीर के लिये (ही है) ॥ १ ॥

इन्द्रोदेवता, अनुष्टुप्छन्दः ।८।८।८।८

आनस्तेगन्तुमत्सरो वृषाम-
दोवरेण्यः । सहावाँइन्द्रसानसिः
पृतनाषाडमर्त्यः ॥ २ ॥

आ	खलु	सचमुच
नः	अस्माकम्	हमारा
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
गन्तु	आ+गन्तु, प्राप्नोतु	आवे

मत्सरः	मदकारकम्	मदकारी
वृषा	वीर्यवत्	वीर्य वाला
मदः	पानम्	पान
वरेण्यः	वरणीयम्	वरने योग्य
सहऽवान्	बलवान्	बल वाला
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र !
सानसिः	धनस्य लब्धा	धनके प्राप्त कराने वाला
पृतनाषाट्	शत्रुसेनायाअभिभविता	शत्रुओं की सेना के दबाने वाला
अमर्त्यः	मरणरहितः	मरण से रहित

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! अस्माक मदकारकं वरणीयं वीर्यवत् (च) पानं तुभ्यं खलु प्राप्नोतु (यस्त्वम्) बलवान्,

धनस्य लब्धा, शत्रुसेनाया अभिभावता, मरण रहितः (चासि) ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! हमारा मद करने वाला, बरने योग्य (और) वीर्य से युक्त पान सचमुच आप को प्राप्त हो, (जो आप) बलवान, धन के प्राप्त कराने वाले, शत्रु की सेना के दबाने वाले (और) मरण से रहित हैं ॥ २ ॥

इन्द्रोदेवता, अनुष्टुप् छन्दः । ८।८।८।८

त्वँहिशूरःसनिता चोदयोमनुषो
रथम् । सहावाँदस्युमव्रतमोषः
पात्रंनशोचिषा ॥ ३ ॥

त्वम्	त्वम्	तू
हि	खलु	सचमुच
शूरः	शूरः	शूरवीर

सनि॑ता	लब्धा	प्राप्त करने वाला
चो॒दय॑ः	प्रेरितवानसि	तूने प्रेरण किय
मनु॑षः	मनुष्यस्य	मनुष्य के
रथ॑म्	रथम्	रथ को
स॒हऽवा॑न्	बलवान्	बलवान
दस्यु॑म्	दस्युम्	दस्यु को
अ॒व्र॒तम्	व्रतरहितम्	नियमसे रहित को
ओष॑ः	दह	तू जला
पात्र॑म्	पात्रम्	पात्र को
न	इव	जैसे
शो॒चिषा॑	ज्वालया	लाट से

संस्कृतार्थः ।

(हे इन्द्र !) शूरः (धनस्य) लब्धा बलवान् (च) त्वं खलु मनुष्यस्य रथं प्रेरितवानसि (त्वम्) ज्वालया पात्रमिव व्रतरहितं दस्युं दह ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

(हे इन्द्र !) सचमुच शूरवीर, धनके प्राप्त करने वाले (और) बलवान् आपने मनुष्य के रथ को प्रेरण किया है, आप नियम से रहित दस्यु को जलाओ जैसे पात्र को ज्वाला से ॥ ३ ॥

"मनुष्य के रथ को प्रेरण किया है" अर्थात् युद्ध में धन को जीतने की शक्ति और शौर्य को मनुष्य ने इन्द्र की सामर्थ्य से ही प्राप्त किया है ॥

इन्द्रोदेवता, विराडनुष्टुप्छन्दः ।८।८।७।७

मु॒षा॒यसूर्यं॑कवे च॒क्रमीशा॑न॒
ओज॑सा । वह॒शुष्णा॑यव॒धं कुत्सं॒
वात॒स्याश्वैः॑ ॥ ४ ॥

(४८२५) ऋ०मं०१ सू०१७५ मं०४

मु॒षा॒य	मुषाण (छन्दसिशायजादेशः)	तू चुरा
सूर्य॑म्	सूर्यसम्बन्धि	सूर्य संबंधी को
क॒वे॒	हे मेधाविन्!	हे बुद्धिमान
च॒क्रम्	चक्रम्	पहिये को
ई॒शा॑नः	ऐश्वर्यं प्राप्नुवन्	ऐश्वर्य को प्राप्त करता हुआ
ओज॑सा	बलेन	बल से
य॑च्छ	प्रापय	तू ला
शुष्णा॑य	शुष्णाय	शुष्ण के लिये
व॒धम्	वधरूपम्	वधरूप को
कुत्स॑म्	कुत्सम्	कुत्स को
वात॑स्य	वायोः	वायु के

ऋ०मं०१ सू०१७५ मं०५ (५८२१)

अश्वैः	अश्वैः	घोड़ों द्वारा

संस्कृतार्थः।

हे मेधाविन् ! (इन्द्र !.) (त्वम्) ऐश्वर्यं प्राप्नुवन् (सन्) सूर्यसम्बन्धि चक्रं बलेन मुषाण, वधरूपं कुत्सम् (च) वायोरश्वैःशुष्णाय प्रापय ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे बुद्धिमान ! (इन्द्र !) ऐश्वर्य को प्राप्त करते हुए आप सूर्य के पहिये को बल से चुरावें, (और) वध रूप कुत्सको वायु के घोड़ों द्वारा शुष्ण के लिये लावें ॥ ४ ॥

‘शुष्ण’ जगत को सुकाने-वाला अकालहै, जिस को नाशकरने के लिए इन्द्र ने सूर्य्य के पहिये को चुराया था अर्थात बादलों द्वारा छिपाया था. इस कर्म में वायु के घोड़े सहायक थे जो समुद्र से बादलों को हांक कर लाए, ओर कुत्स ऋषि भी सहायक थे जिन की प्रार्थना से इन्द्र ने अकाल को दूर किया था ॥

इन्द्रोदेवता, अनुष्टुप्छन्दः।८।८।८।८

शुष्मिन्तमोहितेमदो द्युम्नि-

न्त॑मउ॒तक्रतु॑ः।वृ॒त्र॒घ्नाव॑रिवो॒विदा॑-

मंसी॒ष्ठा॑श्व॒सात॑मः। ५।

शु॒ष्मिन्ऽत॑मः	बलवत्तमः	अत्यन्त बल से युक्त
हि	खलु	सचमुच
ते॒	तव	तेरा
मद॑ः	मदः	मद
द्यु॒म्निन्ऽत॑मः	यशस्वितमः	अत्यन्त यशवाला
उत	च	और
क्रतु॑ः	सङ्कल्पः	संकल्प

वृत्रऽहना	वृत्रस्य घातिनौ	वृत्र के मारने वालों को
वरिवःऽविदा	धनस्य लब्धारौ	धन के प्राप्त करने वालों को
मंसीष्ठाः	अनुजानीहि (लोडर्थेलुङ्)	आज्ञा दो
अश्वऽसातमः	अश्वप्रदः	घोड़ों के देने वाला

संस्कृतार्थः।

(हे इन्द्र !) तव मदो बलवत्तमो सङ्कल्पश्च यशस्वितमः खलु, अश्वप्रदः (त्वम्) वृत्रस्य घातिनौ धनस्य लब्धारौ (च तौ) अनुजानीहि ॥५॥

भाषार्थः।

(हे इन्द्र !) सचमुच आपका मद अत्यन्त बलवान् और संकल्प अत्यन्त यशवाला (है) घोड़ों के देने वाले आप (उन) वृत्रके मारने वाले (और)धनके प्राप्त करने वालों को आज्ञा दें ॥ ५ ॥

इन को मारने वाला मद और धनके प्राप्त करने वाला संकल्प ॥

(४८२१) ऋ०मं०१ सू०१७५ मं०६

इन्द्रो देवता, जगती छन्दः।१२।१२।१२।१२

यथापूर्वेभ्योजरितृभ्यइन्द्र म-
यइवापोनतृष्यतेबभूथ। तामनुत्वा
निविदंजोहवीमि विद्यामेषंवृजनंजी-
रदानुम् ॥ ६ ॥

यथा	यथा	जिस प्रकार
पूर्वेभ्यः	पुरातनेभ्यः	प्राचीनों के लिये
जरितृऽभ्यः	स्तोतृभ्यः	स्तोताओं के लिये
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
मयःऽइव	सुखमिव	सुख की न्याईं
आपः	आपः	जल

न	इव	जैसे
तृष्यते	तृषार्ताय	प्यासे के लिये
बभूथ	अभवः	तू हुआ है
ताम्	ताम्	उस को
अनु	अनुसृत्य	अनुसरण करके
त्वा	त्वाम्	तुझ को
निऽविदम्	स्तुतिम्	स्तुति को
जोहवीमि	पुनःपुनराह्वयामि	बार२ बुलाताहूँ
विद्याम	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इषम्	अन्नम्	अन्न को
वृजनम्	बलम्	बल को

जीरऽदानुम्	शीघ्रदानशीलताम्	शीघ्र दान देने के स्वभाव को

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! (त्वम्) येन प्रकारेण पुरातनेभ्यः स्तोतृभ्यः सुखमिव अभवः यथा तृषार्ताय आपः (भवन्ति) तां स्तुतिमनुसृत्य (अहम्) त्वां पुनःपुनराह्वयामि, (वयम्) अन्नं बलं शीघ्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र! आप जिस प्रकार से प्राचीन स्तोताओं के लिये सुख की न्याईं हुए हो जैसे प्यासे के लिये जल (होते हैं) उस स्तुति का अनुसरण करके मैं आप को बार २ बुलाता हूं, हम अन्न बल (और) शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ६ ॥

इति पञ्चसप्तत्यधिकशततमं सूक्तम् ।

ऋ०मं०१सू०१७६

इन्द्रोदेवता, अगस्त्यऋषिः ।

विनियोगोलैङ्गिकः ।

सूक्त का भावार्थ ।

हे इन्द्र ! हमारे ताईं कल्याण की प्राप्ति के लिये मदयुक्त हूजिए,हे सोम ! वीर्यवान आप इन्द्र में प्रवेश करें, हे इन्द्र ! आप क्रोध से आकुल हुए फिरते हो, परन्तु शत्रु को समीप में नहीं पाते हो ॥ १ ॥ उस इन्द्र में स्तुतियों को प्रवेश करो, जो मनुष्यों में एक है, जिस में हवि का भाग बोया जाता है, वह वीर उसको जौ की न्याईं बहुत करे ॥ २ ॥ हे इन्द्र ! जिस के हाथों में पांचों मनुष्य जातियों के धन हैं, वह आप उस को पहचानो जो हमारे साथ द्रोह करता है और उसको ऐसे मारो मानो आकाश के वज्र से ॥ ३ ॥ हे इन्द्र ! जो आप के लिये सोम नहीं निचोड़ता, उस मनुष्य समुदाय को मारो, जो कठिनता से प्राप्त होने योग्य है, और जिस से आप सुखी नहीं हैं, उस समुदाय का धन हम को दो, क्योंकि स्तुति करने वाला ही धनका अधिकारी है ॥ ४ ॥ हे सोम ! दुगने बढ़े हुए इन्द्र के स्तोत्रों में जिस की लगातार प्रवृत्ति है, आपने उस की सहायता की है, इन्द्र के लिये दौड़ में आपने उसकी अत्यन्त रक्षा की है जो यज्ञों में वेग से युक्त है ॥ ५ ॥ हे इन्द्र ! आप जिस प्रकार प्राचीन स्तोताओं के ताईं प्यासे के लिये जल की न्याईं सुख रूप हुए हो, उस स्तुति का अनुसरण करके मैं आपको बारं बार बुलाता हूं, हम अन्न को बल को और शीघ्र दान करने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ६ ॥

(४८३३) ऋ०मं०१ सू०१७६ मं०१

इन्द्रोदेवता, अनुष्टुप्छन्दः ।८।८।८।८

मत्सिनोवस्यइष्टय इन्द्रमि-
न्दो वृषाविश। ऋघायमाणइन्वसि
शत्रुमन्तिनविन्दसि ॥ १ ॥

मत्सि	मदयुक्तोभव (लोडर्थे लट्)	तू मद से युक्त हो
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिए
वस्यःऽइष्टये	श्रेयप्राप्तये	कल्याण की प्राप्ति के लिए
इन्द्रम्	इन्द्रम्	इन्द्र को
इन्दो०	हे सोम !	हे सोम
वृषा	वीर्यवान्	वीर्यवान

आ	आ +	–
विश	आ+विश,	तू प्रवेश कर
ऋघाय-माणः	कोपाकुलः(सन्	क्रोधसे आकुल (हुआ २)
इन्वसि	चरसि	तू फिरता है
शत्रुम्	शत्रुम्	शत्रुको
अन्ति	निकटे	समीप में
न	न	नहीं
विन्दसि	लभसे	तू लभता है

संस्कृतार्थः।

(हेइन्द्र!)अस्मभ्यं श्रेयः प्रापणये मदयुक्तो भव. हे सोम ! वीर्यवान् (त्वम्) इन्द्रमाविश, हे इन्द्र ! (त्वम्) कोपाकुलः (सन्) चरसि, शत्रुम् (तु) समीपे न लभसे ॥ १ ॥

भावार्थः।

(हे इन्द्र !) हमारे ताईं कल्याण की प्राप्ति के लिये मद से युक्त हूजिए, हे सोम वीर्यवान आप इन्द्र में प्रवेश करें, (हे इन्द्र !) आप क्रोध से व्याकुल हुए हुए फिरते हो, (परन्तु) शत्रु को समीप में नहीं पाते हो॥ १॥

इन्द्रो देवता, अनुष्टुप्छन्दः ८।८।८।८

तस्मिन्नावेशयागिरो यएकश्चर्षणीनाम्। अनुस्वधायमुप्यते यवंनचर्कृषद्वृषा ।२।

तस्मिन्	तस्मिन्	उसमें
आ	आ +	–
वेशय	आ+वेशय,स्थापय	तू स्थापन कर
गिरः	स्तुतीः	स्तुतियों को

यः	यः	जो
एक॑ः	एकः	अकेला
च॒र्ष॒णी॒नाम्	मनुष्याणाम्	मनुष्यों का
अ॑नु	अनुलक्ष्य	लक्ष्य करके
स्व॒धा	हविः (आ०को०)	हवि
यम्	यम्	जिसको
उ॒प्यते॑	उप्यते	बोया जाता है
य॑वम्	यवम्	जौ को
न	इव	जैसे
चर्कृ॑षत्	बहुकरोति	बहुत करता है
वृ॑षा	वीरः	शूरवीर

संस्कृतार्थः ।

तस्मिन् (इन्द्रे) स्तुतीः स्थापय यो मनुष्याणामेकः (अस्ति) यमनुलक्ष्यहविः (रूपमन्नम्)उप्यते (सः) वीरो यवमिव (तत्) बहु करोति ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

उस (इन्द्र) में स्तुतियों को स्थापित करो, जो मनुष्यों में एक (है) जिसको लक्ष्य करके हवि(रूप अन्न) बोया जाता है (वह) शूरबीर जौ की न्याईं (उसको) बहुत करते हैं ॥ २ ॥

इन्द्र के लिये हवि रूप अन्न का अर्पण करना ऐसा है जैसे खेत में जौ का बोना, जिस प्रकार बोया हुआ जौ बहुत होजाता है वैसे हवि देने वाले का अन्न धनादि बढ़ता है ॥

इन्द्रोदेवता, निचृदनुष्टुप्छन्दः ।८।७।८।८

यस्यविश्वानि हस्तयोः पञ्च

क्षितीनांवसु। स्पाशयस्वयोअस्म-

ध्रुग् दिव्येवाशनिर्जहि। ३।

ऋ०मं०१ सू०१७६ मं०३ (४८३८)

यस्य	यस्य	जिसके
विश्वानि	सर्वाणि	सब
हस्तयोः	हस्तयोः	हाथों में
पञ्च	पञ्चानाम् (विभक्तेर्लुक्)	पाँचों के
क्षितीनाम्	मनुष्यजातीनाम् (निघं०)	मनुष्यजातियों के
वसु	धनानि (विभक्तेर्लुक्)	धन
स्पाशयस्व	विजानीहि	पहचान
यः	यः	जो
अस्मऽध्रुक्	अस्मभ्यं द्रुह्यति	हमारे लिये द्रोह करता है
दिव्यऽइव	दिविभवेनइव	द्यौ में होने वाले से जैसे
अशनिः	वज्रेण (तृतीयार्थे प्रथमा)	वज्र से

ज॒हि॒	विनाशय	मारो

संस्कृतार्थः ।

(हे इन्द्र !) यस्य (तव) हस्तयोः पञ्चानां मनुष्यजातीनां सर्वाणि धनानि (सन्ति) (सत्वम्) योऽस्मभ्यं द्रुह्यति (तम्) विजानीहि, दिविभवेन वज्रेणेव (च) विनाशय ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

(हे इन्द्र !) जिस (आप) के हाथों में पांचों मनुष्यजातियों के सम्पूर्ण धन (हैं) (वह) आप जो हमारे लिये द्रोह करता है (उसको) पहचानो (और) ऐसे मारो जैसे आकाश के वज्र से ॥ ३ ॥

इन्द्रोदेवता, अनुष्टुप्छन्दः ।८।८।८।८

असु॑न्वन्तंसमंजहिदू॒णा॒शं॒योन
ते॒म॑यः । अ॒स्मभ्य॑मस्य॒वे॑दनं द॒द्धिसरि॑श्चिदोहते । ४ ।

असुन्वन्तम्	(सोमस्य) अभिषवमकुर्वन्तम्	(सोम) न निचोड़ते हुए को
समम्	सर्वम्	सम्पूर्ण को
जहि	विनाशय	तू मार
दुःऽनशम्	दुःखेनप्रापणीयम्	कठिनतासे प्राप्त होने योग्य को
यः	यः	जो
न	न	नहीं
ते	तव	तेरा
मयः	सुखरूपः	सुखरूप
अस्मभ्यम्	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
अस्य	अस्य	इस के
वेदनम्	धनम्	धन को

दद्धि	देहि (ददाने, व्यत्ययेन परस्मैपदं छान्दसः शपोलुक्)	तू दे
सूरिः	स्तोता	स्तोता
चित्	एव	ही
ओहते	अर्हति	प्राप्त करने योग्य है

संस्कृतार्थः ।

(हे इन्द्र !) अभिषवमकुर्वन्तं सर्वम् (समुदायम्) विनाशय, यो दुःखेन प्रापणीयः तव सुखरूपः (च) न (अस्ति) अस्य (समुदायस्य) धनमस्मभ्यं देहि, (यतः) स्तोता एव (धनम्) अर्हति ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

(हे इन्द्र !) न निचोड़ने वाले सम्पूर्ण (समुदाय) को मारो जो कष्टसे प्राप्त होने वाला (और) आपका सुख रूप नहीं है उस (समुदाय) का धन हमें दो (क्योंकि) स्तुति करने वाला ही (धनको) प्राप्त करने योग्य है ॥ ४ ॥

ऋ०मं०१ सू०१७६ मं० ५ (४८४२)

इन्द्रोदेवता, अनुष्टुप्छन्दः ।८।८।८।८

आवो॒यस्य॑द्वि॒बर्ह॑सो॒ऽर्केषु॑सानु॒षगस॑त् । आ॒जाविन्द्र॑स्येन्दो॒ प्राव॒ो वाजे॑षुवा॒जिन॑म् । ५ ।

आव॑:	साहाय्यं कृतवानसि	तू ने सहायता की है
यस्य॑	यस्य	जिसकी
द्वि॒ऽबर्ह॑सः	द्विगुणंप्रवृद्धस्य	दुगने बढ़े हुए के
अ॒र्के॑षु	स्तोत्रेषु	स्तोत्रों में
सा॒नु॒षक्	सातत्यम्	लगातार प्रवृत्ति
अस॑त्	अस्ति	है
आ॒जौ	धावने	दौड़ में

इन्द्रस्य	इन्द्रार्थम्	इन्द्र के लिये
इन्दो॰	हे सोम !	हे सोम
प्र	प्र +	–
आवः	प्र + आवः, प्रकर्षेण रक्षितवानसि	तूने खूब रक्षा की है
वाजेषु	यज्ञेषु	यज्ञों में
वाजिनम्	वेगवन्तम्	वेग वाले को

संस्कृतार्थः ।

हे सोम ! द्विगुणं प्रवृद्धस्य (इन्द्रस्य) स्तोत्रेषु यस्य सातत्यमस्ति (तस्य) साहाय्यं कृतवानसि, इन्द्रार्थं धावने (त्वम्) यज्ञेषु वेगवन्तं प्रकर्षेण रक्षितवानसि ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे सोम ! दुगने बढ़े हुए (इन्द्र) के स्तोत्रों में जिसकी लगातार प्रवृत्ति है, आपने (उसकी) सहा-

यता की है, इन्द्रके लिये दौड़ में आपने यज्ञों में वेग वाले की अत्यन्त रक्षा की है॥ ५ ॥

जो इन्द्र को प्राप्त होने के लिये दौड़ दौड़ते हैं, उस दौड़ में वह जीतता है जो इन्द्र की पूजा में वेगयुक्त है।

इन्द्रो देवता, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२

यथा पूर्वेभ्यो जरितृभ्य इन्द्र मय-
इवापो न तृष्यते बभूथ। तामनु त्वा
निविदं जोहवीमि विद्यामेषं वृजनं
जीरदानुम् । ६ ।

यथा	येन प्रकारेण।	जिस प्रकार से
पूर्वेभ्यः	पुरातनेभ्यः	प्राचीनों के लिये
जरितृभ्यः	स्तोतृभ्यः	स्तोताओं के लिये

इ॒न्द्र॒	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
मयः॑ऽइव	सुखमिव	सुख की न्याईं
आपः॑	आपः	जल
न	इव	की न्याईं
तृ॒ष्यते॑	तृषार्ताय	प्यासे के लिये
ब॒भूथ॑	अभवः	तू हुआ है
ताम्	ताम्	उस को
अनु॑	अनुसृत्य	अनुसरण करके
त्वा॒	त्वाम्	तुझ को
नि॒ऽविद॑म्	स्तुतिम्	स्तुति को
जो॒ह॒वी॒मि॒	पुनः पुनराह्वयामि	बार २ बुलाताहूं

विद्याम	प्राप्नुयाम्	हम प्राप्त करें
इषम्	अन्नम्	अन्न को
वृजनम्	बलम्	बल को
जीरऽदानुम्	शीघ्रदान शीलताम्	शीघ्रदान के स्वभाव को

संस्कृतार्थः ।

हे, इन्द्र ! (त्वम्) येन प्रकारेण पुरातनेभ्यः स्तोतृभ्यः सुखमिव अभवः, यथा तृषार्ताय आपः (भवन्ति) तां स्तुतिमनुसृत्य (अहम् त्वां पुनः पुनराह्वयामि, (वयम्) अन्नं बलं शीघ्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र! आप जिस प्रकार से प्राचीन स्तोताओं के लिये सुख की न्याईं हुए हो जैसे प्यासे के लिये जल (होते हैं) उस स्तुति का अनुसरण करके मैं आपको बार२ बुलाता हूँ, हम अन्न बल (और) शीघ्र दान के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ६ ॥

इति षट सप्तत्याधिक शततमं सूक्तम् ।

ऋ०मं०१ सू०१७७।

इन्द्रो देवता, अगस्त्यऋषिः ( )

विनियोगः—

१—५। एतत्सूक्तं होत्रकशस्त्रेषु स्तोमवृद्धौ विनियुक्तम् (आ०७।१२।२।)
४। 'अयंयज्ञः—' इत्येषा अहर्गणेषु मध्येष्वहःसु हारियोजनग्रहस्ययाज्या (आ०६।११।११)

सूक्त का भावार्थ।

मनुष्यों के पालने वाले, मनुष्यों में सब से श्रेष्ठ, मनुष्य जातियों के राजा, बहुतों से बुलाए गए, स्तुति किये गए और यश की इच्छा करने वाले इन्द्र मेरी ओर रक्षा के सहित आने के लिये वीर्यवान घोड़ों को जोड़ कर सामने और समीप आवें ॥ १ ॥ हे इन्द्र ! जो आपके वीर्यवान, श्रेष्ठ, भक्त की स्तुति से जुड़ने वाले और बलवान् रथ से युक्त घोड़े हैं उन पर चढ़ो, उनके द्वारा सामने आओ, हे इन्द्र ! हम सोम निचोड़ कर आपको बुलाते हैं ॥ २ ॥ हे इन्द्र ! आप बलवान रथ पर चढ़ें आप के लिये वीर्यवान सोम निचोड़ा गया है, और मीठे रस सींचे गए हैं, हे मनुष्यों में श्रेष्ठ ! बलवान घोड़ों से रथ को जोड़ कर ढलान के मार्ग से मेरे पास समीप आओ ॥ ३ ॥ हे इन्द्र ! देवताओं की ओर जाने वाला यह यज्ञ है, यह पवित्र पशु है, ये स्तुति के गीत, यह सोम और यह बिछाई हुई कुशा है, हे समर्थ ! शीघ्रता से आओ, यहां पर घोड़ों को खोलो और बैठ कर सोम को पीओ ॥ ४ ॥ हे इन्द्र ! खूब स्तुति किये हुए आप मान्यके पुत्र इस कवि के स्तोत्रों को लक्ष्य रख कर सामने आवें, हम स्तुति करते हुए इस दिन आपकी रक्षा को प्राप्त करें और अन्नको बल को और शीघ्र दान करने के स्वभाव को पावें ॥ ५ ॥

ऋ०मं०१ सू०१७७मं०१ (४८७८)

इन्द्रो देवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।१ १।१ १।१ १।१ १।

आ च॑र्षणि॒प्रा वृ॑ष॒भो जना॑नां॒ राजा॑
कृष्टी॒नां पु॑रुहू॒त इन्द्रः॑। स्तु॒तः श्र॑व॒स्यन्नव॒सोप॑ म॒द्रिग्यु॒क्त्वा हरी॒ वृष॒णा याह्य॒र्वाङ्॥ १॥

आ।	खलु	सचमुच
च॒र्ष॒णि॒ऽप्राः	मनुष्याणां पालयिता	मनुष्यों के पालने वाला
वृ॒ष॒भः	श्रेष्ठः	श्रेष्ठ
जना॑नाम्	मनुष्याणाम् (मध्ये)	मनुष्यों के (बीच)
राजा॑	राजा	राजा
कृ॒ष्टी॒नाम्	मनुष्य जातीनाम्	मनुष्य जातियों का

पु॒रु॒ऽहू॒तः	बहुभिराहूतः	बहुतों से बुलाया हुआ
इन्द्रः॑	इन्द्रः	इन्द्र
स्तु॒तः	स्तुतः	स्तुति किया हुआ
श्र॒व॒स्यन्	यशइच्छन्	यश की कामना करता हुआ
अव॑सा	रक्षणेन	रक्षा करने से
उप॑	समीपे	समीप में
म॒द्रिक्	मदभिमुखम् (सा०भा०)	मेरी ओर
यु॒क्त्वा	योजयित्वा	जोड़ कर
हरी॑॰	अश्वौ	दोनों घोड़ों को
वृष॑णा	वीर्यवन्तौ	वीर्यवानों को
आ	आ+	–

याहि	आ+याहि, आगच्छतु (व्यत्ययः)	आवे
अर्वाङ्	अग्रे	सामने

संस्कृतार्थः ।

मनुष्याणां पालयिता, मनुष्याणाम् (मध्ये) श्रेष्ठः मनुष्य जातीनां राजा बहुभिराहूतः स्तुतः यशः कामयमानः (च) इन्द्रः रक्षयासह मदभिमुखं वीर्यवन्तौ अश्वौ योजयित्वाऽग्रेसमीपंखल्वा गच्छतु ॥ १ ॥

भावार्थः ।

मनुष्यों के पालने वाले, मनुष्यों के (बीच) श्रेष्ठ, मनुष्य जातियों के राजा बहुतों से बुलाए गए स्तुति किए गए (और) यश की कामना करने वाले इन्द्र रक्षा के साथ मेरी ओर वीर्यवान घोड़ों को जोड़ कर सचमुच आगे समीप आवें ॥ १ ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११।

येतेवृषणोवृषभासइन्द्र ब्रह्मयुजोवृषरथासोअत्याः । ताँआति-

ष्ठतेभिरायाह्यर्वाङ् हवामहेत्वा-
सुतइन्द्रसोमे ॥ २ ॥

ये	ये	जो
ते	तव	तेरे
वृषणः	वीर्यवन्तः	वीर्यवान
वृषभासः	श्रेष्ठाः	श्रेष्ठ
इन्द्र	हेइन्द्र !	हे इन्द्र
ब्रह्मऽयुजः	स्तुत्या युक्ताः	स्तुति से जुड़े हुए
वृषऽरथासः	बलवता रथेन युक्ताः	बलवानरथसेयुक्त
अत्याः	अश्वाः (निघं०१।१४)	घोड़े
तान्	तान्	उन को

ऋ०मं०१ सू०१६ मं०२ ([illegible])

आ	आ+	–
ति॒ष्ठ॒	आ+तिष्ठ, आरोह	तू चढ़
तेभि॑ः	तैः	उनके द्वारा
आ	आ+	
या॒हि॒	आ+याहि	तू आ
अ॒र्वाङ्	अभिमुखम्	सामने
ह॒वा॑महे	आह्वयामः	हम बुलाते हैं
त्वा	त्वाम्	तुझ को
सु॒ते	निष्पीडिते	निचोड़े जाने में
इ॒न्द्र॒	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
सोमे॑	सोमे	सोम में

संस्कृतार्थः।

हे इन्द्र! ये तव वीर्य्यवन्तः श्रेष्ठाः स्तुत्यायुक्ताः बलवता रथेन युक्ताः (च) अश्वाः (सन्ति) तान् आरोह, तैः (अस्मद्-) अभिमुखमायाहि हे इन्द्र! (वयम्) त्वां सोमे निष्पीडिते (सति) आह्वयामः ॥२॥

भावार्थः।

हे इन्द्र! जो आपके वीर्यवान श्रेष्ठ, स्तुति से जुड़े हुए (और) बलवान रथ से युक्त घोड़े (हैं) उन पर चढ़ो, उन के द्वारा (हमारे) सामने आओ, हे इन्द्र! हम आपको सोम निचोड़ने पर बुलाते हैं ॥२॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

आतिष्ठरथंवृषणंवृषाते सुतः-
सोमःपरिषिक्तामधूनि । युक्त्वावृष-
भ्यांवृषभक्षितीनां हरिभ्यांयाहि
प्रवतोपमद्रिक् । ३ ।

ऋ०मं०१.सू०१७७ मं०३ (४८५४)

आ	आ +	–
ति॒ष्ठ॒	आ + तिष्ठ, आरोह	तू चढ़
र॑थम्	रथम्	रथ को
वृ॑षणम्	बलवन्तम्	बलवान को
वृषा॑	वीर्यवान्	वीर्यवान
ते॒	तुभ्यम्	तेरे लिये
सु॒तः	निष्पीडितः	निचोड़ा गया
सो॑मः	सोमः	सोम
परि॑ऽसिक्ता	परितः सिक्तानि	चारों ओर सींचे गए
म॑धूनि	माधुर्याणि	मिठास
यु॒क्त्वा	योजयित्वा	जोड़ कर

वृष॑ऽभ्याम्	बलवद्भ्याम्	बलवानों से
वृ॒ष॒भ॒	हे वृषभ	हे सांढ
क्षि॒ती॒नाम्	मनुष्याणाम् (निघं० २।३)	मनुष्यों के
हरि॑ऽभ्याम्	अश्वाभ्याम्	घोड़ों से
या॒हि॒	उप+याहि, समीपं प्राप्नुहि	तू समीप प्राप्त हो
प्र॒ऽवता॑	प्रवणेन	ढलान से
उप॑	उप+	-
म॒द्रिक्	मदभिमुखम्	मेरे सामने

संस्कृतार्थः ।

(हे इन्द्र ! त्वम्) बलवन्तंरथमारोह, तुभ्यं वीर्यवान् सोमो निष्पीडितः, माधुर्याणि (च) परितः सिक्तानि, हे मनुष्याणां वृषभ बलवद्भ्यामश्वाभ्याम् (रथम्) योजयित्वा प्रवणेन मार्गण, मदभिमुखं समीपं प्राप्नुहि ॥ ३ ॥

भाषार्थ ।

(हे इन्द्र !) आप बलवान रथ पर चढ़ें, आप के लिये वीर्यवान सोम निचोड़ा गया है (और) चारों ओर से मिठास सींचे गए हैं, हे मनुष्यों में सांड ! बलवान घोड़ों से रथ को जोड़ कर ढलान से मेरे सामने पास पहुँचो ॥ ३ ॥

इन्द्रोदेवता, विराड् त्रिष्टुप्छन्दः।१२।११।११।१२

अ॒यंय॒ज्ञोदे॑व॒याअ॒यंमि॒येध॑ इ॒मा
ब्रह्मा॑ण्य॒यमि॑न्द्र॒सोमः॑। स्ती॒र्णंब॒र्हि
रातुश॑क्र॒प्रया॑हि॒ पिबा॑नि॒षद्य॒विमु॑चा॒
हरी॑इ॒ह।४।

अ॒यम्	अयम्	यह
य॒ज्ञः	यज्ञः	यज्ञ

दे॒व॒ऽयाः	देवान् गच्छन्	देवताओं को जाता हुआ
अ॒यम्	अयम्	यह
मि॒येधः॑	पवित्र पशुः	पवित्र पशु
इ॒मा	इमानि	ये
ब्रह्मा॑णि	स्तुतिगीतानि	स्तुति के गीत
अ॒यम्	अयम्	यह
इ॒न्द्र॒	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
सोमः॑	सोमः	सोम
स्ती॒र्णम्	आस्तृतम्	बिछाई हुई
ब॒र्हिः	बर्हिः	कुशा
आ	आ +	—

ऋ०मं०१ 'सू०१७७ मं०४ (४८५८)

तु	इदानीम्	अब
श॒क्र॒	हे समर्थ !	हे समर्थ
प्र	प्र+	–
या॒हि॒	आ+प्र+याहि, प्रकर्षेणाऽऽगच्छ	शीघ्रता से आओ
पिब॑	पिब	पीओ
नि॒ऽसद्य॑	उपविश्य	बैठकर
वि	वि+	–
मु॒च॒	वि+मुच, वियोजय (नुमभावश्छान्दसः)	खोलो
ह॒री॰	अश्वौ	घोड़ों को
इ॒ह	इह	यहां

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! देवान् गच्छन् अयं यज्ञः, अयं पवित्रपशुः, इमानि स्तुतिगीतानि, अयं सोमः, (इदं च)

आस्तृतं बर्हिः, (अस्ति) हेसमर्थ! इदानीम् प्रकर्षेण आगच्छ, इह अश्वौ वियोजय, उपविश्य (च सोमम्) पिब ॥ ४ ॥

भाषार्थः।

हे इन्द्र! देवताओं को जाता हुआ यह यज्ञ, यह पवित्र पशु, ये स्तुति के गीत, यह सोम, (और यह) बिछाई हुई कुशा (है) हे समर्थ! शीघ्रता से आओ, यहां घोड़ों को खोलो (और) बैठ कर (सोम को) पीओ ॥४॥

इन्द्रोदेवता, निचृत् त्रिष्टुप्छन्दः।१०।११।११।११

ओसुष्टुतइन्द्रयाह्यर्वाङुपब्र-
ह्माणिमान्यस्यकारोः। विद्यामव-
स्तोरवसागृणन्तो विद्यामेषंवृजनं
जीरदानुम्।५।

ओ०	आ+उ (इति पदद्वयम्)	-

ऋ०मं०१ सू०१७७ मं०५ (७८१०)

सुऽस्तु॑तः	सम्यक् स्तुतः	खूब स्तुति किया हुआ
इ॒न्द्र॒	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
या॒हि॒	आ+याहि	तू आ
अ॒र्वाङ्	अभिमुखम्	सामने
उप॑	उपलक्ष्य	लक्ष्य कर
ब्रह्मा॑णि	स्तुतिगीतानि	स्तुति के गीतों को
मा॒न्यस्य॑	मानपुत्रस्य	मानके पुत्र के
का॒रोः	कवेः	कवि के
वि॒द्याम॑	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
वस्तो॑ः	दिनम् (निघं०१।९)	दिन को
अव॑सा	रक्षणेन (सह)	रक्षा के साथ

गृ॒णन्तः॑	स्तुवन्तः	स्तुति करते हुए
वि॒द्याम॑	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इ॒षम्	अन्नम्	अन्न का
वृ॒जन॑म्	बलम्	बल को
जी॒रऽदा॑नुम्	शीघ्रदानशीलताम्	शीघ्रदान देने के स्वभावको

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र! सम्यक्स्तुतः (त्वम्) मानपुत्रस्य कवेः स्तुतिगीतानि उपलक्ष्य अभिमुखमायाहि, स्तुवन्तः (वयम्) रक्षयासह (इदम्) दिनं प्राप्नुयाम अन्नं बलं शीघ्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥५॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र! खूब स्तुति किये हुए आप मान के पुत्र कवि के स्तुति गीतों को लक्ष्यकर सामने आवें, स्तुति करते हुए हम रक्षा के साथ (इस) दिन को प्राप्त करें, (और) अन्न बल (तथा) शीघ्रदान देने के स्वाभाव को पावें ॥ ५ ॥

इति सप्त सप्तत्यधिक शततमं सूक्तम् ।

ऋ० मं० १ सू० १७८ ।

इन्द्रो देवता, अगस्त्य ऋषिः ।

विनियोगः—

१-५ । एतत् सूक्तं होत्रक शस्त्रेषु स्तोमवृद्धौ विनियुक्तम्
(आ० ७।१२।२)

सूक्तका भावार्थ ।

हे इन्द्र ! आप जिस रक्षा से स्तोताओं के रक्षक हुए हो, उस रक्षा को न देकर हमारी बढ़ती हुई कामना को हताश मत करो, मनुष्य से प्राप्त करने योग्य जितनी आपकी समृद्धि है मैं उन सब को प्राप्त करूं ॥ १ ॥ दिन रात रूपी दोनों बहनें जिन मंगलों को हमारे घर में करती हैं, राजा इन्द्र उन से हम को वञ्चित न करें, सहज से चलने वाले जल इस इन्द्र को पहुंचे हैं, इन्द्र हमको स्वास्थ्य और अपनी मित्रता को दें ॥ २ ॥ शूरवीर इन्द्र वीरों के साथ यज्ञ में जोतने वाले, याचना करने वाले कवि की पुकार को सुनने वाले और हवि देने वाले भक्त के पास रथ को लेजाने वाले हैं यदि वह स्वयं स्तुतियों के प्रेरक हों ॥ ३ ॥ इस प्रकार इन्द्र वीर मरुतों के सहित मित्रों से अर्पण किये हुए अन्न के खूब खाने वाले हैं, यजमान की प्रार्थना को सच्ची करने वाले वह बलवान अनेक शत्रुओं वाले युद्ध में भी स्तुति किये जाते हैं ॥ ४ ॥ हे धनवाले इन्द्र ! हम आपकी सहायता से अपने को बड़ा मानने वाले शत्रुओं को जीतें, आप रक्षक और आप ही हमारी वृद्धि के लिये हों, हम अन्न को बल को और शीघ्रदान के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ५ ॥

इन्द्रो देवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः । १।१।१।१।२।१।१

यद्धस्यातइन्द्रश्रुष्टिरस्ति य-

यया ब॑भू॒थ ज॑रि॒तृभ्य॑ ऊ॒ती। मा नः॒ काम॑ं म॒हय॑न्त॒मा ध॒ग् विश्वा॑ ते अश्या॒ं प॑र्याप आ॒योः ।१।

यत्	यत्	जो
ह॒	खलु	सच मुच
स्या	सा	वह
ते॒	तव	तेरी
इ॒न्द्र॒	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
श्रु॒ष्टिः	रक्षा (आ०को०)	रक्षा
अस्ति॑	अस्ति	है

ऋ०मं०१ सू०१७८ मं०१ (४८६४)

यया॑	यया	जिस से
ब॒भू॑थ	अभवः	तू हुआ है
ज॒रि॒तृऽभ्य॑ः	स्तोतृभ्यः	स्तोताओं के लिये
ऊ॒ती	रक्षकः	रक्षक
मा	मा	मत
न॒ः	अस्माकम्	हमारे
का॑मम्	कामम्	कामनाको
म॒ह्य॑न्तम्	वर्धमान	बढ़ती हुई को
आ	आ+	–
ध॒क्	आ+धक्, अधाक्षीः	तू जला
विश्वा॑	सर्वाः	सब को

ते	तव	तेरी
अश्याम्	परि+अश्याम्, परितःप्राप्नुयाम्	मैं चारों ओर से प्राप्त होऊं
परि	+परि	–
आपः	आप्तव्याः	प्राप्त होने योग्यों को
आयोः	मनुष्यस्य	मनुष्य के

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! यत् खलु सा तव रक्षाऽस्ति, यया (त्वम्) स्तोतृभ्यःरक्षकोऽभवः (तामदत्वा) अस्माकं वर्धमानंकामं माधाक्षीः,(अहम्)मनुष्यस्य आप्तव्याः सर्वास्तव (समृद्धीः) परितः प्राप्नुयाम् ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! जो सचमुच वह आपकी रक्षा है जिस से आप स्तोताओं के लिये रक्षक हुए हो (उसे न देकर) आप हमारी बढ़ती हुई कामना को मत जलावें मैं मनुष्य के प्राप्त करने योग्य आपकी संपूर्ण समृद्धियों को चारों ओर से प्राप्त करूं ॥ १ ॥

इन्द्रोदेवता, निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः ।१०।११।११।११

नघाराजेन्द्र आदभन्नो यानु
स्वसाराकृणवन्तयोनौ। आपश्चि-
दस्मैसुतुका अवेषन् गमन्नइन्द्रः स-
ख्यावयश्च।२।

न	न	नहीं
घ	(पूरणः)	–
राजा	राजा	राजा
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र
आ	आ +	–
दभत्	आ+दभत्, वञ्चेत्	ठगे

नः	अस्मान्	हम को
या	यानि	जिनको
नु	(पूरणः)	–
स्वसारा	भगिन्यौ	दोनों बहनें
कृण्वन्त	कुरुतः (वचनव्यत्ययः)	करती हैं
योनौ	गृहे	घर में
आपः	जलानि	जल
चित्	(पूरणः)	–
अस्मै	अस्मै	इसके लिये
सुऽतुकाः	सुगमनशीलः (निघं०३।२७)	सहज से चलने वाले
अवेषन्	प्राप्तवन्तः	प्राप्त हुए हैं

मम॑त्	प्रापयतु	प्राप्त करावें
नः॒	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
इन्द्र॑ः	इन्द्रः	इन्द्र
स॒ख्या	सख्यान	मित्रताओं को
व॑यः	स्वास्थ्यम् (भा०वो०)	स्वास्थ्य को
च॒	च	और

संस्कृतार्थः।

यानि (मङ्गलानि) भगिन्यौ अस्माकं गृहे कुरुतः (तेभ्यः) राजा इन्द्रः अस्मान्न वञ्चेत् सुगमन शीलानि जलानि अस्मै प्राप्तवन्तः, इन्द्रोऽस्मभ्यं सख्यानि स्वास्थ्यं च प्रापयतु॥ २॥

भाषार्थः।

जिन (मंगलों) को दोनों बहनें हमारे घर में करती हैं (उनसे) राजा इन्द्र हमको न ठगें, सहज से चलने वाले जल इस तक पहुंचे हैं, इन्द्र हमारे लिये मित्रताओं को और स्वास्थ्य को प्राप्त करावें॥ २॥

दोनों बहनें दिन रात।

इन्द्रोदेवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।१०।११।११।११

जेतानृभिरिन्द्रःपृत्सुशूरः श्रोताह्वंनाधमानस्यकारोः। प्रभर्ता रथंदाशुषउपाकउद्यन्तागिरोयदिचत्मनाभूत्। ३।

जेता	जेता	जीतने वाला
नृऽभिः	नृभिः (सह)	नरों के साथ
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र
पृत्ऽसु	सङ्ग्रामेषु	युद्धों में
शूरः	शूरः	शूरबीर

—

ऋ०मं०१सू०१७४मं०८ (४८७०)

श्रोता	श्रोता	सुनने वाला
हव॑म्	आह्वानम्	पुकार को
नाध॑मानस्य	याचमानस्य	मांगते हुए की
का॒रोः	कवेः	कवि की
प्र॒ऽभ॑र्ता	प्रहर्ता	लेजाने वाला
रथ॑म्	रथम्	रथ को
दा॒शु॑षः	(हविषः) दानिनः	भक्त के
उ॒पा॒के	समीपे	समीप
उ॒त्ऽय॑न्ता	प्रेरकः (आ०को०)	प्रेरण करने वाला
गिर॑ः	स्तुतीः	स्तुतियों को
यदि॑	यदि	जो

च	(पूरणः)	–
त्मना	आत्मना	अपने आप
भूत्	भवेत्	होवे

संस्कृतार्थः ।

शूरः इन्द्रो नृभिः (सह) सङ्ग्रामेषु जेता, याचमानस्य कवेराह्वानस्य श्रोता, (हविषः) दानिनः समीपे रथस्य प्रहर्ता, (च भवति) यदि स्वयम् (एव) स्तुतीनाम् प्रेरको भवेत् ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

शूरबीर इन्द्र नरों के साथ युद्धों में जीतने वाले, मांगने वाले कवि की पुकार को सुनने वाले, (और) भक्त के समीप रथ को लेजाने वाले (हैं) यदि वह आप ही स्तुतियों के प्रेरक हों ॥ ३ ॥

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

एवा नृभिरिन्द्रः सुश्रवस्या प्रखादः
पृक्षो अभि मित्रिणो भूत् । समर्य इ-

षः स्तवते विवाचि सत्राकरो यजमानस्य शंसः ।४।

एव	एवम्	इस प्रकार
नृऽभि	नृभिः (सह)	नरों के साथ
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र
सुऽश्रवस्या	शोभनयशइच्छया	सुन्दर यश की इच्छा से
प्रऽखादः	प्रकर्षेण भक्षकः	खूब खाने वाला
पृक्षः	अन्नस्य	अन्न का
अभि	(पूरणः)	–
मित्रिणः	मित्रैरर्पितस्य	मित्रों से दिये हुए का
भूत्	अभवत्	हुआ है

सऽमर्ये	सङ्ग्रामे	युद्ध में
इषः	बलवान् (आ०को०)	बलवान
स्तवते	स्तूयते	स्तुति किया जाता है
विऽवाचि	विविध ध्वनि युक्ते	अनेक शब्द वाले में
सत्राऽकरः	सत्यकारी	सत्य करने वाला
यजमानस्य	यजमानस्य	यजमान की
शंसः	प्रार्थनायाः	प्रार्थना के

संस्कृतार्थः ।

एवम्इन्द्रो नृभिः (सह) शोभन यशइच्छया मित्रैरर्पितस्य अन्नस्य प्रकर्षेण भक्षकोऽभूत् यजमानस्य प्रार्थनायाः सत्यकारी (सः) बलवान् विविध ध्वनियुक्ते सङ्ग्रामे (अपि) स्तूयते ॥ ४ ॥

भावार्थः ।

इस प्रकार इन्द्र नरों के साथ सुन्दर यश की इच्छा से मित्रों के अर्पण किये हुए अन्न के खूब खाने वाले हुए हैं, यजमान की प्रार्थना को सच्ची

करने वाले (वह) बलवान अनेक शब्दों वाले युद्ध में (भी) स्तुति किये जाते है ॥ ४ ॥

नर अर्थात् मरुतों के साथ ।

इन्द्रोदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

त्व॒या॑वयंमघव॒न्निन्द्र॒शत्रू॑न॒-
भिष्या॑मम॒हतो॑मन्य॑मानान्।त्वंत्रा॒-
ता॑त्वमु॑नो॒वृधे॑भू॒र्वि॒द्या॒मे॒षंवृ॒जनं॑जी॒र-
दा॑नुम्।५।

त्वया॑	त्वया	तेरे द्वारा
व॒यम्	वयम्	हम
म॒घ॒ऽव॒न्	हे धनवन् !	हे धन वाले
इ॒न्द्र॒	हे इन्द्र !	हे इन्द्र

शत्रू॑न्	शत्रून्	शत्रुओं को
अ॒भि	अभि+	–
स्या॒म॒	अभि+स्याम, अभिभवेम	दबावें
म॒ह॒तः	महतः	महानों को
मन्य॑मानान्	मन्यमानान्	मानने वालों का
त्वम्	त्वम्	तू
त्रा॒ता	रक्षकः	रक्षा करने वाला
त्वम्	त्वम्	तू
ऊ॑म्०	एव	ही
न॒ः	अस्माकम्	हमारी
वृ॒धे	वृद्ध्यै	वृद्धि के लिये
भू॒ः	भव	तू हो

विद्याम	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इषम्	अन्नं	अन्न को
वृजनम्	बलम्	बल को
जीरदानुम्	सत्वरदानशील ताम्	शीघ्रदान करने के स्वभाव को

संस्कृतार्थः ।

हे धनवन् ! इन्द्र ! वयं महतोमन्यमानान् शत्रून् त्वया अभिभवेम, त्वं रक्षकः त्वमेवाऽस्माकं वृद्धये (च) भव (वयम्) अन्नं बलं सत्वरदान शील ताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे धनवाले इन्द्र! हम बड़ा मानने वाले शत्रुओं को आपके द्वारा दबावें, आप रक्षक (और) आप ही हमारी वृद्धि के लिये हों, हम अन्न को बल को और शीघ्रदान करने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ५ ॥

इत्यष्ट सप्तत्यधिक शततम् सूक्तम् ।

ऋ० मं० १ सू०१७९।

दम्पती देवता, लोपामुद्रा अगस्त्यावृषी।

विनियोगोलैङ्गिकः।

सूक्त का भावार्थ।

(लोप मुद्रा का वचन) मैंने बहुत बरसों तक आयु को क्षीण करने वाले प्रभातों में दिन रात परिश्रम किया है, बुढ़ापा शरीरों की शोभा को हर लेता है, इसलिये पतियों को पत्नियों के पास जाना उचित है ॥ १ ॥ जो धर्म को पालने वाले प्राचीन ऋषि थे. वे देवताओं के साथ मिलकर सत्य का कथन करते थे, वे भी मर गए और सत्य के अन्त को नहीं पाया, इसलिये पत्नियां पतियों के पास जावें ॥ २ ॥ (अगस्त्य का वचन) हम दोनों का परिश्रम व्यर्थ नहीं हुआ है, क्योंकि देवता हमारी रक्षा करते हैं, हम शत्रुओं को बस में करते हैं, और जो हम दोनों स्त्री पुरुष मिलकर लोक यात्रा करते हैं, सैंकड़ों से प्राप्त करने योग्य उस दौड़ में हम जीतते हैं ॥ ३ ॥ मन को रोकने वाले मुझ स्तोता का कहीं न कहीं से आकर कामदेव प्राप्त हुआ है, लोपामुद्रा पति को प्राप्त करती है, धीरज से रहित अबला मुझ हांपते हुए धैर्यवान को पान करता है ॥ ४ ॥ हृदयमें धारण किये हुए सोम से मैं समीप से प्रार्थना करता हूं कि जो मैंने अपराध किया है उसको क्षमा करे, क्योंकि मनुष्य बहुत कामनाओं वाला होता है ॥ ५ ॥ तप रूप खनित्रों से खोदते हुए, प्रजा सन्तान और बलको चाहते हुए तेजस्वी अगस्त्य ऋषिने दोनों वर्णों को पुष्ट किया है और देवताओं में सच्चा आशीर्वाद को पाया है ॥ ६ ॥

दम्पतीदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११।

पूर्वीरहं शरदः शश्रमाणा दोषा
वस्तोरुषसो जरयन्तीः । मिनाति
श्रियं जरिमा तनूनामप्यू नु पत्नीर्वृषणो
जगम्युः ॥ १ ॥

पूर्वीः	बह्वीः (अत्यन्तसंयोगे द्वितीया)	बहुतों तक
अहम्	अहम्	मैं
शरदः	शरदः	बरसों तक
शश्रमाणा	परिश्रमं कुर्वती	परिश्रम करती हुई
दोषाः	रात्रीः	रात

वस्तो॑ः	अहानि	दिन
उ॒ष॑सः	उषसः	उषाओं में
ज॒रय॑न्तीः	जीर्णीकुर्वतीः	क्षीण करने वालियों तक
मि॒नाति॑	हिनस्ति	नाश करता है
श्रिय॑म्	शोभाम्	शोभा को
ज॒रि॒मा	जरा	बुढ़ापा
त॒नूना॑म्	शरीराणाम्	शरीरों की
अपि॑	अपि	भी
ऊ॑म्०	(पूरणः)	–
नु	इदानीम्	अब
पत्नी॑ः	पत्नीः	पत्नियों को

वृ॑षणः	सेक्तारः पतयः इत्यर्थः	पति
ज॒ग॒म्युः	गच्छेयुः	प्राप्त हों

संस्कृतार्थः ।

बह्वीःशरदः रात्रीर्दिनानि जीर्णीकुर्वतीः (बह्वीः) उषसः (च) अहं परिश्रमं कुर्वती (आसम्) जरा शरीराणां शोभां हिनस्ति,इदानीमपि पतयः पत्नीर्गच्छेयुः ॥ १ ॥

भाषार्थ ।

मैं बहुत बरसों से दिन रात क्षीण करने वाली उषाओं में परिश्रम करती रही हूं, बुढ़ापा शरीरों की शोभा को नाश करता है, इस लिये अब भी पति पत्नियों को प्राप्त हों ॥ १ ॥

अगस्त्य ऋषि की पत्नी लोपामुद्रा पति के साथ बहुत काल तक तप व्रत और ब्रह्मचर्य का पालन करती हुई अब उसको काम की ओर प्रवृत्त करने की इच्छा से इस वाक्य को कहती है ॥

दम्पतीदेवता,त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११।

येचि॒द्धिपूर्व॑ऋत॒साप॒आस॑न्त्सा॒-

कंदे॒वेभि॒रव॑दन्नृ॒तानि॑ । तेचि॒दवा॑सु॒र्नह्यन्त॑मा॒पुः समू॒नुपत्नी॒र्वृष॑भिर्जगम्युः ॥ २ ॥

ये	ये	जो
चि॒त्	(पूरणः)	–
हि	खलु	सचमुच
पूर्वे॑	पुरातनाः	प्राचीन
ऋ॒त॒ऽसाप॑ः	धर्मस्य पालयितारः	धर्म के पालने वाले
आस॑न्	आसन्	थे
सा॒कम्	सह	साथ

ऋ०मं०१ सू०१७९ मं०२ (४८८२)

देवेभिः	देवैः	देवताओं से
अवदन्	भाषितवन्तः	बोलते थे
ऋतानि	सत्यानि	सचाइयों को
ते	ते	वे
चित्	अपि	भी
अव	अव +	–
असुः	अव+असुः,मृता	मर गए
नहि	नहि	नहीं
अन्तम्	अन्तम्	अन्त को
आपुः	प्राप्तवन्तः	पाया
सम्	सम् +	–
ऊम्०	अपि	–

नु	इदानीम्	अब
पत्नीः	पत्न्यः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	पत्नियां
वृषऽभिः	पतिभिः	पतियों से
जगम्युः	सम्+जगम्युः, सङ्गताभवेयुः	समागम करें

संस्कृतार्थः।

ये खलु धर्मस्य पालयितारः पुरातनाः (ऋषयः) आसन्,(ये) देवैः सह सत्यानि कथितवन्तःतेऽपि मृताः अन्तम् (च) नप्राप्तवन्तः, इदानीं पत्न्यो पतिभिः सङ्गताभवेयुः ॥ २ ॥

भाषार्थ।

सच मुच जो धर्म के पालने वाले पुराने (ऋषि) थे, जिन्हों ने देवताओं के साथ सचाइयों को कहा है, वे भी मरगए और अन्त को नहीं पाया, अब भी पत्नियां पतियों से समागम करें ॥ २ ॥

लोपामुद्राका आशय यह है,कि सचाई का अन्त नहीं है और मनुष्य की आयु स्वल्प है, इसलिये कुछ काल काम को भी देना उचित है । धर्म अर्थ और काम दोनों हो मनुष्य के धर्म हैं ॥

दम्पतीदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११

नमृषाश्रान्तंयदवन्तिदेवा विश्वाइत्स्पृधोअभ्यश्नवाव।जयावेद
त्रशतनीथमाजिं यत्सम्यञ्चामिथु
नावभ्यजाव॥ २॥

न	न	नहीं
मृषा	व्यर्थम्	व्यर्थ
श्रान्तम्	परिश्रान्तम्	परिश्रम किया है
यत्	यतः	क्योंकि
अवन्ति	रक्षन्ति	रक्षा करते हैं
देवाः	देवाः	देवता

विश्वा॑ः	सर्वाः	सब को
इत्	(पूरणः)	–
स्पृध॑ः	स्पर्धमानान्	स्पर्धा करने वालों को
अ॒भि	अभि+	–
अ॒श्न॒वा॒व॒	अभि+अश्नवाव, वशीकुर्वः	हम बस में करते हैं
जया॑व	जयावः	हम जीतते हैं
इत्	(पूरणः)	–
अत्र॑	अत्र	यहां
श॒तऽनी॑थम्	शतैःप्रापणीयम्	सैंकड़ों को प्राप्त करने योग्य को
आ॒जिम्	धावनम्	दौड़ को
यत्	यत्	जो

सम्यञ्चा	सहगच्छन्तौ	इकट्ठे चलते हुए
मिथुनौ	स्त्री पुरुषौ	स्त्री और पुरुष
अभि	अभि +	-
अजाव	अभि+अजाव, चर्यांकुर्वः	हम दोनों चर्या करत हैं

संस्कृतार्थः ।

(आवाभ्याम्) व्यर्थं न परिश्रान्तम् (यत आवाम्) देवाः रक्षन्ति, (आवाम्) सर्वान् स्पर्धमानान् वशीकुर्वः, अत्र शतैः प्राप्नीयंधावनम् (च) जयावः यत् सहगच्छन्तौ स्त्री पुरुषौ (आवाम्) चर्या कुर्वः ॥३॥

भाषार्थः ।

(हम दोनों ने) व्यर्थ परिश्र नहीं किया (क्योंकि) देवता हमारी रक्षा करते हैं (हम) सब स्पर्धा करने वालों को बस में करते हैं, (और, यहां सैकड़ों से प्राप्त करने योग्य दौड़ को जीतते हैं, जो हम स्त्री पुरुष दोनों इकट्ठे हो कर चर्या करते हैं ॥ ३ ॥

दम्पती देवता, त्रिष्टुप्छन्दः।१ ३।१ ३।१ ३।१ १

न॒दस्य॑मारु॒ध॒तः काम॒आग॑न्नि॒
तआजा॑तोअ॒मुतः॒कुत॑श्चित्। लोपा॑
मु॒द्रावृष॑णं॒नीरि॑णाति॒धीरमधी॑राधय
ति॒श्व॒सन्त॑म्॥ ४॥

न॒दस्य॑	स्तोतारम् (निघं० कर्मणिषष्ठी)	स्तोता को
मा॒	माम्	मुझ को
रु॒ध॒तः	निरोद्धारम् (कर्मणिषष्ठी)	रोकने वाले को
का॑मः	कामः	काम
आ	आ +	–
अग॒न्	आ+अगन्, प्राप्तोअस्ति	प्राप्त हुआ है

ऋ०मं०१ सू०१७ मं०४९ (४९९८)

इतः	इतः	यहां से
आऽजातः	उत्पन्नः	उत्पन्न हुआ है
अमुतः	अमुतः	वहां से
कुतः	कुतः+चित्	कहीं से
चित्	+चित्	–
लोपामुद्रा	लोपामुद्रा	लोपामुद्रा
वृषणम्	सेक्तारम् पतिमित्यर्थः	पति को
निः	निः +	–
रिणाति	निः+रिणाति, नितरां प्राप्नोति	प्राप्त करती है
धीरम्	धीरम्	धीरजवान को
अधीरा	धैर्यरहिता	न धीरजवाली

धयति	पिबति	पीती है
श्वसन्तम्	श्वसन्तम्	श्वास लेते हुएको

संस्कृतार्थः ।

(मनसः) निरोद्धारं स्तोतारं मां इतः अमुतः कुतश्चित् (वा) प्रादुर्भूतः कामः प्राप्तोऽस्ति, लोपामुद्रा पतिम् नितरां प्राप्नोति, धैर्यरहिता श्वसन्तं धीरं पिबति ॥ ४ ॥

भावार्थः ।

(मन के) रोकने वाले मुझ स्तोता को यहां से वा वहां से कहीं से आकर काम उत्पन्न हुआ है, लोपामुद्रा पतिको प्राप्त करती है, धीरजसे रहित (स्त्री) श्वास लेते हुए (मुझ) धैर्यवान को पीती है ॥ ४ ॥

दम्पती देवता, त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११

इमंनसोममन्तितोहृत्सुपीत
मुपब्रुवे । यत्सीमागश्चकृमातत्सु
मृळतुपुलुकामोहिमर्त्यः ॥ ५ ॥

इ॒मम्	इमम्	इस को
नु	इदानीम्	अब
सोम॑म्	सोमम्	सोम को
अन्ति॑तः	समीपम्	समीप
हृ॒त्ऽसु	हृदयेषु	हृदयों में
पी॒तम्	पीतम्	पीये हुए को
उप॑	उप+	–
ब्रु॒वे॒	उप + ब्रुवे, प्रार्थयामि	मैं प्रार्थना करता हूं
यत्	यम्	जिसको
सी॒म्	पूरणः)	–
आग॑ः	अपराधम्	अपराध को

च॒कृ॒म	कृतवन्तःस्म	हमने किया है
तत्	तम्	उसको
सु	सु +	–
मृ॒ळ॒तु॒	सु + मृळतु, सुष्ठु क्षमतु	क्षमा करे
पु॒लु॒ऽकाम॑ः	बहुकामनावान्	बहुत कामना वाला
हि	यतः	क्योंकि
मर्त्य॑ः	मनुष्यः	मनुष्य

संस्कृतार्थः।

(अहम्) हृदयेषु पीतमिमं सोमम् इदानीं सामीप्येन प्रार्थयामि (वयम्) यमपराधं कृतवन्तः स्मः तम् (सः) क्षमतु, यतो मनुष्यो बहु कामनावान (भवति). ॥ ५ ॥

भावार्थः।

मैं हृदयों में पीए हुए इस सोम को अब समीप से प्रार्थना करता हूं (हम ने) अपराध किया है उस

को वह क्षमा करें, क्योंकि मनुष्य बहुत कामना वाला होता है ॥ ५ ॥

ऋतु स्नाता पत्नी के उत्तेजन से और सन्तान की कामना से काम देव क वश में हो कर ऋषिने ब्रह्मचर्य व्रत को तोड़ा, उसके लिये पश्चाताप रूपी यह प्रार्थना है ॥

दम्पतीदेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

अगस्त्यः खनमानः खनित्रैः प्रजामपत्यं बलमिच्छमानः । उभौ वर्णावृषिरुग्रः पुपोष सत्यादेवेष्वाशिषोजगाम ॥ ६ ॥

अगस्त्यः	अगस्त्यः	अगस्त्य
खनमानः	खनमानः	खोदता हुआ
खनित्रैः	खनित्रैः	खनित्रों से

(४८९.३) ऋ०मं०१सू०१७९ मं०१

प्रऽजाम्	प्रजाम्	प्रजा को
अपत्यम्	सन्ततिम्	सन्तति को
बलम्	बलम्	बल का
इच्छमानः	इच्छन् (व्यत्ययः)	इच्छा करता हुआ
उभौ	उभौ	दोनों को
वर्णौ	वर्णौ	वर्णों को
ऋषिः	ऋषिः	ऋषि ने
उग्रः	तेजस्वी	तेजस्वी ने
पुपोष	पोषितवान्	पुष्ट किया है
सत्याः	सत्याः	सच्चों का
देवेषु	देवेषु	देवताओं में

प्राऽशिषः	आशिषः	अशीर्वादों को
जगाम	प्राप्तवान्	प्राप्त किया है

संस्कृतार्थः ।

(तपोरूपैः) खनित्रैः खनमानः, प्रजासन्तति बलम् (च) कामयमानः प्रतापी ऋषिरगस्त्यः उभौ वर्णौ पोषितवान्, देवेषु सत्याः आशिषः (च) प्राप्तवान् ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

(तपरूप) खोदने के अस्त्रों से खोदते हुए प्रजा सन्तान और बल को चाहते हुए तेजस्वी अगस्त्य ऋषिने दोनों वर्णों को पुष्ट किया है और देवताओं में सच्चे आशीर्वादों को प्राप्त किया है ॥ ६ ॥

दोनों वर्ण अर्थात् धर्म और राष्ट्र की रक्षक ब्राह्मण और क्षत्रिय जाति को।

ऋ०मं० १ सू० १८० ।

अश्विनौ देवते, अगस्त्य ऋषिः ।

विनियोगः-- ।

१-१०। एतत् सूक्तं प्रातरनुवाकाश्विनशस्त्रयोस्त्रैष्टुभे छन्दसि विनियुक्तम् (आ० ४।१५।२)

सूक्त का भावार्थ ।

हे अश्विनो! आपके घोड़े आकाशों में खूब चलते हैं जब आपका रथ समुद्रों के चारों ओर चलता है, आपके सुनहरी पहिये के घेरे मिठास को टपकाते हैं जब आप मिठास को पीते हुए उषाओं के साथ चलते हैं ॥ १ ॥ हे मिठास के पीने वालो! हे सब से स्तुति के योग्य अश्विनो! जब आप मनुष्यों के हितकारी अलग उड़ने वाले और अत्यन्त पूजनीय अश्व को पहुंचते हो और जब आप को वहन वहां तक ले जाती है तब यजमान बल के लिये और अन्न के लिये स्तुति करता है ॥ २ ॥ हे सत्य के रूप अश्विनो! आपने नपकी हुई गौ में सूर्य के प्राचीन पके हुए दूध को डाला है, यही जो वृक्षके बीच में चोर की न्याईं छिपे हुए प्रकाशमान अग्नि हवि लिये हुए आपको पूजते हैं ॥ ३ ॥ हे नरो! हे अश्विनो! आपने इच्छा करते हुए अत्रि के लिये अग्नि के तापको जल की कणियों की न्याईं सुखदाई बनाया था, इसलिये आपके लिये अग्निमें हवि दी जाती है और सोम रस रथ के पहियों की न्याईं आपकी ओर जाते हैं ॥ ४ ॥ हे पूजनीय भयानक अश्विनो! मैं प्राचीन तुग्रके पुत्र की न्याईं आपको स्तुति द्वारा गौओं के दान के लिये अपनी ओर फेरता हूं, आपके महत्व से पृथिवी जलों को प्राप्त करती है और आपकी कृपा से पाप की फांसी जीर्ण होती है ॥ ५ ॥ हे कल्याण

के देने वाले अश्विनो ! जब आप घोड़ों को जोड़ते हो, तब अन्नों के साथ बहुत बुद्धि का मेल करते हो. इसलिये स्तोता हर्षित होता है. वायु की न्याईं विचरता है और दृढ़ नियम वाले की न्याईं बल को पाकर महत्व को प्राप्त होते हैं ॥ ६ ॥ हे अश्विनो ! सच्चे हो । हम आपकी खूब स्तुति करते हैं, यज्ञ से व्यवहार की वृद्धि वाला अलग किया गया है. हे निन्दा रहित वीरो ! अब देवताओं के समीप रहने वाले की रक्षा करो ॥ ७ ॥ हे अश्विनो ! मनुष्यों के नाशों में प्रशंसा के योग्य अगस्त्य गरजते हुए प्रवाह की प्राप्ति के लिये आपको [illegible] की न्याईं सहस्र स्तोत्रों से प्रतिदिन चेत करता है ॥ ८ ॥ हे धन के बरसाने वालो ! जब आप रथ के महत्व के साथ बच करते हो, और मनुष्य होता की न्याईं भक्तों के पास आते हो और स्तुति करने वालों को सुन्दर घोड़ों के समूहों को देते हो, तब हे असत्य से रहित देवो ! हम भी धन के भागी होवें ॥ ९ ॥

हे अश्विनो ! द्युलोक के चारों ओर जाते हुए और अटूट चक्रनेमि वाले आपके उस रथ को हम आज कल्याण के लिये बुलाते हैं, हम अन्न को बल को और शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ १० ॥

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।१:।११।

युवोरजांसि सुयमासो अश्वा रथो
यद्वां पर्यर्णांसि दीयत् । हिरण्यया वां
पवयः प्रुषायन् मध्वः पिबन्ता उषसः
सचेथे ॥ १ ॥

यु॒वोः	युवयोः	तुम दोनों के
रजां॑सि	आकाशान्	आकाशों को
सु॒ऽयमा॑सः	सुगन्तारः (यततिर्गतिकर्मा निघं० २।१४)	खूब चलने वाले
अश्वा॑ः	अश्वाः	घोड़े
र॑थः	रथः	रथ
यत्	यदा	जब
वा॒म्	युवयोः	तुम दोनों का
परि॑	परितः	चारों ओर
अर्णां॑सि	समुद्रान्	समुद्रों को
दीय॑त्	गच्छति (दीयतिर्गतिकर्मा निघं० २।१४)	जाता है

हि॒र॒ण्यया॑ः	हिरण्मयाः	सुनहरी
वा॒म्	युवयोः	तुम्हारे
प॒वय॑ः	चक्रवलयाः	पहिये के घेरे
प्रु॒षा॒य॒न्	सिञ्चन्ति	टपकाते हैं
मध्व॑ः	माधुर्यम् (कर्मणि षष्टी)	मिठास को
पिब॑न्तौ	पिबन्तौ	पीते हुए
उ॒षस॑ः	उषसः	उषाओं को
स॒चे॒थे॒	संगच्छेथे	तुमसाथ चलते हो

संस्कृतार्थः।

(हे अश्विनौ!) युवयोरश्वाः आकाशेषु सुगन्तारः सन्ति यदा युवयोः रथः समुद्रान् परिगच्छति, युवयोर्हिरण्मयाः चक्रवलयः (माधुर्यम्) सिञ्चन्ति, माधुर्यं पिबन्तौः (यदा युवाम्) उषसः संगच्छेथे ॥१॥

भाषार्थः ।

(हे अश्विनो !) आपके घोडे आकाशों में खूब चलने वाले हैं जब आपका रथ समुद्रों के चारों ओर चलता है, आपके सुनहरी पहिये के घेरे मिठास को टपकाते हैं (जब आप) मिठास को पीते हुए उषाओं के साथ चलते हो ॥ १ ॥

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११।

युवमत्यस्यावनक्षथोयद् विपत्मनोनर्यस्यप्रयज्योः । स्वसायद्
वांविश्वगूर्तीभराति वाजायेट्टेमधुपाविषेच ॥ २ ॥

युवम्	युवाम्	तुम दोनों
अत्यस्य	अश्वम् (कर्मणिषष्ठी)	घोड़े को

अव	अव+	-
नक्षथः	अव+नक्षथः आप्नुथः	पहुंच जाते हो
यत्	यदा	जब
विऽपत्मनः	पृथक् पतन्तम् (कर्मणिषष्ठी)	अलग उड़ने हुए को
नर्यस्य	नृभ्योहितम् (कर्मणिषष्ठी)	मनुष्यों के लिये हितकारी को
प्रऽयज्योः	प्रकर्षेणयजनीयम् (कर्मणिषष्ठी)	अत्यन्त पूज्य को
स्वसा	भगिनी	बहन
यत्	यदा	जब
वाम्	युवाम्	तुम दोनों को
विश्वऽगूर्ती०	हे सर्वस्तुत्यौ !	हे सब से स्तुति के योग्य
भराति	नयति	ले जाती है

वाजा॑य	बलाय	बल के लिये
इट्टे॑	स्तौति	स्तुति करता है
म॒धु॒ऽपौ॒	हे माधुर्यस्य पातारौ !	हे मिठासके पीने वालो
इ॒षे	अन्नाय	अन्न के लिये
च॒	च	और

संस्कृतार्थः ।

हे माधुर्यस्य पातारौ ! सर्वस्तुत्यौ ! (अश्विनौ !) यदा युवां पृथक्पतन्तं नृभ्यो हितं प्रकर्षेण यजनीयम् (च अश्वम्) आप्नुथः, यदा (च) युवां भगिनी नयति (तदा यजमानः), बलाय अन्नाय च स्तौति ॥ २ ॥

भावार्थः ।

हे मिठास के पीने वालो ! हे सब से स्तुति के योग्य (अश्विनो !) जब आप अलग उडने वाले मनुष्यों के हितकारी और अत्यन्त पूजनीय अश्व को पहुंचते हो, और जब आपको बहन लेजाती है, (जब

यजमान) बलके लिये और अन्न के लिये स्तुति करता है ॥ २ ॥

अश्व सूर्य है और बहन उषा है जो प्रभात में सब से पहिले आने वाले अश्विनों को अपने पश्चात् आने वाले सूर्य के पास ले जाती है ॥

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

युवंपयउस्रियायामधत्तं पक्व-
मामायामवपूर्व्यंगोः। अन्तर्यद्वनि
नोवामृतप्सू ह्वारोनशुचिर्यजतेहवि
ष्मान् ॥ ३ ॥

युवम्	युवाम्	तुम दोनों ने
पयः	दुग्धम्	दूध को
उस्रियायाम्	गवि (निघं०२।११)	गौ में

अधत्तम्	अव + अधत्तम् न्यस्तवन्तौस्थः	तुमने डाला है
पक्वम्	पक्वम्	पके हुए को
आमायाम्	अपक्वायाम्	न पकी हुई में
अव	अव +	–
पूर्व्यम्	प्राचीनम्	प्राचीन को
गोः	सूर्यस्य (निघं०१।४)	सूर्य के
अन्तः	मध्ये	बीच
यत्	यत्	जो
वनिनः	वृक्षस्य	वृक्ष के
वाम्	युवाम्	तुम दोनों के
ऋतप्सू	हे सत्यस्वरूपौ ! (निघं० ३।७)	हे सत्य के रूप

ह्वा॒रः	चोरः	चोर की
न	इव	न्याईं
शुचि॑ः	प्रकाशमान्	प्रकाशमान
यज॑ते	पूजयति	पूजता है
ह॒विष्मा॑न्	हविर्युक्तः	हवि से युक्त

संस्कृतार्थः ।

हे सत्य स्वरूपौ (अश्विनौ !) युवाम् अपक्वायां गवि सूर्यस्य प्राचीनं पक्वं दुग्धं न्यस्तवन्तौस्थः, यत् वृक्षस्य मध्ये चोरइव (प्रच्छन्नः) प्रकाशमान् (अग्निः) हविर्युक्तः (सन) युवां पूजयति ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

हे सत्य के रूप (अश्विनो !) आपने नपकी हुई गौ में सूर्य के प्राचीन पके हुए दूध को डाला है, जो आपको वृक्षके बीच में चोर की न्याईं छिपे हुए प्रकाश मान (अग्नि)हवि लिये हुए पूजते हैं ॥

सूर्य का प्राचीन पुण्य सूर्य का प्रकाश है जिसको अश्विनों ने पृथिवी रूपी गौ में डाला है, यही प्रकाश वृक्षों में चोर की न्याईं छिपा रहकर मथे जाने से अग्नि रूप में प्रकट होता है, और यजमान से अर्पण की हुई हवि को अश्विनों के ताईं पहुंचाता है।

अश्विनौदेवते, भुरिक् त्रिष्टुप्छन्दः ।१२।११।११।११

यु॒वंह॑घ॒र्मँमधु॑मन्त॒मत्र॑ये॒ऽपोनक्षो
दो॑ऽवृणीतमे॒षे । तद्वां॑नरावश्विना॒
पश्व॑इष्टी॒ रथ्ये॑वच॒क्राप्रति॑यन्ति॒
मध्व॑ः ॥ ४ ॥

यु॒वम्	युवाम्	तुम दोनों
ह॒	खलु	सचमुच
घ॒र्मँम्	तापम्	ताप को
मधु॑ऽमन्तम्	मधुरम्	सुहावने को

ऋ०मं०१सू०१८०मं०४ (५९.०६)

अत्र॑ये	अत्रये	अत्रि के लिये
अ॒पः	अपाम् (षष्ठ्यर्थे द्वितीया)	जलों की
न	इव	न्याई
क्षो॑दः	कणिकावृन्दम्	कणियों को
अ॒वृ॒णी॒त॒म्	सम्पादितवन्तौस्थः	तुम ने बनाया
ए॒षे	इच्छते	चाहते हुए के लिये
तत्	तस्मात् (विभक्तेर्लुक)	तिससे
वा॒म्	युवाभ्याम्	तुम्हारे लिये
न॒रौ॒	हे नरौ !	हे नरो
अ॒श्वि॒ना॒	हे अश्विनौ !	हे अश्विनो
पश्व॑ःऽइष्टिः	अग्नौ इष्टिः (सा०भा०)	अग्निमें इष्टि

रथ्या॑ऽइव	रथसम्बन्धीनीव	रथ सम्बधियों की न्याईं
च॒क्रा	चक्राणि	पहिये
प्रति॑	प्रति	की ओर
य॒न्ति॒	गच्छन्ति	जाते हैं
मध्व॑ः	मधुराः(सोमरसाः)	मीठे (सोमरस)

संस्कृतार्थः।

हे नरौ ! अश्विनौ ! युवां इच्छते अत्रये (अग्नेः) तापं अपां कणिकावृन्दमिव मधुरं खलु कृतवन्तौ स्थः, तस्मात् युवाभ्याम् अग्नौ इष्टिः (भवति) मधुराः (सोमरसाः) (च युवाम्) प्रति रथचक्राणि इव गच्छन्ति ॥ ४ ॥

भावार्थः।

हे नरो ! हे अश्विनो ! आपने इच्छा करते हुए अत्रि के लिये (अग्नि के) ताप को जलकी कणियों की न्याईं सुहावना बनाया। इस लिये आपके लिये अग्नि में इष्टि (होती है और) मीठे (सोम) रथके पहियों की न्याईं आपकी ओर जाते हैं ॥ ४ ॥

अत्रि को अग्नि से बचाने के लिये देखो पृ० ३८७१

अश्विनौ देवते, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः।११।१०।१३।११

आ वां॑ दा॒नाय॑ ववृतीय द॒स्रा गोरो

हे॑ण तौ॒ग्र्यो न जि॒व्रिः॑ । अ॒पः क्षो॒णी

स॑चते॒ मा॑हिना वां जू॒र्णो वा॒मक्षु॒रं॑हसो

यजत्रा ॥ ५ ॥

आ	आ +	–
वा॒म्	युवाम्	तुम दोनों को
दा॒नाय॑	दानाय	दान के लिये
व॒वृ॒ती॒य॒	आ + ववृतीय, आवर्तयामि	मैं फेरता हूं
द॒स्रा॒	हे उग्रौ !	हे भयान को
गोः	गोः	गौके

ओहैन्	स्तुत्या (आ०को०)	स्तुति से
तौ॒ग्र्यः	तुग्रस्य पुत्रः	तुग्र का पुत्र
न	इव	जैसे
जिव्रि॑ः	प्राचीनः	प्राचीन
अ॒पः	अपः	जलों को
क्षो॒णी०	पृथिवी	पृथिवी
स॒च॒ते॒	समवैति	प्राप्त करती है
महि॑ना	महत्त्वेन	महत्त्व से
वा॒म्	युवयोः	तुम्हारे
जू॒र्ण॑ः	जीर्णः	जीर्ण
वा॒म	युवयोः	तुम्हारी

अक्षु॑ः	पाशः	फांसी
अंह॑सः	पापस्य	पाप की
य॒ज॒त्रा॒	हे यष्टव्यो !	हे पूज्यो

संस्कृतार्थः ।

हे यष्टव्यो ! उग्रो ! (अश्विनौ!) (अहं) प्राचीनस्तुग्रपुत्र इव स्तुत्या युवां गोः दानाय (स्वंप्रति) आवर्तयामि युवयोर्महत्त्वेन पृथिवी अपः समवैति, युवयोः (कृपया च) पापस्य पाशः जीर्णः (भवति) ॥५॥

भावार्थः ।

हे पूजनीयो ! भयानक अश्विनो मैं प्राचीन तुग्र के पुत्र की न्याई स्तुति द्वारा आपको गौओं के दान के लिये (अपनी ओर) फेरता हूं, आपके महत्व से पृथिवी जलों को प्राप्त करती है, और आपकी (कृपा से) पाप की फांसी जीर्ण (होती है) ॥ ५ ॥

तुग्र के पुत्र के लिये देखो पृ० ३०१०

(४०.११) ऋ० [illegible]

अश्विनौ देवते, विराट् त्रिष्टुप् छन्दः ।११।११।१०।१०

नियद्युवेथे नियुतः सुदानू उपस्व
धाभिः सृजथः पुरन्धिम् । प्रेषद्वेषद्वा
तोनसूरिरा महेददे सुव्रतोनवाजम्॥६

नि	नि +	–
यत्	यदा	जब
युवेथे॰	नि+युवेथे, नियोजयथः	तुम जोड़ते हो
नियुतः	अश्वान्	घोड़ों को
सुदानू॰	हे कल्याणदानौ !	हे कल्याण के देने वाळो
उप	उप +	–
स्वधाभिः	अन्नैः	अन्नों के साथ

ऋ०मं०१।सू०१८०।मं०६ (७९१२)

सृजथः	उप+सृजथः, योजयथः (आ०को०)	जोड़ते हो
पुरम्ऽधिम्	बहु बुद्धिम्	बहुत बुद्धि का
प्रैषत्	हर्षन्ति (लेटिरूपम्)	खिन [illegible]
वेषत्	विचरन्ति (लेटिरूपम्)	विचरता है
वातः	वायुः	वायु
न	इव	की न्याईं
सूरिः	स्तोता	स्तोता
आ	आ+	–
महे	महत्त्वाय	महत्त्व के लिये
ददे	धारयति	धारण करता है
सुऽव्रतः	दृढनियमः	दृढ़ नियम वाल

न	इव	की न्याईं
वाजम्	बलम्	बल को

संस्कृतार्थः ।

हे कल्याणदानौ (अश्विनौ!) यदा (युवाम्) अश्वान् नियोजयथः (तदा) अन्नैर्बहुबुद्धि योजयथः, (अतः) स्तोता हर्षति वायुमिव (च) विचरति, महत्त्वाय दृढ नियमः इव बलम् (च) धारयति ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

हे कल्याण के देने वाले अश्विनो ! जब आप घोड़ों को जोड़ते हो (तब) अन्नों के साथ बहुत बुद्धि को जोड़ते हो, (इस लिये) स्तोता हर्षित होता है, वायु की न्याईं विचरता है, और महत्त्व के लिये दृढ़ नियम वाले की न्याईं बल का धारण करता है ॥ ६ ॥

जब अश्विन भक्त की स्तुति को स्वीकार करके उसके पास आते हैं, तब अन्न औ बहुत बुद्धि उसको प्रदान करते हैं, तब वह निर्भय होकर वायु की न्याईं विचरता है और बुद्धि द्वारा दृढ नियम वाले की न्याईं बल को प्राप्त करके महा पुरुष बनता है ।

अश्विनौ देवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

वृषंचिद्धिवांजरितारः सत्या वि-

ऋ०मं०१ सू०१८०।मं०७ ([illegible])

प॒न्याम॑हे॒ वि प॒णिर्हि॒तावा॑न् । अधा॑-
चि॒द्धिष्मा॑श्विनावनिन्द्या पा॒थोहि
ष्मा॑वृषणा॒वन्ति॑देवम् ॥ ७ ॥

व॒यम्	वयम्	हम
चि॒त्	खलु	सचमुच
हि	(पूरणः)	-
वा॒म्	युवाम्	तुम दोनों को
ज॒रि॒ता॑रः	स्तोतारः	स्तोता लोग
स॒त्याः	सत्याः	सच्चे
वि॒प॒न्याम॑हे	विशेषेणस्तुमः	खूब स्तुति करते हैं

वि	वि +	–
प॒णिः	व्यवहार बुद्धिः	व्यवहार की बुद्धि वाला
हि॒तऽवा॑न्	वि + हितवान्, व्यावृत्तः	अलग किया गया है
अध॑	इदानीम्	अब
घि॒त्	खलु	सचमुच
हि	(पूरणः)	–
स्म॒	(पूरणः)	–
अ॒श्वि॒नौ॒	हे अश्विनौ !	हे अश्विनौ
अ॒नि॒न्द्या॒	हे निन्दा रहितौ !	हे निन्दा से रहितो
पा॒थः	रक्षथः	रक्षा करो
हि	खलु	सचमुच
स्म॒	(पूरणः)	–

वृषणौ	हे वीरौ !	हे वीरो
अन्तिऽदेवम्	देवानामन्तिके वर्तमानम्	देवताओं के पास रहने वाले को

संस्कृतार्थः ।

हे अश्विनौ ! सत्याः स्तोतारो वयं युवां विशेषेण खलु स्तुमः, (अस्मात् स्थानात्) व्यवहारबुद्धिः व्यावृत्तः खलु, हे निन्दारहितौ वीरौ ! इदानीं देवानामन्तिके वर्तमानं रक्षथः ॥ ७ ॥

भावार्थः ।

हे अश्विनौ ! सच्चे स्तोता हम सचमुच आपकी खूब स्तुति करते हैं (इस स्थान से) व्यवहार की बुद्धि वाला अलग किया गया है, हे निन्दारहित वीरो ! अब देवताओं के समीप रहने वाले की रक्षा करो ॥७

जो व्यवहार की बुद्धि रखता हुआ भगनं को सचाई के समर्पण नहीं करता वह देव भक्त नहीं हो सकता ।

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

युवांचिद्धिष्माश्विनावनुद्यून्

विरुद्रस्यप्रस्रवणस्यसातौ । अग-

स्त्यो॑न॒रां॑नृ॒षु॒प्रश॑स्त॒ः काराधु॑नीव

चितय॒त्स॒हस्रैः॑ ॥ ८ ॥

यु॒वाम्	युवाम्	तुम दोनों को
चि॒त्	(पूरणः)	–
हि	खलु	सच मुच
स्म॒	(पूरणः)	–
अ॒श्वि॒नौ॒	हे अश्विनौ !	हे अश्विनो
अनु॑	अनु+	–
द्यून्	अनु+द्यून्, प्रति दिनम्	प्रति दिन
विरु॑द्रस्य	गर्जतः	गर्जते हुए की
प्र॒स्रव॑णस्य	प्रवाहस्य	प्रवाह की

सा॒तौ	प्राप्त्यै	प्राप्ति के लिये
अ॒गस्त्य॑ः	अगस्त्यः	अगस्त्य
न॒राम्	नराणाम्	मनुष्यों के
नृ॑षु	नेतृषु	नेताओं में
प्रश॑स्तः	प्रशंसनीयः	प्रशंसा के योग्य
काराधु॑नीऽइव	काराशब्दस्तस्य धूनयिता (पटह इव	नगारे की न्याईं
चि॒त॒य॒त्	चेतयति	चेत कराता है
स॒हस्रै॑ः	सहस्रैः (स्तोत्रैः)	हजारों (स्तोत्रों) से

संस्कृतार्थः।

हे अश्विनौ ! मनुष्याणां नेतृषु प्रशंसनीयोऽगस्त्यः गजंतः प्रवाहस्य प्राप्त्यै युवां खलु पटह इव सहस्रैः (स्तोत्रैः, प्रतिदिन चेतयति ॥ ८ ॥

भाषार्थः।

हे अश्विनो ! मनुष्यों के नेताओं में प्रशंसा के योग्य अगस्त्य गरजते हुए प्रवाह की प्राप्ति के लिये आपको सचमुच नागों की न्याईं सहस्रों स्तोत्रों से प्रति दिन चेत कराता है ॥ ८ ॥

गरजता हुआ प्रवाह, वृष्टि का घनका पक्ष का और सचाई का भी होसकता है।

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।१३।१३।१३।१३.

प्रयद्वहे॑थेमहि॒नारथ॑स्य॒ प्रस्य॑-
न्द्रायाथो॒मनु॑षो॒नहोता॑। ध॒त्तंसू॒रि
भ्य॑उ॒तवा॒स्वश्व्यं॒ नास॑त्यारयि॒षा
च॑:स्याम॥ ९॥

प्र	प्र+	—
यत्	यदा	जब

ऋ०मं०१ सू०१८० मं०९ (७२२०)

वर्ते॑थे॒०	प्र+वर्तेथे, प्रचरथ.	यात्रा करते हो!
म॒हि॒ना	महत्त्वेन सह	महत्त्व के साथ
रथ॑स्य	रथस्य	रथ के
प्र	प्र+	–
स्य॒न्द्रा॒	हे स्यन्दन शीलौ!	हे बरसाने वालो
या॒थ॒:	प्र+याथः, आगच्छथः	आते हो
मनु॑षः	मनुष्यस्य	मनुष्य के
न	इव	की न्याईं
होता॑	होता	होता
ध॒त्तम्	प्रयच्छतः	देते हो
सू॒रिभ्य॑ः	स्तोतृभ्यः	स्तोताओं के लिये

उ॒त	अपिच	और भी
वा॒	(पूरणः)	–
सु॒ऽअश्व्य॑म्	शोभनाश्वसमूहम्	सुन्दर घोड़ों को
नास॑त्या	हे असत्य रहितौ!	हे झूठ से रहितो
र॒यि॒ऽसाच॑ः	धनस्य भागिनः	धन के भागी
स्या॒म॒	स्याम	हम हों

संस्कृतार्थः।

हे स्यन्दनशीलौ ! यदा (युवाम्) रथस्य महत्त्वेन सह प्रचरथः मनुष्यस्य होता इव (च) आगच्छथः अपिच स्तोतृभ्यः शोभनाश्वसमूहं प्रयच्छथः तदा हे असत्यरहितौ ! (वयमपि) धनस्य भागिनः स्याम ॥ ९ ॥

भाषार्थः।

हे (धनके) बरसाने वालो, जब आप रथ के महत्व के साथ यात्रा करते हो (और) मनुष्य के होता

की न्याईं आते हो, और स्तोताओं के लिये सुन्दर घोड़ों के समूह को देते हो, (तब) हे झूठ से रहितो ! (हम भा) धन के भागी होवें ॥ ९ ॥

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।१११११११११।

तंवांरथंवयमद्याहुवेम स्तामैरश्विनासुवितायनव्यम् । परिष्टनेमिंपरिद्यामियानं विद्यामेषंवृजनं जीरदानुम् ॥ १० ॥

तम्	तम्	उसको
वाम्	युवयोः	तुम दोनों के
रथम्	रथम्	रथ को
वयम्	वयम्	हम

अद्या	अद्य	आज
हुवेम	आह्वयेम	हम बुलावें
स्तोमैः	स्तोत्रैः	स्तोत्रों से
अश्विना	हे अश्विनो !	हे अश्विनो
सुविताय	कल्याणाय	कल्याण के लिये
नव्यम्	नव्यम्	नवीन को
अरिष्टऽनेमिम्	अहिंसितचक्रवलयम्	न टूटने वाले पहिये के घेरे वाले को
परि	उपरि	ऊपर
द्याम्	द्याम्	द्यौ को
इयानम्	गच्छन्तम्	जाते हुए को
विद्याम	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें

इ॒षम्	अन्नम्	अन्न को
व॒जन॑म्	बलम्	बल को
जी॒रऽदा॑नुम्	शीघ्रदानशीलताम्	शीघ्रदानके स्वभावको

संस्कृतार्थः ।

हे अश्विनौ! द्युलोकस्योपरि गच्छन्तम् अहिंसितचक्रवलयम् (च) तं युवयोर्नव्यं रथं वयं कल्याणाय अद्य स्तोत्रैराह्वयाम, अन्नं बलं शीघ्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

हे अश्विनो ! द्युलोक के चारों ओर जाते हुए न टूटने वाले घेरे वाले उस आपके नए रथ को हम कल्याण के लिये आज बुलाते हैं, हम अन्न को बलको और शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ १० ॥

ऋ० मं० १ सू० १८१

अश्विनौ देवते, अगस्त्यऋषिः ।

विनियोगः—

१-९ । एतत् सूक्तं प्रातरनुवाकाऽऽश्विनशस्त्रयो स्त्रैष्टुभे छन्दसि विनियुक्तम् (आ० ।४।१५।२।

सूक्तका भावार्थ ।

हे अश्विनो ! यज्ञ की कामना करने वाले अत्यन्त प्रिय आप दोनों ने अन्न धन और जलों में से देने के लिये किस को ऊपर उठाया हुआ है, यह यज्ञ आप ही की प्रशंसा करता है ॥ १ ॥ हे अश्विनो ! वृष्टि के जल को पान करने वाले, वायु की न्याईं प्रचंड, द्यौ में रहने वाले, शीघ्र गामी, मन के तुल्य वेग वाले, सुन्दर पीठ वाले, स्वयं चमकने वाले पवित्र नर घोड़े आप को यहां पर लावें ॥ २ ॥ हे प्रशंसनीय देवो ! आप का रथ जो नदी की न्याईं ढलवान, चौड़ी पीठ वाला, मन से भी अधिक वेग वाला अपने को अग्रगण्य मानने वाला पूजनीय और नर है हमारे कल्याण के लिये यहां आवे ॥ ३ ॥ हे अश्विनो ! आप दोनों यहीं उत्पन्न हो कर पाप रहित शरीर से अपने नामों द्वारा स्तुति किये जाते हो, आप में से एक जयशील और बड़े बल का प्रेरण करने वाला है और दूसरा सौभाग्यवान द्यौ का पुत्र कहलाता है ॥ ४ ॥ हे अश्विनो ! आप में से एक का अत्यन्त चलने वाला सुनहरा रंग का महान रथ हम कामना करने वालों को लक्ष्य करके हमारे घरों को प्राप्त हो, हम दूसरे के घोड़ों को हवीरूपी अन्नों से मोटा करेंगे और अपने स्तोत्रों से आकाश को मथेंगे ॥ ५ ॥ हे अश्विनो !

आप में से एक का बलवनान रथ शरद्दतु को लाता हुआ बहुत अन्नों में विचरता है, दूसरे के गमनों से ऊपर की नदियां जलों से फूलती हैं और सींचती हुई हमारे पास आती हैं ॥ ६ ॥ हे जगत की व्यवस्था करने वाले अश्विनो! आप की दृढ़स्थिति के निमित्त ऋग् यजुः और सामात्मक तीन प्रकार की वाणी उच्चारण की गई है, आप समीप से स्तुति किये जाकर मुझ याचक की रक्षा करो. और चलते हुए और न चलते हुए पुकार को सुनो ॥ ७ ॥ और हे वीरो! आप के प्रदीप्त रूप को कहने वाली वह वाणी कुशा के तीन तह वाले यज्ञ गृह में मनुष्यों को बढ़ाती है, आपका वीर्यवान मेघ मनुष्यों को देने की इच्छा करता हुआ इस तरह फूलता है जैसे दूध सींचने के समय गौ के स्तन ॥८॥ हे अश्विनो! जैसे मैं सेवा के साथ स्तुति करता हुआ आपको बुलाता हूं, ऐसे विचार शील यजमान हवि से युक्त होकर अग्नि और उषाकी न्याईं प्रातःकाल में पूषा के तुल्य आप की स्तुति करता है, हम अन्न को बल को और शीघ्रदान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ९ ॥

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

कदुप्रेष्ठाविषांरयीणामध्वर्यन्ता
यदुन्निनीथोअपाम् । अयंवांयज्ञो
अकृतप्रशस्तिं वसुधितीअवितारा-
जनानाम् ॥ १ ॥

कत्	किम्	क्या
ऊ॑म्०	खलु	सच मुच
प्रेष्ठौ॑	प्रियतमौ	अत्यन्त प्यारे
इ॒षाम्	अन्नानि (कर्मणिषष्ठी)	अन्नों को
र॒यी॒णाम्	धनानि	धनों को
अ॒ध्व॒र्यन्ता॑	अध्वरंयज्ञंकामय मानौ	यज्ञ की कामना करते हुए
यत्	यदा	जब
उत्ऽनि॒-नी॒थः	उद्धारयथः	ऊपर उठाए हुए हो
अ॒पाम्	जलानि	जलों को
अ॒यम्	अयम्	यह

वाम्	युवयोः	तुम्हारी
यज्ञः	यज्ञः	यज्ञ
अक्रत	करोति (लोडर्थे लुङ्)	करता है
प्रऽशस्तिम्	प्रशंसाम्	प्रशंसा को
वसुऽधिती॰	हे धनस्य धातारौ!	हे धन के धारण करने वालो
अवितारा	हे रक्षितारौ !	हे रक्षा करने वालो
जनानाम्	मनुष्याणाम्	मनुष्यों के

संस्कृतार्थः ।

हे (अश्विनौ!) अन्नानां धनानां जलानाम् (च मध्ये) किम् खलु (अस्ति) यत् प्रियतमौ यज्ञस्य कामयमानौ (युवाम्) ऊर्ध्वंधारयथः, हे धनस्यधातारौ मनुष्याणां रक्षितारौ! अयंयज्ञोयुवयोः (एव) प्रशंसां करोति ॥ १ ॥

भावार्थः ।

हे अश्विनो! सच मुच अन्न धन ओर जलों के

बीच में रचा (है) जिसको यज्ञ के चाहने वाले अत्यन्त प्रिय आप ऊपर उठाए हुए हो, यह यज्ञ आपकी (ही) प्रशंसा करता है ॥ १ ॥

आशय यह है कि अन्न धन वा जल जो कुछ आप देने के लिये ऊपर उठाए हुए हैं, वह हम आर्य लोगों को दें, क्योंकि हम यज्ञ द्वारा आप को प्रशंसा कर रहे हैं ॥

अश्विनौ देवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।१ २।१ १।१ १।१ १।

आवामश्वासःशुचयःपयस्पा वातरं-
हसोदिव्यासोअत्याः । मनोजुवोवृ-
षणोवीतपृष्ठा एहस्वराजोअश्वि-
नावहन्तु ॥ २ ॥

आ	आ+	–
वाम्	युवाम्	तुम दोनों को
अश्वासः	अश्वाः	घोड़े

ऋ०मं०१ सू०१८१ मं०२ (४८३०)

शुच॑यः	पवित्राः	पवित्र
प॒य॒ःऽपाः	उदकस्यपातारः	जलके पीने वाले
वात॑ऽरंहसः	वायुरिवप्रचण्डाः	वायु की न्याईं प्रचंड
दि॒व्यास॑ः	दिविभवाः	द्यौ में होने वाले
अत्या॑ः	शीघ्रगामिनः	शीघ्र चलने वाले
म॒न॒ःऽजुव॑ः	मनोरइवेगवन्तः	मनकी न्याईं वेगवाले
वृष॑णः	पुंजातीयाः	नर
वी॒तऽपृ॑ष्ठाः	कान्तपृष्ठः	सुन्दर पीठ वाले
आ	(पूरणः)	–
इ॒ह	इह	यहां
स्व॒ऽराज॑ः	स्वतोदीप्यमानाः	अपने आप चमकते हुए

अश्विना	हे अश्विनौ !	हे अश्विनो !
वहन्तु	आ + वहन्तु	लावें

संस्कृतार्थः ।

हे अश्विनौ ! पवित्राः,(वृष्टि) उदकस्य पातारः, वायुरिव प्रचण्डाः, दिविभवाः, शीघ्रगामिनः, मनोवद्वेगवन्तः कान्तपृष्ठाः स्वतोदीप्यमानाः (च) पुंजातीयाः अश्वाः युवाम् इह आवहन्तु ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

हे अश्विनो ! (वृष्टि-) जल के पीने वाले, वायु की न्याईं प्रचंड, द्यौ में होने वाले, शीघ्रगामी, मन की तुल्य वेगवाले सुन्दर पीठ वाले, स्वयं चमकने वाले पवित्र नर घोड़े आप को यहां लावें ॥ २ ॥

अश्विनौ देवते, त्रिष्टुप् छन्दः ।११।११।११।११।

आ वां रथोऽवनिर्न प्रवत्वान्त्सृप्र-
वन्धुरः सुवितायगम्याः । वृष्णः

ऋ०मं०१ सू०१८१ मं०३ (४९३२)

स्थातारा॒मन॑सो॒जवी॑यानहं॑पू॒र्वो॑यज॒-

तोधि॑ष्ण्या॒यः ॥ ३ ॥

आ	आ+	–
वा॒म्	युवयोः	तुम दोनों का
र॑थः	रथः	रथ
अ॒वनि॑ः	नदी	नदी
न	इव	की न्याईं
प्र॒ऽवत्वा॑न्	प्रवणः	ढलवान
सृ॒प्रऽव॑न्धुरः	विस्तीर्णपीठः	चौड़ी बैठकवाला
सु॒वि॒ताय॑	कल्याणाय	कल्याण के लिये

ग॒म्या॒ः	आ+गम्याः, आगच्छतु (पुरुषव्यत्ययः)	आवे
वृष्णः॑	पुंजातीयः	नर
स्था॒ता॒रा॒	हे (रथे)स्थातारौ!	हे (रथ में) ठैरने वालो
मन॑सः	मनसः	मन से
जवी॑यान्	वेगवान्	वेगवाला
अ॒ह॒म्ऽपू॒र्वः	आत्मपुरोमानी	अपने को आगे मानने वाला
य॒ज॒तः	यष्टव्यः	पूजनीय
धि॒ष्ण्या॒	हे प्रशंसनीयौ !	हे प्रशंसा के योग्य देवो
यः	यः	जो

संस्कृतार्थः ।

हे प्रशंसनीयौ ! (रथे) स्थातारौ ! युवयोः रथः (अस्मत्) कल्याणाय (अत्र) आगच्छतु, यः नदीव-

प्रवणः विस्तीर्णपीठः, मनसः (अपि) वेगवान् आत्मपुरोमानी पुंजातीयः (चाऽस्ति) ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

हे (रथ में) बैठने वालो ! प्रशंसा के योग्यो ! आप का रथ (हमारे) कल्याण के लिये (यहां) आवे, जो नदी की न्याईं ढलवान, चौड़ी पीठ वाला, मन से भी अधिक वेग वाला अपने को अगवय्या मानने वाला, पूजनीय (और) नर है ॥ ३ ॥

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।ऽऽ।

इ॒हेह॑जा॒तासम॑वावशीतामरे॒
पसा॑त॒न्वा॒३॑नाम॑भिः॒स्वैः । जि॒ष्णु-
र्वा॑म॒न्यःसु॒मख॑स्यसू॒रि र्दि॒वो अ॒न्यः
सु॒भ॑गः पु॒त्रऊ॑हे ॥ ४ ॥

इ॒हऽइ॑ह	अत्रैव	यहां ही

जाता	उत्पन्नौ	उत्पन्न हुए २
सम्	सम्+	-
अवावशीताम्	सम्+अवावशीताम्, संस्तूयेथे (यास्कः)	आप दोनों खूब स्तुति किये जाते हो
अरेपसा	पापरहितेन	पाप रहित से
तन्वा	शरीरेण	शरीर से
नामऽभिः	नामभिः	नामों से
स्वैः	स्वकीयैः	अपनों से
जिष्णुः	जयशीलः	जयशील
वाम्	युवयोः (मध्ये)	तुम दोनों में से
अन्यः	एकः	एक
सुऽमखस्य	महतोबलस्य (यास्कः)	बड़े बल का

सू॒रिः	प्रेरकः	प्रेरक
दि॒वः	दिवः	द्योका
अ॒न्यः	द्वितीयः	दूसरा
स॒ऽभगः॑	सौभाग्यवान्	सौभाग्य वाला
पु॒त्रः	पुत्रः	पुत्र
ऊ॒हे॒	उह्यते (यास्कः)	कहा जाता है

संस्कृतार्थः ।

(हे अश्विनौ !) अत्रैव उत्पन्नौ (युवाम्) पापरहितेन शरीरेण स्वकीयैर्नामभिः संस्तूयेथे युवयोः (मध्ये) एकः जयशीलः महतोबलस्य प्रेरकः (चास्ति) द्वितीयः (च) सौभाग्यवान् दिवःपुत्रः कथ्यते ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे अश्विनो ! आप यहीं उत्पन्न हो कर पाप रहित शरीर से अपने नामों द्वारा स्तुति किये जाते

हो, आप दोनों में से एक जयशील (और) बड़े बल के प्रेरण करने वाला (है और) दूसरा सौभाग्यवान् द्यौ का पुत्र कहलाता है॥ ४॥

खूब बल का प्रेरक वायु और द्यौ का पुत्र आदित्य, अर्थात् वायु और सूर्य को मिलाकर अश्विन नाम से कहागया है। यहाँ उत्पन्न होकर अर्थात् ऋषियों की कल्पना से उत्पन्न होकर।

अश्विनौदेवते, भुरिक् त्रिष्टुप्छन्दः।१२।११।११।११

प्रवांनिचेरुःककुहोवशाँअनु पिशङ्गरूपःसदनानिगम्याः।
हरीअन्यस्यपीपयन्तवाजैर्मथ्नारजांस्यश्विनाविघोषैः॥५॥

प्र	प्र+	–
वाम्	युवयोः (मध्ये)	तुम दोनों में से

ऋ०मं०१सू०१८१मं०५ (४९३८)

नि॒ऽचे॒रुः	नितरांचरणशीलः	अत्यन्त चलने वाला
क॒कु॒हः	महान् (निघं० ३।३)	महान्
वशा॑न्	कामयमानान्	कामना करने वालों को
अनु॑	अनुलक्ष्य	लक्ष्य कर
पि॒शङ्ग॑ऽरूपः	पीतवर्णः	सुनहरी रंगवाला
सद॑नानि	गृहाणि	घरों को
ग॒म्याः॒	प्र+गम्याः, प्राप्नोतु (पुरुष व्यत्ययः)	प्राप्त हो
हरी॑०	अश्वौ	घोड़ों को
अ॒न्यस्य॑	अन्यस्य	दूसरे के
पी॒पय॑न्त	आप्याययिष्यन्ति	मोटा करेंगे

वाजैः	अन्नैः	अन्नों से
मथ्ना	वि + मथ्ना विमथिष्यन्ति	खूब मथेंगे
रजांसि	आकाशान्	आकाशों को
अश्विना	हे अश्विनौ !	हे अश्विनो
वि	वि +	–
घोषैः	स्तोत्रैः	स्तोत्रों से

संस्कृतार्थः ।

हे अश्विनौ ! युवयोः (मध्ये एकस्य) नितरां चरणशीलः पीतवर्णः महान् (रथः) कामयमानाननुलक्ष्य (तेषाम्) गृहाणि प्राप्नोतु, (ते) अन्यस्य अश्वौ अन्नैः सम्यगाप्याययिष्यन्ति स्तोत्रैः (च) आकाशान् विमथिष्यन्ति ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे अश्विनो ! आप दोनों में से (एक) का

अत्यन्त चलने वाला सुनहरी रंग का महान रथ (हम) कामना करने वालों को लक्ष्यकर(उनके) घरों को प्राप्त हो,(वे) दूसरे के घोड़ों को अन्नों से मोटा करेंगे और स्तोत्रों से आकाशों को खूब मथेंगे ॥५॥

दोनों में से एक का, अर्थात् सूर्य का दूसरे के घोड़ों को अर्थात् वायु के घोड़ों को।

अश्विनौ देवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

प्रवांशरद्वान् वृषभोननिष्षाट्
पूर्वीरिषश्चरतिमध्वइष्णन्। एवैर-
न्यस्यपीपयन्तवाजैर्वेषन्तीरूर्ध्वान-
द्योनआगुः ॥ ६ ॥

प्र	प्र +	–
वाम्	युवयोः (मध्ये)	तुम दोनों में से

श॒रत्ऽवा॑न्	शरद्वान्	शरद् वाला
वृ॒ष॒भः	वृषभः	बैल
न	इव	की न्याईं
नि॒ष्षाट्	बलवान्	बलवान
पू॒र्वीः	बहूनि	बहुतों को
इष॑ः	अन्नानि	अन्नों को
च॒र॒ति॒	विचरति (आ०को०)	विचरता है
मध्व॑ः	माधुर्य्यम् (कर्मणिषष्ठी)	मिठास को
इ॒ष्णन्	प्राप्नुवन्	प्राप्त करता हुआ
एवै॑ः	गमनैः	गतियों से
अ॒न्यस्य॑	अन्यस्य	दूसरे की

पी॒पय॑न्त	आप्यायन्ति	फूलती हैं
वाजै॑ः	जलैः (आ०को०)	जलों से
वेष॑न्तीः	सिञ्चन्त्यः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	सींचती हुई
ऊ॒र्ध्वाः	ऊर्ध्वाः	ऊंचीं
न॒द्य॑ः	नद्यः	नदियां
न॒ः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
आ	आ +	–
अ॒गु॒ः	आ+अगुः आगच्छन्ति (लडर्थे लुङ्)	आती हैं

संस्कृतार्थः ।

(हे अश्विनौ !) युवयोर्मध्ये (एकस्य) वृषभ इव बलवान् शरद्वान् (रथः) माधुर्यं प्राप्नुवन् (सन्) बहुषुअन्नेषु विचरति; अन्यस्यगमनैः ऊर्ध्वाः नद्यः

जलैराप्याययन्ति, सिञ्चन्त्यः (च) अस्मत्समीपे आगच्छन्ति ॥ ६ ॥

भावार्थः ।

हे अश्विनो ! आप दोनों में से (एक का) बैल की न्याईं बलवान शरद् वाला (रथ) मिठास को प्राप्त करता हुआ बहुत अन्नों में विचरता है, दूसरे के गमनों से ऊपर की नदियां जलों से फूलती हैं, और सींचती हुईं हमारे पास आती हैं ॥ ६ ॥

दोनों में से एक का अर्थात् सूर्य का रथ शरदृतु में अन्नों को पकाता हुआ चलता है, दूसरे अर्थात् वायु के गमनों से बादल जलों से फूल कर हमारे खेतों को सीचते हैं।

अश्विनौ देवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।१३।१३।१३।१३।

असर्जि॑वां॒स्थवि॑रावेधसा॒गीर्बा॒ळ्-
हे॑अश्विना॒त्रेधाक्षर॑न्ती । उ॑पस्तु-
ताववतं॒नाध॑मानं॒ यामन्॒नयाम॑ञ्छृ-
णु॒तंह॑वंमे ॥ ७ ॥

ऋ०मं०१सू०१८१मं०७ (५५७७)

अस॑र्जि	सृष्टा	छोड़ी गई है
वा॒म्	युवयोः	तुम दोनों की
स्थवि॑रा	प्राचीना	प्राचीन
वे॒ध॒सा॒	हे विधातारौ !	हे व्यवस्था करने वालो
गीः	वाणी	वाणी
बा॒ळ्हे	दृढस्थैर्ये (निमित्तभूते)	दृढ़ स्थिति के निमित्त
अ॒श्वि॒ना॒	हे अश्विनौ !	हे अश्विनो
त्रे॒धा	त्रिप्रकारेण	तीन प्रकार से
क्षर॑न्ती	प्रचलन्ती	खूब चलती हुई
उप॑ऽस्तुतौ	सामीप्येनस्तुतौ (सत्याम्)	पास में स्तुति करने पर
अ॒व॒त॒म्	रक्षतम्	रक्षाकरो

नाध॑मानम्	याचमानम्	मांगते हुए को
याम॑न्	गमने	चलने में
अयाम॑न्	नगमने	न चलने में
शृ॒णु॒तम्	शृणुतम्	सुनो
हव॑म्	आह्वानम्	पुकार को
मे॒	मम	मेरी

संस्कृतार्थः ।

हे विधातारौ ! अश्विनौ ! युवयोः दृढस्थितये त्रिप्रकारेण प्रचलन्ती प्राचीना (वेद-) वाणी सृष्टा, (युवाम्) सामीप्येनस्तुतौ (सत्याम्) याचमानम् रक्षतम् , गमने नगमने (च) मम आह्वानं शृणुतम् ॥ ७ ॥

भावार्थः ।

हे व्यवस्था करने वाले अश्विनो ! आप की दृढस्थिति के निमित्त तीन प्रकार से चलती हुई

प्राचीन (वेद-) बाणी छोड़ी गई है, आप समीप से स्तुति करने पर याचक की रक्षा करो, और चलते हुए और न चलते हुए मेरी पुकार को सुनो ॥ ७ ॥

तीन प्रकारसे चलती हुई अर्थात् ऋक् यजुः और साम रूप से उच्चारण की हुई ॥

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः।१ १।१ १।१ १।१ १।

उ॒तस्यावां॒रुश॑तो॒वप्स॑सो॒गीस्त्रि॑-
व॒र्हिषि॒सद॑सिपिन्वते॒नॄन्। वृषावां-
मे॒घो॑वृषणापीपाय॒गोर्नसे॒के॑मनुषोद-
श॒स्यन्॥ ८॥

उ॒त	अपिच	और भी
स्या	सा	वह
वा॒म्	युवयोः	तुम दोनों के

रुशतः	प्रदीप्तस्य	प्रकाश वाले के
वप्ससः	रूपस्य	रूप के
गीः	वाणी	वाणी
त्रिऽबर्हिषि	त्रिधाऽऽस्तृतबर्हिष्के	तीन तरह बिछी हुई बर्हिवाले में
सदसि	यज्ञगृहे	यज्ञ गृह में
पिन्वते	आप्याययति	बढ़ाती है
नॄन्	मनुष्यान्	मनुष्यों को
वृषा	वीर्य्यवान्	वीर्यवाला
वाम्	युवयोः	तुम्हारा
मेघः	मेघः	मेघ
वृषणा	हे वीरौ !	हे वीरो
पीपाय	प्यायितवान्	फूला है

गोः	गौः	गौ
न	इव	न्याईं
सेके	(पयसः) सेचन काले	(दूध) सींचने के समय
मनुषः	मनुष्यान्	मनुष्यों को
दशस्यन्	दातुमिच्छन्	देने की इच्छा करता हुआ

संस्कृतार्थः।

अपिच हे वीरौ! युवयोः प्रदीप्तस्य रूपस्य (प्रख्यापयित्री) सा वाणी त्रिधाऽऽस्तृनबर्हिष्के यज्ञगृहे मनुष्यान् आप्याययति, युवयोः वीर्यवान् मेघः मनुष्यान् दातुमिच्छन् (पयसः) सेचन काले गौरिव प्यायितवान् ॥ ८ ॥

संस्कृतार्थः।

और हे वीरो! आप दोनों के प्रदीप्त रूप (के कहने वाली) वह बाणी तीन तहकी कुशा वाले यज्ञ के घर में मनुष्यों को बढ़ाती है, आप का वीर्यवान मेघ मनुष्यों को देने की इच्छा करता हुआ (दूध) सींचने के समय गौकी न्याईं फूला है॥ ८॥

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः।१ १।१ १।१ १।१ १।

युवांपूषेवाश्विनापुरन्धिरग्नि
मुषांनजरतेहविष्मान् । हुवेयद्वांव-
रिवस्यागृणानो विद्यामेषंवृजनंजीर-
दानुम् ॥ ९ ॥

युवाम्	युवाम्	तुम दोनों को
पूषाऽइव	पूष सदृशौ	पूषा जैसों को
अश्विना	हे अश्विनौ !	हे अश्विनो !
पुरम्ऽधिः	बहुधीमान्	बहुत विचारशील
अग्निम्	अग्निम्	अग्नि को
उषाम्	उषसम्	उषा को

ऋ०मं०१ सू०१८१ मं०९ (७९५०)

न	इव	जैसे
जरते	स्तौति	स्तुति करता है
हविष्मान्	हविर्युक्तः	हविसे युक्त
हवे	आह्वयामि	मैं बुलाता हूं
यत्	यत्	जो
वाम्	युवाम्	तुम दोनों को
वरिवस्या	परिचर्यया	सेवा के साथ
गृणानः	स्तुवन्	स्तुति करता हुआ
विद्याम	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इषम्	अन्नम्	अन्न को
वृजनम्	बलम्	बल को
जीरऽदानुम्	शीघ्रदानशीलताम्	शीघ्र दान के स्वभाव को

संस्कृतार्थः ।

हे अश्विनौ ! बहुधीमान् हविर्युक्तः (यजमानः) पूषसदृशौ युवाम् अग्निमिव उषसमिव (च) स्तौति यत् परिचर्यया स्तुवन् (अहम्) युवामाह्वयामि, (वयम्) अन्नं बलं शीघ्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥९॥

भाषार्थः ।

हे अश्विनो ! बहुत विचार शील हवि से युक्त (यजमान) पूषा जैसे आप दोनों की अग्नि (और) उषा की न्याईं स्तुति करता है, जो सेवा के साथ स्तुति करता हुआ (मैं) आप को बुलाता हूं, (हम) अन्न को बल को और शीघ्र दान के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ९ ॥

अग्नि और उषा की न्याईं अर्थात प्रातः काल में ।

ऋ०मं०१ सू०१८२

अश्विनौदेवते, अगस्त्यऋषिः ।

विनियोगः-

१-८। एतत्सूक्तं प्रातरनुवाकाश्विनशस्त्रयोर्जागतेछन्दसि विनियुक्तम् (आ० ४।१५।२) ।

सूक्त का भावार्थ ।

हे बुद्धिमान पुरुषो ! यह सदाचार रहा है, सब ओर से यज्ञ भूमि को खूब सजाओ, यह वीर्यवान् घोड़ों वाला अश्विनों का रथ है, आप हर्षित हो, यहां बुद्धि के प्रेरण करने वाले, स्तुति के योग्य, विश्पला के धनरूप, द्यौ के पुत्र, सुकर्मा के लिये पवित्र नियमों वाले अश्विन विद्यमान हैं ॥ १ ॥ हे अश्विनो ! अत्यन्त इन्द्र जैसे, अत्यन्त मरुतों जैसे, स्तुति के योग्य, भयानक, कर्म में तत्पर, रथ वालों में श्रेष्ठ आप दोनों, मिठास से लदे हुए पूर्ण रथ से यात्रा करते हो, उस से आप दोनों हवि देने वाले भक्त की ओर पधारो ॥ २ ॥ हे भयानक अश्विनो! यहां बैठे क्या करते हो, जो हवि न देने वाला मनुष्य है, वह तो पूजा जाता है, उस को उलांघ कर उस कञ्जूस के प्राण को नाश करो, और स्तुति शील ऋषि के तांई प्रकाश को दो ॥ ३ ॥ हे झूठ से रहित अश्विनो ! आप चारों ओर से भौंकते हुए इन कुत्तों को चबा डालो, इन शत्रुओं का नाश करो, आप उनको जानते ही हो, स्तुति करने वालों के प्रत्येक वचन को बहु मूल्य करो, और मेरे स्तोत्र की रक्षा करो ॥ ४ ॥ हे अश्विनो ! आपने तुग्र के पुत्र के लिये समुद्र में इस चेतन और परों वाली नाव को बनाया, जिस के द्वारा देवताओं में लगे हुए मन से युक्त उस को निकाला और महान जल समूह से सहज में बढ़े. ॥ ५ ॥ जलों के बीच नीचे

सिर करके गिरे हुए और आश्रय से रहित अन्धकारमें डूबे हुए तुग्र के पुत्र को समुद्रमें आनन्द करने वाली अश्विनों से भेजी हुई चार नावें पार करती हैं ॥ ६ ॥ समुद्र के बीच कौनसा निश्चल वृक्ष था, जिसके साथ प्रार्थना करता हुआ तुग्र का पुत्र ऐसे चिमटगया जैसे डालियों से पक्षी चिमट जाता है, हे अश्विनो ! आपने कीर्तिमान होने के लिये उसका उद्धार किया ॥ ७ ॥ हे झूठ से रहित नरो ! वह स्तोत्र आप को अनुकूल हो,जो आज आप दोनों के लिये सोम यज्ञ के स्थान से हम मान के पुत्रों ने उच्चारण किया है, हम अन्न को बल को और शीघ्र दान देने के स्वभावको प्राप्त करें ॥८॥

अश्विनौदेवते, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२

अभूदिदंवयुनमोषुभूषता रथो-
वृषण्वान्मदतामनीषिणः । धियं-
जिन्वाधिष्ण्याविश्पलावसू दिवो-
नपातासुकृतेशुचिव्रता ॥ १ ॥

अभूत्	अभूत्	हुआ है
इदम्	इदम्	यह

ऋ०मं०१ सू०१८२ मं०१ (४९५४)

वयुनम्	सदाचारः (आ०को०)	सदाचार
ओ०	आ + (उद्दतिपूरणः)	–
सु	सु +	–
भूषत	आ+सु+भूषत, सर्वतोभूषयत	सब ओर से खूब सजाओ
रथः	रथः	रथ
वृषणऽवान्	वीर्यवद्भ्यामुपेतः	वीर्यवानों से युक्त
मदत	हृष्यत	हर्षित हों
मनीषिणः	हे मेधाविनः !	हे बुद्धिमानो
धियम्ऽजिन्वा	बुद्धेःप्रेरकौ	बुद्धि के प्रेरण करने वाले।
धिष्ण्या	स्तुत्यौ	स्तुति के योग्य

विश्पलावसू	विश्पलायाः धनरूपौ	विश्पला के धन रूप
दिवः	दिवः	द्यौ के
नपाता	पुत्रौ	पुत्र
सुऽकृते	सुकर्मणे	शुभ कर्म वाले के लिये
शुचिऽव्रता	पवित्रनियमौ	पवित्र नियम वाले

संस्कृतार्थः ।

हे मेधाविनः ! अयं सदाचारोऽभूत् (यूयम्) सर्वतो भूषयत, (अयम्)वीर्यवद्भ्याम् (अश्वाभ्याम्) उपेतो रथः (अस्ति यूयम्) हृष्यत (अत्र) बुद्धेः प्रेरकौ स्तुत्यौ विश्पलायाः धनरूपौ, दिवःपुत्रौ, सुकर्मणे पावत्रनियमौ (अश्विनौ) विद्येते ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

हे बुद्धिमानो ! यह सदाचार रहा है (आप) सब ओर से खूब सजाओ, (यह) वीर्यवान घोड़ों

वाला रथ है, आप हर्षित हों (यहां) बुद्धि के प्रेरण करने वाले, स्तुति के योग्य, विश्पला के धन रूप, द्यौ के पुत्र, सुकर्मा के लिये पवित्र नियम वाले (अश्विन) विद्यमान हैं ॥ १ ॥

विश्पला के धन रूप इसलिये कि अश्विनों ने विश्पला को लोहे की टांग दी थी (देखो पृ० २८४९)

अश्विनौदेवते, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२

इन्द्र॑तमा॒हिधिष्ण्या॑मरु॒त्त॑मा
द॒स्रादंसि॑ष्ठार॒थ्या॑र॒थीत॑मा। पू॒र्णं-
रथं॑वहेथे॒मध्व॒आचि॑तं॒ तेन॑दा॒श्वांस॒
मुप॑याथोअश्विना ॥ २ ॥

इन्द्र॑ऽतमा	इन्द्रसदृशतमौ	अत्यन्त इन्द्र जैसे
हि	खलु	सच मुच
धिष्ण्या॑	स्तुत्यौ	स्तुति के योग्य

(४९५७) ऋ०मं०१ सू०१८२ मं०२

मरुत्ऽतमा	मरुत्सदृशतमौ	अत्यन्त मरुतों जैसे
दस्रा	उग्रौ	भयानक
दंसिष्ठा	कर्मिष्ठौ	कर्म में तत्पर
रथ्या	रथवन्तौ	रथ वाले
रथिऽतमा	रथिषु श्रेष्ठौ	रथवानों में श्रेष्ठ
पूर्णम्	पूर्णम्	पूर्ण को
रथम्	रथम्	रथ को
वहेथे०	नयथः	तुम ले चलते हो
मध्वः	माधुर्येण (तृतीयार्थे षष्ठी)	मिठास से
आऽचितम्	भाराक्रान्तम्	लदे हुए को
तेन	तेन	उस से

दा॒श्वांस॑म्	(हविषः)दातारम्	(हवि) देने वाले (भक्त)को
उप॑	प्रति	की ओर
या॒थ॒:	आगच्छथ	पधारो
अ॒श्वि॒ना॒	हे अश्विनौ !	हे अश्विनो

संस्कृतार्थः ।

हे अश्विनौ ! इन्द्रसदृशतमौ, मरुत्सदृशतमौ, स्तुत्यौ, उग्रौ, कर्मिष्ठौ, रथवन्तौ, रथिषुश्रेष्ठौ (च युवाम्) माधुर्य्यं भाराक्रान्तं पूर्णं रथं नयथः, तेन (हविषः) दातारं प्रति आगच्छथः ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

हे अश्विनो ! अत्यन्त इन्द्र जैसे,अत्यन्त मरुतों जैसे, स्तुति के योग्य, भयानक, कर्म में तत्पर, रथ वाले,रथवानों में श्रेष्ठ (आप दोनों) मिठास से लदे हुए पूर्ण रथ को ले चलते हो,उस से (हवि) देने वाले की ओर पधारो ॥ २ ॥

अश्विनौदेवते, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२

किमत्रदस्राकृणुथः किमासाथे
जनोयःकश्चिदहविर्महीयते । अ-
तिक्रमिष्टंजुरतंपणेरसुं ज्योतिर्वि-
प्रायकृणुतंवचस्यवे ॥३॥

किम्	किम्	क्या
अत्र	अत्र	यहां
दस्रा	हे उग्रौ !	हे भयानको !
कृणुथः	कुरुथः	करते हो
किम्	किम्	क्या
आसाथे॰	उपविशथः	बैठे हो

ऋ०मं०१ सू०१८२ मं०३ (५९१०)

ज॑नः	मनुष्यः	मनुष्य
यः	यः	जो
कः	कः+चित्	कई
चि॒त्	+चित्	–
अह॑विः	हवीरहितः	हवि से रहित
म॒ही॒यते॑	पूज्यते	पूजा जाता है
अति॑	अति+	–
क्र॒मि॒ष्ट॒म्	अति+क्रमिष्टम्, उल्लङ्घयतम्	उलांघो
जु॒रत॑म्	नाशयतम्	नाश करो
प॒णेः	कृपणस्य	कंजूस के
असु॑म्	प्राणम्	प्राण को

ज्योतिः	प्रकाशम्	प्रकाश को
विप्राय	ऋषये	ऋषि के लिये
कृणुतम्	कुरुतम्	करो
वचस्यवे	स्तुतिशीलाय	स्तुतिशीलकेलिये

संस्कृतार्थः।

हे उग्रौ ! अश्विनौ ! युवाम्) अत्र कि कुरुथः, किमुपविशथः, यो हर्वीरहितः कश्चिन्मनुष्यः (अस्ति सः) पूज्यते, (तम्) उल्लङ्घयतम्, (तस्य) कृपणस्य प्राणं नाशयतम्, स्तुतिशीलाय ऋषये (च) प्रकाशं कुरुतम् ॥ ३ ॥

भावार्थः।

हे भयानक अश्विनो! आप दोनों यहां क्या करते हो, क्या बैठे हो, जो कोई हवि न देने वाला मनुष्य (है वह) पूजा जाता है, (उस को) उल्लंघन करो, उस कंजूस के प्राण को नाश करो, (और) स्तुति शील ऋषि के तांईं प्रकाश को दो ॥ ३ ॥

ऋ०सं०१सू०१८२ मं०४ (७९१२)

अश्विनौदेवते, जगतीछन्दः १२।१२।१२।१२

ज॒म्भय॑त॒मभितो॒राय॑त॒ःशुनो॑

ह॒तंमृधो॑वि॒दथु॒स्तान्य॑श्विना । वाचं॑

वाचंजरि॒तूर॒त्निनीं॑कृतमु॒भाशं॑संना

सत्यावतंम॒म ॥ ४ ॥

ज॒म्भय॑तम्	चर्वयतम्	चबा डालो
अ॒भि॑तः	आभतः	चारों ओर से
राय॑तः	शब्दयतः (रैशब्दे)	भौंकते हुओं को
शु॑नः	शुनः	कुत्तों को
ह॒तम्	नाशयतम्	नाश करो
मृ॑धः	शत्रून्	शत्रुओं को

विदथुः	जानीथः	तुम जानते हो
तानि	तानि	उनको
अश्विना	हे अश्विनौ !	हे अश्विनो !
वाचम्वाचम्	वाचंवाचम्	प्रत्येक वाणी को
जरितुः	स्तोतुः	स्तोता की
रत्निनीम्	बहुमूल्याम्	बहुमूल्य को
कृतम्	कुरुतम्	करो
उभा	उभौ	तुम दोनों
शंसम्	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
नासत्या	हे असत्यरहितौ !	हे झूठ से रहितो
अवतम्	रक्षतम्	रक्षा करो

मम	मम	मेरे

संस्कृतार्थः ।

हे असत्य रहितौ ! अश्विनौ ! (युवाम्) अभितः शब्दयतः शुनः चर्वयतम्, (तान्) शत्रून् विनाशयतम्, (युवाम्) तानि (शत्रुवृन्दानि) जानीथः (युवाम्) स्तोतुः प्रत्येकां वाचं बहु मूल्यां कुरुतम्, मम स्तोत्रम् (च) रक्षतम् ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे झूठ से रहित अश्विनो ! (आप) चारों ओर से भौंकते हुए कुत्तों का चबा डालो, (उन) शत्रुओं का नाश करो, आप उनको जानते हो, (आप) स्तुति करने वाले के प्रत्येक वचन को बहुमूल्य करो और मेरे स्तोत्र की रक्षा करो ॥ ४ ॥

भौंकते हुए कुत्ते हमारी निन्दा करने वाले मनुष्य ।

अश्विनौदेवते, जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२

युवमेतंचक्रथः सिन्धुषु प्लवमा
त्मन्वन्तंपक्षिणंतौग्र्यायकम् । येन

(४३३५) ऋ०मं०१ सू०१८२ मं०५

दे॒वत्रामन॑सानि॒रूह॑थु॒ः सु॒पप्त॒नीपे॑त
थु॒ःक्षोद॑सोम॒हः ॥ ५ ॥

यु॒वम्	युवाम्	तुम दोनों ने
ए॒तम्	एतम्	इस को
च॒क्र॒थु॒ः	कृतवन्तौ	बनाया
सिन्धु॑षु	समुद्रेषु	समुद्रों में
प्ल॒वम्	नावम्	नाव को
आ॒त्म॒न् ऽवन्त॑म्	सत्ववन्तम्	चेतन को
प॒क्षिण॑म्	पक्षोपेतम्	परों वाले को

ऋ०मं०१ सू०१८२ मं०५ (४९११)

तौ॒ग्र्या॑य	तुग्रपुत्राय	तुग्र के पुत्र के लिये
क॒म्	(पूरणः)	–
ये॑न	येन	जिस के द्वारा
दे॒व॒ऽत्रा	देवेषु	देवताओं में
मन॑सा	मनसा	मन से
निः॒ऽऊ॒हथुः॑	निर्गमितवन्तौ	निकाला
सु॒ऽप॒प्त॒नि	शोभनपतनं यथाभवति	सुन्दर उड़ने वाले हो कर
पे॒त॒थुः	उत्पेतथुः	उड़े
क्षो॑दसः	उदकात् (निघं० १।१२)	जल से
म॒हः	महतः	महान से

संस्कृतार्थः ।

(हे अश्विनौ !) युवां तुग्रपुत्राय समुद्रेष्वेतं सत्व-

वन्तं पक्षोपेतम् (च) नावं कृतवन्तौ, येन देवेषु (रतेन) मनसा (युक्तं तम्) निर्गमितवन्तौ, महतो जलौघात् (च) शोभनपतनौ (भूत्वा,) उत्पेतथुः ॥५॥

भाषार्थः।

(हे अश्विनो !) आपने तुग्र के पुत्र के लिये समुद्र में इस चेतन और परों वाली नाव को बनाया, जिस से देवताओं में (लगे हुए) मन से (युक्त उसको) निकाला, और महान जल समूह से सुन्दर उड़ने वाले होकर उड़े ॥ ५ ॥

तुग्र के पुत्र की रक्षा के लिये देखो पृ० ३०१० ।

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

अववि॑द्धं॒ तौ॒ग्र्यम॒प्स्व॑न्तर॑ना-
रम्भ॒णे तम॑सि॒ प्रवि॑द्धम् । चत॑स्रो॒ ना
वो॒ जठ॑लस्य॒ जुष्टा॒ उद॒श्विभ्या॑मि-
षि॒ताः पा॑रयन्ति ॥ ६ ॥

अव॑ऽविद्धम्	अवस्तात् पतितम्	नीचे गिरे हुएको
तौ॒ग्र्यम्	तुग्र के पुत्र को	तुग्र के पुत्र को
अ॒प्ऽसु	अप्सु	जलों में
अ॒न्तः	मध्ये	बीच
अ॒ना॒र॒म्भ॒णे	आलम्बनरहिते	आश्रय से रहितमें
तम॑सि	अन्धकारे	अंधकार में
प्रऽवि॑द्धम्	निमज्जितम्	डूबे हुए२ को
चत॑स्रः	चतस्रः	चार
नाव॑ः	नावः	नौकाएँ
जठ॑लस्य	जठररूपस्य (समुद्रस्य)	समुद्र के
जुष्टा॑ः	आभनन्दकाः	आनन्द करने वाली

उत्	उत्+	—
अश्विभ्याम्	अश्विभ्याम्	अश्विनों से
इषिताः	प्रेषिताः	भेजी हुई
पारयन्ति	उत्+पारयन्ति, उत्तारयन्ति	पार करती हैं

संस्कृतार्थः।

अप्सुमध्ये अवस्तात् पातितम् आलम्बनरहिते अन्धकारे निमज्जतम् (च) तुग्रपुत्रं समुद्रस्याभिनन्दकाः अश्विभ्यां प्रेषिताश्चतस्रो नावः उत्तारयन्ति६

भावार्थः।

जलों के बीचमें नीचे सिर करके गिरे हुए और आश्रय से रहित अंधकार में डूबे हुए तुग्र के पुत्र को समुद्र के (बीच) आनन्द करने वालीं अश्वनोंसे भेजी हुई चार नाव पार करती हैं ॥ ६॥

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।१२।१२।१२।१२

कः स्विद्वृक्षो निष्ठितो मध्ये अ-

ऋ०मं०१सू०१८२मं०७ (४९७०)

र्णसो यंतौग्र्योनाधितःपर्यषस्वजत्।
पर्णामृगस्यपतरोरिवारभ उदश्विन-
नाऊहथुःश्रोमतायकम् ॥७॥

कः	कः+	–
स्वित्	कः+स्वित्,	कौनसा
वृक्षः	वृक्षः	वृक्ष
निःऽस्थितः	निश्चलंस्थितः	निश्चलठैरा हुआ
मध्ये	मध्ये	बीच
अर्णसः	समुद्रस्य	समुद्र के
यम्	यम्	जिस को

तौ॒ग्र्यः	तुग्रपुत्रः	तुग्र का पुत्र
ना॒धि॒तः	याञ्चायुक्तः	प्रार्थना करता हुआ
प॒रि॒ऽस॑ स्वजत्	परिष्वक्तवान्	चिमटा
प॒र्णा	शाखाः	डाली
मृ॒गस्य॑	जन्तोः	जन्तु के
प॒तरोः॑ऽइव	पतनशीलस्येव	उडने वाले के जैसे
आ॒ऽरभे॑	आलम्बनाय (क्वाप्)	सहारे के लिये
उत्	उत्+	–
अ॒श्वि॒नौ॒	हे अश्विनौ !	हे अश्विनो
ऊ॒हथुः॒	उत् + ऊहथुः, उद्धृतवन्तौ	तुमने उद्धार किया

श्रोमताय	कीर्तिमत्त्वाय	कीर्तिमान् होने के लिये
कम्	(पूरणः)	—

संस्कृतार्थः।

समुद्रस्यमध्ये निश्चलंस्थितः कःस्विद् वृक्षः (आसीत्) यं याञ्चायुक्तस्तुग्रपुत्रः परिष्वक्तवान् यथा पतनशीलस्य जन्तोः आलम्बनार्थं शाखाः (भवन्ति), हे अश्विनौ! (युवाम्)कीर्तिमत्त्वाय (तम्) उद्धृतवन्तौ ॥ ७॥

भावार्थः।

समुद्र के बीच में निश्चल ठैरा हुआ कौनसा वृक्ष था जिसके साथ प्रार्थना करता हुआ तुग्र का पुत्र चिपट गया, जैसे उड़ने वाले जन्तु के सहारे के लिये डालियां होती हैं, हे अश्विनो ! आपने कीर्तिमान होने के लिये उसका उद्धार किया ॥७॥

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

तद्वांनरानासत्यावनुष्याद्यद्वां

मानास उचथमवोचन् । अस्माद्द्यसदसः सोम्यादा विद्यामेषं वृजनं जीरदानुम् ॥ ८ ॥

तत्	तत्	वह
वाम्	युवाम्	तुम दोनों को
नरा	हे नरौ !	हे नरो
नासत्यौ	हे असत्यरहितौ !	हे झूठ से रहित
अनु	अनु +	–
स्यात्	अनु + स्यात्, अनुभवतु	अनुकूल हो
यत्	यत्	जिस को
वाम्	युवाभ्याम्	तुम्हारे लिये

ऋ०मं०१ सू०१८२ मं०८ (४९८७)

मानासः	मानपुत्राः	मान के पुत्रों ने
स्तवथम्	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
प्रवोचन्	उक्तवन्तः	बोला है
अस्मात्	अस्मात्	इस से
अद्य	अद्य	आज
सदसः	+ सदसः	–
सोम्यात्	सोम्यात् + सदसः +आ, सोमयाग-स्थानात्	सोमयाग के स्थान से
आ	+ आ	–
विद्याम	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इषम्	अन्नम्	अन्न को

वृजनम्	बलम	बल को
जीरऽदानुम्	शीघ्रदानशीलताम्	शीघ्र दान के स्वभाव को।

संस्कृतार्थः।

हे असत्यरहितौ ! नरौ ! तत् स्तोत्रं युवामनुभवतु यदद्य युवाभ्यां सोमयागस्थानाद् मानपुत्राः उच्चारितवन्तः, (वयम्) अन्नं बलं शीघ्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ ८ ॥

भाषार्थः।

हे झूठ से रहित नरो ! वह स्तोत्र आप को अनुकूल हो, जो आज आप दोनों के लिये सोम याग के स्थान से मान के पुत्रों ने उच्चारण किया है (हम) अन्न को बल को और शीघ्र दान के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ८॥

ऋ०मं० १ सू० १८३ ।

अश्विनौदेवते,अगस्त्य ऋषिः ।

विनियोगः-

१-६। एतत्सूक्तं प्रातरनुवाकाश्विनशस्त्रयोस्त्रैष्टुभे छन्दसि विनियुक्तम्

सूक्त का भावार्थ ।

हे वीर अश्विनो ! आप दोनों उस रथ को जोड़ो, जो मन से भी अधिक वेग वाला है जो तीन खम वाला और तीन पहियों वाला है, जिस तिहरे रथ मे आप शुभ कर्म करने बाले के घर को परों से उड़ने वाले पक्षी की न्याईं उड़ कर जाते हो ॥ १ ॥ हे अश्विनो ! सहज से घूमने वाला आप का रथ पृथिवी को लक्ष्य करके जाता है, जिस पर आप दोनों बुद्धिमान हवि के लिये चढ़ते हो, यह हमारी सुन्दर बाणी सौंदर्य को प्राप्त हो और आप दोनों द्यौ की पुत्री उषा के साथ संगत हों ॥ २ ॥ हे झूठ से रहित नरो ! सहज से घूमने वाले अपने रथ पर चढ़ो जो हवि देने वाले के व्रतों के पीछे २ चलता है और जिस के द्वारा आप स्वयं यजमान और उसके पुत्र को उत्तेजन करने के लिये उस के घर को जाते हो ॥ ३ ॥ हे भयानक अश्विनो ! भेड़िया और भेडी आप को न दबावें, और हमारा त्याग न करें और न हमें उलांघ कर जावें, आपके लिये यह भाग रखा है और यह स्तुति रूप वाणी है, ये मीठे रसों के पात्र आपके लिये हैं ॥ ४ ॥ हे भयानक अश्विनो ! आपको गोतम पुरुमीळ्ह और अत्रि हवि को लिये हुए रक्षा के लिये बुलाते हैं, हे झूठ से रहित देवो ! जैसे चलने वाला सीधे रस्ते से उद्दिष्ट दिशा को जाता है, ऐसे आप मेरी पुकार

को अन्न आदि ॥५॥ हे अश्विनो ! हम इस अन्धकार के पार उतर आए हैं और आपकी ओर स्तोत्र को धारण किआ हुआ है, आप देवताओं के मार्ग से यहां आवें और हम अन्न को बल को और शीघ्रदान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ६ ॥

अश्विनौ देवते, त्रिष्टुप्छन्दः। १।१।१।१।१।

तं युञ्जाथां मनसो यो जवीयान्
त्रिवन्धुरो वृषणा यस्त्रिचक्रः । येनो
पयाथः सुकृतो दुरोणं त्रिधातुनापत
थो विर्न पर्णैः ॥ १ ॥

तम्	तम्	उसको
युञ्जाथाम्	योजयतम्	जोड़ो
मनसः	मनसः	मनसे
यः	यः	जो

जवीयान्	वेगवान्	वेगवाला
त्रिऽवन्धुरः	बन्धुरत्रयोपेतः	तीन खम वाला
वृषणा	हे वीरो !	हे वीरो
यः	यः	जो
त्रिऽचक्रः	चक्रत्रयोपेतः	तीनपहियों वाला
येन	येन	जिससे
उपऽयाथः	प्राप्नुथः	प्राप्त होते हो
सुऽकृतः	सुकर्मणः	शुभकर्म वाले के
दुरोणम्	गृहम् (निघं०१।१४)	घर को
त्रिऽधातुना	धातुत्रयवता	तिलड़े से
पतथः	उत्पतथः	उड़ते हो

िः	पक्षी	पक्षी
न	इव	की न्याईं
पर्णैः	पक्षैः	परों से

संस्कृतार्थः ।

हे वीरौ ! (अश्विनौ ! युवाम्) तम् (रथम्) योजयतं योऽमनसः (अपि) वेगवान्, य बन्धुरत्रयोपेतः, चक्रत्रयोपेतः (चाऽस्ति) धातुत्रयवता येन सुकर्मणः गृहंप्राप्नुथः, पक्षैः पक्षीव (च) उत्पतथः ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

हे वीर (अश्विनो ! आप दोनों) उस (रथ को) जोड़ो जो मन से (भी) अधिक वेगवाला है जो तीन खम वाला और तीन पहियों वाला है, जिस तिलड़े के द्वारा आप शुभ कर्म करने वाले के घर को प्राप्त होते हो, और परों से पक्षी की न्याईं उड़ते हो ॥ १

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

सुवृद्रथोवर्ततेयन्नभिक्षां यत्ति-

ऋ०मं०१सू०१८३ मं०२ (४९८०)

ष्ठथःक्रतुमन्तानुपृक्षे । वपुर्वपुष्या
सचतामियंगीर्दिवो दुहित्रोषसा स-
चेथे ॥ २ ॥

सुवृत्	अयत्नावर्तनः	सहज से घूमने वाला
रथः	रथः	रथ
वर्तते	वर्तते	है
यन्	गच्छन्	जाता हुआ
अभि	अभिलक्ष्य	ओर
क्षाम्	पृथिवीम्	पृथिवी की
यत्	यम् (विभक्तेर्लुक्)	जिसको
तिष्ठथः	अनु+तिष्ठथः, अधितिष्ठथः	चढ़ते हो

क्रतु॑मन्ता	बुद्धिमन्तौ	बुद्धिमान
अनु॑	अनु +	–
पृ॒क्षे	(हविरूप)अन्नाय	(हवि रूप) अन्न के लिये
वपु॑ः	मनोज्ञत्वम्	सौन्दर्य्य को
व॒पु॒ष्या	शोभना (अ०को०)	सुन्दर
स॒च॒ता॒म्	प्राप्नोतु	प्राप्त करे
इ॒यम्	इयम्	यह
गीः	वाणीः	वाणी
दि॒वः	दिवः	द्यौ की
दु॒हि॒त्रा	दुहित्रा	पुत्री से
उ॒षसा॑	उषसा	उषा से

स॒चे॒थे॒०	सङ्गच्छतम्	आपदोनोंसङ्गतहों

संस्कृतार्थः ।

(हे अश्विनौ !) अयत्नाद्वर्तनः (युवयोः) रथः पृथिवीमभि-(लक्ष्य) गच्छन् वर्त्तते, यं बुद्धिमन्तौ (युवाम्) (हविरूपाय) अन्नाय अधिष्ठथः, इयं शोभना वाणी मनोज्ञतां प्राप्नोतु (युवांच) दिवोदुहित्राउषसा सङ्गच्छतम् ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

हे अश्विनौ ! सहज से घूमने वाला आप का रथ पृथिवी को लक्ष्य करके जाता है, जिस पर आप दोनों बुद्धिमान् (हवि रूप) अन्न के लिये चढ़ते हो, यह (मेरी) सुन्दर वाणी सौंदर्य को प्राप्त हो (और आप दोनों) द्यौ की पुत्री उषा से संगत हों ॥२

अश्विनौदेवते,त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११।

आति॑ष्ठतंसु॒वृ॒तं॒योरथो॑वा॒मनु॑
वृ॒तानि॒वर्त॑तेह॒विष्मा॑न् । ये॑ननरा

(४९८३) ऋ०मं०१ सू०१८३ मं०३

नासत्येष॒यध्यै॑ व॒र्तिर्या॒थस्तन॑याय॒-त्मने॑च ॥ ३ ॥

आ	आ +	–
ति॒ष्ठ॒त॒म्	आ+तिष्ठतम्, आरोहतम्	चढ़ो
सु॒ऽवृ॑तम्	सुखावर्तनम्	सहज से घूमने वाले को
यः	यः	जो
रथ॑ः	रथः	रथ
वा॒म्	युवयोः	तुम्हारा
अनु॑	अनु	पीछे
व्र॒ता॑नि	व्रतानि	व्रतों को
वर्त॑ते	वर्तते	रहता है

ह॒विष्मा॑न्	हविष्मतः (षष्ठ्यर्थे प्रथमः)	हवि देने वाले के
येन॑	येन	जिससे
न॒रा॒	हे नरौ !	हे नरो
ना॒स॒त्या॒	हे असत्य रहितौ !	हे झूठ से रहित देवो !
इ॒ष॒यध्यै॑	उत्तेजितुम्	उत्तेजन करने के लिये
व॒र्तिः	गृहम् (विभक्तेसुः)	घर को
या॒थः	गच्छथः	जाते हो
तन॑याय	पुत्राय	पुत्र के लिये
त्मने॑	आत्मने (आकारलोपः)	अपने लिये
च॒	च	और

संस्कृतार्थः ।

हे असत्यरहितौ ! नरौ ! सुखावर्तनं रथमारोहतं यो (युवयो रथो) हविष्मतः व्रतान्यनवर्तते, येन (च

युवाम्) आत्मने पुत्राय च उत्तेजितुं (तस्य) गृहं-गच्छथः ॥ ३ ॥

भावार्थः ।

हे झूठ से रहित नरो ! सहज से घूमने वाले अपने रथ पर चढ़ो, जो हवि देने वाले के व्रतों के पीछे रहता है, (और) जिस से आप स्वयं (यजमान) और (उसके)पुत्र के उत्तेजन करने के लिये उस के घर को जाते हो ॥ ३ ॥

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।१।१।१।१।१।१।

मावांवृकोमावृकीरादधर्षीन्मापरिवर्क्तमुतमातिधक्तम् । अयंवांभागो-
निहितइयंगीर्दस्राविमेवांनिधयोमधूनाम् ॥ ४ ॥

मा	मा	मत

ऋ०मं०१ सू०१८३ मं०४ (४१८६)

वा॒म्	युवाम्	तुम दोनों को
वृकः॑	वृकः	भेड़िया
मा	मा	मत
वृ॒कीः	वृकी (विसर्गश्छान्दसः)	भेड़ी
आ	आ +	–
द॒ध॒र्षी॒त्	आ+दधर्षीत् आक्रामतु	दबावे
मा	मा	मत
परि॑	परि +	–
व॒र्क्त॒म्	परि+वर्क्तम्, परिवर्जयतम्	त्यागो
उ॒त	च	और
मा	मा	मत
अति॑	अति+	–

ध॒क्त॒म्	अति+धक्तम्,अतिक्रम्यगच्छतम्	उलांघकर जाओ
अ॒यम्	अयम्	यह
वा॒म्	युवाभ्याम्	तुम्हारे लिये
भा॒गः	भागः	भाग
नि॒ऽहि॑तः	स्थापितः	रक्खा हुआ
इ॒यम्	इयम्	यह
गीः	वाणी	वाणी
दस्रौ॑	हे उग्रौ !	हे भयानको!
इ॒मे	इमे	ये
वा॒म्	युवाभ्याम्	तुम्हारे लिये
नि॒ऽध॑यः	निधानानि	पात्र

मधूनाम्	मिष्टरसानाम्	मीठे रसों के

संस्कृतार्थः ।

हे उग्रौ! (अश्विनौ!) वृको वृकी (च) युवां मा क्रामतु (युवामस्मान्) मा परिवर्जयतान्, नच (अस्मान्) अतिक्रम्य गच्छतम्, युवाभ्यामयं भागः स्थापितः, इयम् (स्तुतिरूपा) वाणी (उच्चारिता) इमानि मिष्टरसानां निधानानि (च) युवाभ्याम् (सन्ति) ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे भयानक अश्विनो ! भेड़िया और भेड़ी आप को न दबावें, (आप हमारा) त्याग न करें और न हमें उलांघ कर जावें, आप के लिये यह भाग रखा है ओर (स्तुति रूप) वाणी (उच्चारण की गई है), ये मीठे रसों के पात्र आप के लिये हैं ॥ ४ ॥

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११।

युवांगोतमःपुरुमीळ्होअत्रिर्दस्राहवतेऽवसे हविष्मान् । दिशंन-

दिष्टामृजूयेवयन्ता मेहवंनासत्यो
पयातम ॥ ५ ॥

युवाम्	युवाम्	तुम दोनों को
गोऽतमः	गोतमः	गोतम
पुरुऽमीळ्हः	पुरुमील्हः	पुरुमीढ़
अत्रिः	अत्रिः	अत्रि
दस्रा	हे उग्रौ !	हे भयानको
हवते	आह्वयन्ति	बुलाता है
अवसे	रक्षणाय	रक्षा के लिये
हविष्मान्	हविर्युक्तः	हवि से युक्त
दिशम्	दिशम्	दिशा को

न	इव	जैसे
द्दिष्टाम्	उद्दिष्टाम्	उद्दिष्ट को
ऋजुयाऽइव	ऋजुगमनेन-इव	जैसे सीधे जाने से
यन्ता	गन्ता	जाने वाला
आ	सर्वतः	सब ओर से
मे	मम	मेरी
हवम्	आह्वानम्	पुकार की
नासत्या	हे असत्यरहितौ!	हे झूठ से रहितौ
उप	प्रति	ओर
यातम्	आगच्छतम्	आओ

संस्कृतार्थः ।

हे उग्रौ ! (अश्विनौ !) युवां गोतमः पुरुमीढोऽत्रिः (च) हविर्युक्ताः (सन्तः) रक्षणाय आह्वय-

न्ति, हे असत्यरहितौ ! यथा गन्ता ऋजुगमनेन उद्दिष्टां दिशं (गच्छति) तथा मम आह्वानं प्रति-आगच्छतम् ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे भायनक अश्विनो ! आप को गौतम, पुरुमीढ़ और अत्रि हवि को लिये हुए रक्षा के लिये बुलाते हैं, हे झूठ से रहित (देवो !) जैसे चलने वाला सीधा चलने से उद्दिष्ट दिशा को (पहुंच जाता) है ऐसे आप मेरी पुकार की ओर आवें ॥ ५ ॥

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः [illegible]

अतारिष्मतमसस्पारमस्य प्रतिवांस्तोमो अश्विनावधायि । एहयातंपथिभिर्देवयानैर्विद्यामेषंवृजनंजीरदानुम् ॥ ६ ॥

ऋ०मं०१ सू०१८३ मं०६ (५९९२)

अता॑रिष्म	उत्तीर्णाःस्मः	हम उतर गए हैं
तम॑सः	अन्धकारस्य	अन्धकार के
पा॒रम्	पारम्	पार को
अ॒स्य	अस्य	इसके
प्रति॑	प्रति	ओर
वा॒म्	युवाम्	तुम दोनों को
स्तोम॑ः	स्तोत्रम्	स्तोत्र
अ॒श्वि॒नौ॒	हे अश्विनौ !	हे अश्विनो
अ॒धा॒यि॒	धारितम्	धारण किया गया।
आ	आ +	–
इ॒ह	इह	यहां
या॒त॒म्	आ+यातम्	आओ

पथिऽभिः	मार्गैः	मार्गों से
देवऽयानैः	देवगन्तव्यैः	देवताओं के जाने योग्यों से
विद्याम	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इषम्	अन्नम्	अन्नं को
वृजनम्	बलम्	बल को
जीरऽदानुम्	शीघ्रदानशीलताम्	शीघ्रदान के स्वभाव को

संस्कृतार्थः।

हे अश्विनौ ! (वयम्) अस्यअन्धकारस्यपारमुत्तीर्णाःस्मः, युवांप्रतिस्तोत्रम् (च) धारितम्, (युवाम्) देवगन्तव्यैर्मार्गैरिह आगच्छतम्, (वयम्) अन्नं बलं शीघ्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ ६ ॥

भावार्थः।

हे अश्विनो ! (हम) इस अन्धकार के पार उतर गए हैं, और आपकी ओर स्तोत्र को धारण किया है, आप यहां पर देवताओं के चलने के मार्ग से आवें, (हम) अन्न को बलको और शीघ्रदान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ६ ॥

ऋ०मं०१ सू०१८४।

अश्विनौदेवते, अगस्त्यऋषिः।

विनियोगः-

१-६। एतत्सूक्तं प्रातरनुवाकाश्विनशस्त्रयोर्जागतेछन्दसि विनियुक्तम्
(आ० ४।१५।२)

सूक्त का भावार्थ।

हे झूठ से रहित, द्यौ के पुत्रो! बहुत अधिक देने वाले के स्वामी आप दोनों को हम आज और आपको ही अन्य दिन उषा के खिलने पर स्तुति के गीतों से बुलाते हैं, चाहे आप कहीं हों॥१॥ हे वीरो! हे नरो! आप दोनों हम पर प्रसन्न हों। और सोम की धारा से मद युक्त होकर कृपण मनुष्य को जो दान नहींकरता है मारें, आप मेरी स्तुतिओं को कामना करते हुए और कानों से सुनते हुए सामने आकर बोलते हुए सुनें॥ २॥ हे जगत के पालन करने वाले, झूठ से रहित देवो! जल में उत्पन्न हुए बड़े घोड़े आप दोनों को बाण में रख कर पहुंचाए गए की न्याईं सूर्या के विवाह उत्सव की ओर यश के लिये पहुंचाते हैं, जैसे प्राचीन युगों में पहुंचाते थे॥ ३॥ हे मिठास वालो! हे कल्याण के देने वाले अश्विनो! वह आप का दान हम पर हो, आप मान के पुत्र कवि के स्तोत्र को प्रेरण करें, जिन आपके पीछे यश की इच्छा से और बहुत पराक्रम के लिये मनुष्य हर्षित होते हैं॥ ४। हे धन वालो! हे झूठ से रहित अश्विनो! आप दोनों के लिये मानके पुत्रों ने यह खूब बल-वाला स्तोत्र बनाया है (मुझ)अगस्त्य पर प्रसन्न होते हुए आप मेरे घर को प्राप्त हों॥ ५॥ हे अश्विनो! हम इस अन्धकार के पार पहुंच गए हैं, आपके लिये स्तोत्र ऊंचा किया गया है, आप देवताओं से गमन करने योग्य मार्गों से आवें, हम अन्न को बल को और शीघ्र दान देने के स्वभाव को प्राप्त करें॥ ६॥

अश्विनौदेवते, निचृत् त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।१०

ता वा॑म॒द्य ताव॑प॒रं हु॑वेमो॒च्छन्त्या॑
मु॒षसि॒ वह्नि॑रु॒क्थैः । नास॑त्या॒ कुह॑
चि॒त्सन्ता॑व॒र्यो दि॒वो नपा॑ता सु॒दा-
स्त॑राय ॥ १ ॥

ता	तौ प्रसिद्धौ	प्रसिद्धों को
वा॒म्	युवाम्	तुम दोनों को
अ॒द्य	अद्य	आज
तौ	तौ	उन दोनों को
अ॒प॒रम्	अपरस्मिन् (दिने) (विभक्तेर्लुक)	अन्य (दिन) में
हु॒वे॒म	आह्वयेम	हम बुलावें

उच्छन्त्याम्	आविर्भवन्त्याम् (स[illegible])	प्रकट होने पर
उषसि	उषसि	उषा में
वह्निः	नेतारौ (विभक्तिवचनव्यत्ययः)	नेताओं को
उक्थैः	स्तुतिगीतैः	स्तुति के गीतों से
नासत्या	हे असत्यरहितौ !	हे झूठ से रहितो
कुह	कुह +	–
चित्	कुह+चित्, कुत्राऽपि	कहीं भी
सन्तौ	वर्तमानौ	रहने वालों को
अर्यः	स्वामिनौ (विभक्तिवचनव्यत्यया)	स्वामियों को
दिवः	दिवः	द्यौ के

नपाता	हे पुत्रौ !	हे पुत्रो
सुदाःऽतराय	सुदातृतराय	खूब अधिक देने वालेके लिये

संस्कृतार्थः ।

हे असत्य रहितौ दिवः पुत्रौ ! वयम् कुत्रापि वर्तमानौ सुदातृतरस्यस्वामिनौ प्रसिद्धौ युवामद्यतावेव (च) अपरस्मिन् (दिने) उषसि प्रादुर्भवन्त्याम् (सत्याम्) स्तुतिगीतैःआह्वयेम ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

हे झूठ से रहित, द्यौके पुत्रो! कहीं भी रहने वाले खूब अधिक देने वाले के स्वामी, प्रसिद्ध आप दोनों को हम आज और उन्हीं दोनों को अन्य दिनमें उषा के खिलने पर स्तुति के गीतों से बुलाते हैं ॥१॥

अश्विनौदेवते, निचृत् त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।१०।११

अस्मेऊषुवृषणामादयेथामुत्प
णीँर्हतमूर्म्यामदन्ता। श्रुतंमेअच्छो
क्तिभिर्मतीनामेष्टानरानिचेताराच
कर्णैः ॥ २ ॥

ऋ०मं०१सू०१८३ मं०२ (४२२८)

अस्मे॰	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
ऊम्	(पूरणः)	–
सु	सुष्ठु	खूब
वृषणा	हे वीरौ !	हे वीरो
मादयेथाम्	हर्षितौ भवतम्	आप दोनों हर्षित हों
उत्	उत्+	–
पणीन्	कृपणान्	कंजूसों को
हतम्	उत्+हतम्, उन्मूल्यविनाशयतम्	नितान्त नाशकरो
ऊर्म्या	सोमधारया	सोम की धारा से
मदन्ता	माद्यन्तौ	मद,युक्त होते हुए
श्रुतम्	शृणुतम्	सुनों
मे	मम	मेरी

अच्छो॑क्तिऽभिः	आभिमुख्योक्तैः	सामने आकर बोलने के साथ
म॒ती॒नाम्	स्तुतीनाम्	स्तुतियों की
ए॑ष्टा	एष्टारौ	इच्छा करते हुए
न॒रा॒	(विभक्तेसुः) हे नरौ !	हे नरौ !
निऽचे॑तारा	संचेतारौ	संचय करने वाले
च॒	च	और
कर्णै॑ः	कर्णैः	कानों से

संस्कृतार्थः ।

हे वीरौ ! हे नरौ ! (युवाम्) अस्मभ्यं सुहर्षितौ भवतम्, सोमधारया (च) माद्यन्तौ (सन्तौ) कृपणान् उन्मूल्य विनाशयतम्, (युवाम्) मम स्तुतीनाम् एष्टारौ कर्णैश्च सञ्चेतारौ (भूत्वा) आभिख्योक्तैः शृणुतम् ॥ २ ॥

भावार्थ ।

हे वीरो ! हे नरो ! आप दोनों हमारे लिये खूब हर्षित हों, और सोम की धारा से मद युक्त हो कर कंजूसों को मारें, (आप) मेरी स्तुतियों की कामना करने वाले और कानोंसे संचय करने वाले (हो कर) सामने आकर बोलते हुए सुनें ॥ २ ॥

अश्विनौदेवते, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।१११।१०।११।११

श्रियेपूषन्निषुकृतेवदेवा नासत्यावहतुंसूर्यायाः । वच्यन्तेवांककुहाप्सुजाता युगाजूर्णेववरुणस्य भूरेः ॥ ३ ॥

श्रिये	यशोऽर्थम्	यश के निमित्त
पूषन्	हे पोषको ! (विभक्तेलुः)	हे पालन करने वालो

इ॒षुकृता॑ऽइव	बाणेधारितौ इव	मानो बाणों में धारणकिए गए
देवा	हे देवौ !	हे देवो
नास॑त्या	हे असत्य रहितौ!	हे झूठ से रहितो
व॒ह॒तुम्	विवाहोत्सवम्	विवाह के उत्सव को
सू॒र्या॑याः	सूर्यायाः	सूर्या के
व॒च्यन्ते॑	प्रापयन्ति	पहुंचाते हैं
वा॒म्	युवाम्	तुम दोनों को
क॒कु॒हाः	महान्तः(अश्वाः)	बडे (घोड़े)
अ॒प्ऽसु	जलेषु	जलों में
जा॒ताः	प्रादुर्भूताः	प्रकट हुए २
यु॒गा	युगानि	युगों को

जूर्णाऽइव	पुरातनानीव	जैसे प्राचीनों को
वरुणस्य	वरुणस्य	वरुण के
भूरेः	महतः	महान के

संस्कृतार्थः ।

हे पोषकौ ! असत्यरहितौ ! देवौ ! जलेषुजाताः महान्तः(अश्वाः) युवां सूर्यायाः विवाहोत्सम् (प्रति) वाणेधारितौ इव महतः वरुणस्य पुरातनानि युगानि इव यशोऽर्थंप्रापयन्ति ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

हे (जगत के) पालन करने वाले, झूठ से रहित, देवो ! जल में उत्पन्न हुए बड़े (घोड़े) आप दोनों को सूर्या के विवाह उत्सव की ओर वाण में धारण किये गए की न्याईं, जैसे महान वरुण के प्राचीन युगों में (पहुंचाते थे) वैसे (अब भी) यश के लिये पहुंचाते हैं ॥ ३ ॥

महान वरुण के प्राचीन युग—"महान वरुण के" पद वाक्य 'जार्थ है, तात्पर्य्य प्रस्वीन युगों से ही है ॥

अश्विनौदेवते,निचृत् त्रिष्टुप्छन्दः।११।१०।११।११।

अस्मेसावांमाध्वीरातिरस्तु स्तोमंहिनोतंमान्यस्यकारोः। अनुयद्वां श्रवस्यासुदानू सुवीर्यायचर्षणयो मदन्ति ॥ ४ ॥

अस्मे०	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
सा	सा	वह
वाम्	युवयोः	तुम्हारा
माध्वी०	हे माधुर्योपेतौ !	हे मिठास वालो
रातिः	दानम्	दान
अस्तु	अस्तु	हो

स्तोम॑म्	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
हि॒नो॒त॒म्	प्रेरयतम्	प्रेरण करो
मा॒न्यस्य॑	मानपुत्रस्य	मान के पुत्र के
का॒रोः	कवेः	कवि के
अनु॑	अनु+	–
यत्	यत्	जो
वा॒म्	युवाम्	तुम दोनों को
श्र॒व॒स्या॑	यशइच्छया	यशकी कामना से
सु॒ऽदा॒नू॒०	हे कल्याणदानौ !	हे कल्याण के देने वालो
सु॒ऽवीर्या॑य	अतिबलाय	बहुत पराक्रम के लिये
चर्षणय॑ः	मनुष्याः	मनुष्य

मदन्ति	अनु + मदन्ति	पीछे हर्ष करते हैं

संस्कृतार्थः ।

हे माधुर्योपेतौ कल्याणदानौ ! (अश्विनौ !) तद् युवयोर्दानमस्मभ्यमस्तु, (युवाम्) मानपुत्रस्य कवेः स्तोत्रं प्रेरयतम्, यद् यशइच्छया बहुबलाय (च) मनुष्याः युवामनुमाद्यन्ति ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे मिठास वालो! हे कल्याण के देने वाले (अश्विनो !) वह आपका दान हम पर हो (आप) मान के पुत्र कवि के स्तोत्र को प्रेरण करें, जो यश की इच्छा से और बहुत पराक्रम के लिये मनुष्य आप के पीछे हर्ष करते हैं ॥ ४ ॥

अश्विनौ देवते, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः।११।१०।११।११।

एषवांस्तोमोऽश्विनावकारि
मानेभिर्मघवानासुवृक्ति । यातंवर्ति

स्तन॑याय॒त्मने॑ चा॒ऽगस्त्ये॑नासत्या॒ मद॑न्ता ॥ ५ ॥

ए॒षः	एषः	यह
वा॒म्	युवाभ्याम्	तुम्हारे लिये
स्तोम॑ः	स्तोमः	स्तोत्र
अ॒श्वि॒नौ॒	हे अश्विनौ !	हे अश्विनो !
अ॒का॒रि॒	कृतः	किया गया है
माने॑भिः	मानपुत्रैः	मान के पुत्रों से
म॒घ॒ऽवा॒ना॒	हे धनवन्तौ !	हे धनवानो !
सु॒ऽवृ॒क्ति	बलोपेतम् (क्रियाविशेषणम्)	खूब बलवाला
या॒तम्	प्राप्नुतम्	आ प्राप्त हों

वर्तिः	गृहम्	घर को
तनयाय	पुत्राय	पुत्र के लिये
त्मने	आत्मने	अपने लिये
च	च	और
अगस्त्ये	अगस्त्ये	अगस्त्य पर
नासत्या	हे असत्यरहितौ!	हे झूठ रहितो
मदन्ता	माद्यन्तौ	प्रसन्न होते हुए

संस्कृतार्थः।

हे धनवन्तौ! असत्यरहितौ! अश्विनौ! युवाभ्यां मानपुत्रैः एषः सुबलः स्तोमः कृतः, (मयि) अगस्त्ये माद्यन्तौ (युवाम्) पुत्राय आत्मने च (मम) गृहं प्राप्नुतम् ॥ ५ ॥

भावार्थः।

हे धन वालो! हे झूठ से रहित अश्विना! आप

दोनों के लिये मान के पुत्रों ने यह खूब बलवाला स्तोत्र बनाया है, (मुझ) अगस्त्य पर प्रसन्न होते हुए आप पुत्र के लिये (और ; मेरे लिये (मेरे) घर को प्राप्त हों ॥ ५ ॥

अश्विनौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः।१।१।१।१।१।१

अतारिष्मतमसस्पारमस्य प्रति
वांस्तोमोअश्विनावधायि । एहयातं
पथिभिर्देवयानै विद्यामेषंवृजनंजीर
दानुम् ॥ ६ ॥

अतारिष्म	उत्तीर्णाःस्मः	हम तैर गए हैं
तमसः	अन्धकारस्य	अन्धकार के
पारम्	पारम्	पारका

अस्य	अस्य	इस के
प्रति	प्रति	की ओर
वाम्	युवाम्	तुम दोनों को
स्तोमः	स्तोमः	स्तोत्र
अश्विनौ	हे अश्विनौ !	हे अश्विनो
अधायि	धारितः	उठाया गया
आ	आ+	–
इह	इह	यहां
यातम्	आ+यातम	आओ
पथिऽभिः	मार्गैः	मार्गों से
देवऽयानैः	देवगन्तव्यैः	देवताओंके जाने योग्यों से

वि॒द्या॑म	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इ॒षम्	अन्नम्	अन्न को
वृ॒जन॑म्	बलम्	बल को
जी॒रऽदा॑नुम्	शीघ्रदानशीलताम्	शीघ्रदान के स्वभाव को

संस्कृतार्थः।

हे अश्विनौ ! (वयम्) अस्यअन्धकारस्य पा प्राप्तवन्तःस्मः, युवांप्रतिस्तोत्रं धारितम् , (युवाम्) देवगन्तव्यैर्मार्गैरिहाऽऽयातम् , (वयम्) अन्नंबलं शीघ्रदान शीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ ६ ॥

भाषार्थः।

हे अश्विनो ! (हम) इस अन्धकार के पार पहुंच गए हैं , आपके प्रति स्तोत्र उठाया गया (है) (आप) देवताओं से गमन करने योग्य मार्गों से आवें (और हम) अन्न को बल को (और) शीघ्रदान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ६ ॥

ऋ० मं०१ सू० १८५

द्यावापृथिव्यौदेवते, अगस्त्यऋषिः ।

विनियोगः

-११। एतत्सूक्तमाभिप्लविके षष्ठेऽहनि वैश्वदेवशस्त्रे द्यावापृथिवीयनिविद्धानम् (आ० ७.७।८)

१-११। महाव्रतेऽपि वैश्वदेवशस्त्रे द्यावापृथिवीयनिविद्धानम् (ऐ० आ० ५।३।२)

१०-११ 'ऋतंदिवे-' 'इदंद्यावापृथिवी-' इति द्वे ऋचौ द्यावापृथिवीयेपशौ पुरोडाशहविषोरनुवाक्ये (आ० ३।८।१)

सूक्त का भावार्थ ।

हे ऋषियो! इन द्यौ और पृथिवी में से कौनसी पहले और कौनसी पीछे की है कौन जानता है कि ये कैसे उत्पन्न हुई हैं, सचमुच जो कुछ पदार्थ मात्र हैं उस सब को ये धारण करती हैं और दिन रात की नाईं ऐसे घूमती हैं जैसे पहियों से रथ ॥ १ ॥ न चलने वाली और बिना पैरों वाली ये दोनों चलने वाली और पैरों वाली असंख्य प्रजा को नित्य धारण करती हैं, जैसे माता पिता पुत्र को गोद में धारण करते हैं; हे द्यौ और पृथिवी! आप दोनों हम को महान भय से बचाओ ॥ २ ॥ हे द्यौ और पृथिवी! मैं पाप से रहित क्षीण न होने वाले, प्रकाश युक्त विनाश रहित और नमस्कार के योग्य अदिति के दान को मांगता हूं, आप स्तोता के लिये उस को उत्पन्न करें, हे द्यौ और पृथिवी! आप हमारी महान भय से रक्षा करें ॥३॥ हम दिन और रात द्यौ और पृथिवी के अनुकूल गामी हों, जो देवताओं में पीड़ा से रहित अन्न द्वारा रक्षा

करने वालीं, और देवमाता हैं, हे द्यौ और पृथिवी ऐसी आप हमको महान भय से बचावें ॥४॥ साथ चलने वाली, युवती, समानसीमा वाली, एक पेट की बहनें, भुवन की नाभि को समीप से सूंघती हुई माता पिता की गोद में बैठी हैं, हे द्यौ और पृथिवी ! आप हमको महान भयसे बचावें ॥५॥ मैं विस्तीर्ण बैठने के स्थान, नियम पालन द्वारा महान, रक्षा के साथ देवताओं को उत्पन्न करने वाली द्यौ और पृथिवी को बुलाता हूं, जो सुन्दर रूप वालीं अमृत को धारण करती हैं, हे द्यौ और पृथिवी ! आप हमारी महान भय से रक्षा करें ॥६॥ मैं इस यज्ञ में विशाल विस्तीर्ण और अनेक रूपवाली द्यौ और पृथिवी को नमस्कार के साथ स्तुति करता हूं, जो सौभाग्य वाली और खूब वेग वाली सब को धारण करती हैं, हे द्यौ और पृथिवी ! आप हमारी महान भयसे रक्षा करें ॥७॥ हे द्यौ और पृथिवी ! हमने किसी काल में जो कुछ पाप देवताओं के प्रति वा मित्र के प्रति वा जामाता के प्रति किया है, उन को यह स्तोत्र दूर करे, आप हम को महान भय से बचावें ॥ ८ ॥ हे देवताओ ! मनुष्यों का हित करने वाली प्रशंसा के योग्य द्यौ और पृथिवी मेरी रक्षा करें, दोनों रक्षक रक्षा के साथ मेरे साथ रहें, हम शत्रु से अधिक दानी होने के लिये अन्न से मोद करते हुए बहुत धन की इच्छा करें ॥ ९ ॥ सुन्दर बुद्धि से युक्त होकर मैंने सबके सुनने के लिये द्यौ और पृथिवी के तांई उस मुख्य सत्य का उच्चारण किया है, वे समीप होकर निन्दनीय और अनिष्ट घटना से हमें बचावें और पिता माता बन कर रक्षाओं के द्वारा मेरी रक्षा करें ॥ १० ॥ हे पिता माता रूप द्यौ और पृथिवी ! जो कुछ मैं समीप होकर आप से कहता हूं वह सत्य हो, देवताओं के बीच में आप ही रक्षा के साथ समीप हों, हम अन्न को बल को और शीघ्र दान के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ११ ॥

द्यावापृथिव्यौदेवते,त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

कतरापूर्वाकतरापरायोः कथा
जातेकवयःकोविवेद । विश्वंत्मना
बिभृतोयद्धनाम विवर्ततेअहनीचक्रियेव ॥ १ ॥

कतरा	कतरा	कौन
पूर्वा	पूर्वा	पहिली
कतरा	कतरा	कौन
अपरा	अपरा	पिछली
अयोः	अनयोः (मध्ये)	इन में से
कथा	कथम्	किस प्रकार

जा॒ते॰	उत्पन्ने	उत्पन्न हुई हैं
क॒व॒य॒:	हे ऋषियः	हे ऋषियो
कः	कः	कौन
वि	वि+	–
वे॒द॒	वि+वेद,विजानाति	जानता है
विश्व॑म्	सर्वम्	सम्पूर्ण को
त्म॑ना	आत्मना	अपने आप से
बि॒भृ॒तः॒	धारयतः	धारण करती हैं
यत्	यत्	जो
ह॒	खलु	सचमुच
ना॑म	पदार्थजातम् (सा०भा०)	पदार्थ
वि	वि +	–

वर्तेते	वि+वर्तेते, आवर्तेते	घूमती हैं
अहनी०	रात्रिंदिवसौ	दिनरात
चक्रियाऽइव	चक्रयुक्ताविव	पहियों से युक्त की न्याईं

संस्कृतार्थः।

हे ऋषयः ! अनयोः (द्यावापृथिव्योर्मध्ये) कतरा पूर्वा? कतरा अपरा? कथम् (चैते) उत्पन्ने? (एतत्) कोविजानाति? यत् खलु पदार्थजातम् (अस्ति तत्) सर्वम् (एते) आत्मना धारयतः, चक्रयुक्तौ रात्रिदिवसाविव (च) आवर्तेते ॥ १ ॥

भाषार्थः।

हे ऋषियो ! इन (द्यौ और पृथिवी में से) कौन सी पहली और कौन सी पिछली है (ये) कैसे उत्पन्न हुई हैं (यह) कौन जानता है, सच मुच जो कुछ पदार्थ मात्र है (उस) सब को (ये) अपने आप धारण करती हैं, (और) दिन रात की नाईं (मानो) पहियों से युक्त की नाईं घूमती हैं ॥ १ ॥

द्यावापृथिव्यौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।१३।११।११।११

भूरिं द्वेअचरन्तीचरन्तं पद्वन्तं
गर्भमपदीदधाते । नित्यंनसूनुंपित्रो
रुपस्थे द्यावारक्षतंपृथिवीनोअ-
भ्वात् ॥ २ ॥

भूरिम्	बहुतरम्	अत्यन्त बहुत
द्वे०	द्वे	दोनों
अचरन्ती०	अविचले	न चलने वालीं
चरन्तम्	चलन्तम्	चलते हुए को
पत्ऽवन्तम्	पादोपेतम्	पैरों वाले को
गर्भम्	प्रजाम्	प्रजा को

अ॒पदी०	पादरहिते	बिना पैरों वाली
द॒धा॒ते॒०	धारयतः	धारण करती हैं
नित्यम्	नित्यम्	सदा
न	इव	जैसे
सू॒नुम्	पुत्रम्	पुत्र को
पि॒त्रोः	पित्रोः	माता पिता की
उ॒पस्थे॑	उत्सङ्गे	गोद में
द्यावा॑	द्यावा +	—
रक्ष॑तम्	रक्षतम्	आप दोनों रक्षा करो
पृ॒थि॒वी॒०	द्यावा + पृथिवी, हेद्यावापृथिव्यौ !	हे द्यौ और पृथिवी
नः॒	अस्मान्	हम को
अभ्वा॑त्	महतः (निघं० ३।३)	महान से

संस्कृतार्थः ।

अविचलेपादरहिते (चैते) द्वे चलन्तीं पादोपेतां बहुतरां प्रजां 'नित्यं पित्रोरुत्सङ्गे (वर्तमानम्) पुत्रमिव' धारयतः, हे द्यावापृथिव्यौ ! (युवाम्) अस्मान् महतः (भयात्) रक्षतम् ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

न चलने वाली, विना पैरों वाली (ये) दोनों चलने वाली (और) पैरों से युक्त अत्यन्त बहुत प्रजा को नित्य माता पिता की गोद में (उठाए हुए) पुत्र की नाईं धारण करती हैं, हे द्यौ और पृथिवी (आप दोनों) हम को महान (भय) से रक्षित करो ॥ २ ॥

द्यावापृथिव्यौदेवते,त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

अनेहोदात्रमदितेरनर्वं हुवेस्वर्वदवधंनमस्वत । तद्रोदसीजनयतं
जरित्रेद्यावारक्षतंपृथिवीनो अभ्वात् ३

अनेहः	पाप रहितम्	पाप से रहित को
दात्रम्	दानम्	दान को
अदितेः	अदितेः	अदिति के
अनर्वम्	अक्षीणम्	क्षीण न होने वाले को
हुवे	याचे	मांगता हूं
स्वःऽवत्	प्रकाश युक्तम्	प्रकाश युक्त को
अवधम्	अविनाशमानम्	विनाश से रहित को
नमस्वत्	नमस्कारयोग्यम्	नमस्कार के योग्य को
तत्	तत्	उसको
रोदसी॰	हे द्यावापृथिव्यौ!	हे द्यौऔर पृथिवी
जनयतम्	उत्पादयतम्	उत्पन्न करो

जरित्रे	स्तोत्रे	स्तोता के लिये
द्यावा	द्यावा +	–
रक्षतम्	रक्षतम्	रक्षा करो
पृथिवी०	द्यावा+पृथिवी, हे द्यावापृथिव्यौ!	हे द्यौ और पृथिवी
नः	अस्मान्	हम को
अभ्वात्	महतः	महान से

संस्कृतार्थः ।

हे द्यावापृथिव्यौ! (अहम्) पापरहितम्, अक्षीणं प्रकाशयुक्तं विनाश रहितम्, नमस्कारयोग्यम् (च) अदितेर्दानं याचे (युवाम्) स्तोत्रे तद् उत्पादयतम्, हे द्यावापृथिव्यौ! अस्मान् महतः (भयात्) रक्षतम् ॥ ३ ॥

भावार्थः ।

हे द्यौ और पृथिवी (मैं) पाप से रहित क्षीण न होने वाले, प्रकाश युक्त, विनाश रहित (और) नमस्कार के योग्य अदिति के दान को मांगता हूं, (आप दोनों) स्तोता के लिये उसको उत्पन्न करें,

हे द्यौ और पृथिवी! आप हम को महान (भय) से बचावें ॥ ३ ॥

अदिति का दान अर्थात् ईश्वर का दान।

द्यावापृथिव्यौ देवते, त्रिष्टुप् छन्दः।१३।११।११।११

अ॒त॑प्यमाने॒ अव॒साऽव॑न्ती॒ अनु॑ष्याम॒रो॑दसीदे॒व॑पुत्रे। उभेदे॒वाना॑मु॒भये॑भि॒रह्नां॒ द्यावा॒रक्ष॑तं पृथिवीनो॒ अभ्वा॑त् ॥ ४ ॥

अत॑प्यमाने॒०	अपीड्यमाने	न दुखाई जाने वालियों को
अव॑सा	अन्नेन	अन्नसे
अव॑न्ती॒०	रक्षन्त्यौ	रक्षा करती हुइयों को
अनु॑	अनु+	–
स्या॒म॒	अनु + स्याम	हम अनुकूल हों

ऋ०मं०१सू०१८५मं०४ (५०२२)।

रोद॑सी°	द्यावापृथिव्यौ	द्यौ और पृथिवी को
दे॒वऽपु॑त्रे॒°	देवाःपुत्राययोस्ता हश्यौदेवमातरा वित्यर्थः	देवताओं की माताओं को
उ॒भे°	उभे	दोनों को
दे॒वाना॑म्	देवानाम्	देवताओं के
उ॒भये॑भिः	उभयेभिः	दोनों के साथ
अक्ता॑म्	दिवसानाम्	दिनों के
द्यावा॑	द्यावा +	–
र॑क्षतम्	रक्षतम्	रक्षा करो
पृ॒थि॒वी॒°	द्यावा+पृथिवी, हे द्यावापृथिव्यौ!	हे द्यौ और पृथिवी
न॒ः	अस्मान्	हम को
अभ्वा॑त्	महतः (भयात्)	महान (भय) से

संस्कृतार्थः

(वयम्) देवानाम् (मध्ये) उभे अपीड्यमाने, अन्नेनरक्षन्त्यौ देवमातरौ द्यावापृथिव्यौ दिवसानाम् उभयेभिः सह अनुभवेम, हे द्यावापृथिव्यौ ! अस्मान् महतः (भयात्) रक्षतम् ॥ ४ ॥

भाषार्थ ।

(हम) दिन और रात्रि दोनोंके साथ, देवताओंके बीच पीड़ा से रहित, अन्न से रक्षा करने वालीं देव माता दोनों द्यौ और पृथिवी के अनुकूल हों, हे द्यौ और पृथिवी! आप हम को महान(भय) से बचावें ॥४॥

द्यावापृथिव्यौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

स॒ङ्गच्छ॑मानेयुव॒तीसम॑न्ते॒ स्वसा॑राजा॒मीपि॒त्रोरु॒पस्थे॑ । अ॒भि॒जिघ्र॑न्ती॒भुव॑नस्य॒नाभिं॒ द्यावा॒रक्ष॑तं पृथिवीनो॒अ॑भ्वात् ॥ ५ ॥

सम्ऽगच्छमाने०	संगच्छमाने	साथ चलती हुईं
युवती०	युवत्यौ	जवान
सम्ऽअन्ते०	समानपर्यन्ते	समान सीमा वालीं
स्वसारा	भगिन्यौ	बहिनें
जामी०	समानोदरे	एक पेट की
पित्रोः	पित्रोः	माता पिता की
उपऽस्थे	उत्सङ्गे	गोद में
अभिऽजिघ्रन्ती०	समीपेन जिघ्रन्त्यौ	समीपसे सूंघती हुईं
भुवनस्य	भुवनस्य	भुवन के

नाभिम्	नाभिम्	नाभि को
द्यावा	द्यावा+	–
रक्षतम्	रक्षतम्	आप दोनों रक्षा करो
पृथिवी०	द्यावा+पृथिवी, हे द्यावापृथिव्यौ !	हे द्यौ और पृथिवी !
नः	अस्मान्	हम को
अभ्वात्	महतः	महान से

संस्कृतार्थः ।

संगच्छमाने युवत्यौ समानपर्यन्ते समानोदरे भगिन्यौ भुवनस्यकेन्द्रं समीपेनजिघ्रन्त्यौ पित्रोरुत्सङ्गे (वर्तेते) हे द्यावापृथिव्यौ ! अस्मान् महतः (भयात्) रक्षतम् ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

साथ चलने वाली, युवती, समान सीमा वाली, एक पेट की बहनें, भुवन की नाभि को समीप से सूंघती हुईं माता पिता की गोद में (बैठी हैं), हे द्यौ और पृथिवी ! आप हम को महान भय से बचाओ ॥ ५ ॥

इस से प्रतीत होता है कि द्यौ और पृथिवी से भिन्न भी कोई भुवन है जिस की नाभि को ये सूंघती हैं और जिस की गोद में ये ऐसे बैठी हैं जैसे हम इन की गोद में ।

द्यावापृथिव्यौ देवते, त्रिष्टुप्छन्दः।३३।१६।११।१२

उर्वीसद्मनीबृहतीऋतेन हुवेदे
वानामवसाजनित्री। दधातेयेअमृतं
सुप्रतीके द्यावारक्षतंपृथिवीनोअभ्वात्॥ ६ ॥

उर्वी	विस्तीर्णे	विस्तीर्णों को
सद्मनी०	सदनाधारभूते	बैठने के आधार को
बृहती०	महत्यौ	महानों को
ऋतेन	नियमेन	नियम से
हुवे	आह्वयामि	मैं बुलाता हूं

दे॒वाना॑म्	देवानाम्	देवताओं की
अव॑सा	रक्षणेन (सह)	रक्षा के साथ
जनि॑त्री	जनित्र्यौ	उत्पन्न करने वालियों को
द॒धा॒ते॰	धारयतः	धारण करती हैं
ये	ये	जो दोनों
अ॒मृत॑म्	अमृतम्	अमृत को
सु॒ऽप्रती॑के॰	शोभनरूपे	सुन्दर रूप वालीं
द्यावा॑	द्यावा +	–
रक्ष॑तम्	रक्षतम्	आप रक्षा करो
पृ॒थि॒वी॒॰	द्यावा+पृथिवी, हेद्यावापृथिव्यौ	हे द्यौ और पृथिवी!
न॒ः	अस्मान्	हम को
अभ्वा॑त्	महतः	महान से

संस्कृतार्थः ।

(अहम्) विस्तीर्ण सदनाधारभूते, नियम (पालनेन) महत्यौ, रक्षया (सह) देवानांजनित्र्यौ (च) (द्यावापृथिव्यौ) आह्वयामि, शोभनरूपेये अमृतं धारयतः, हे द्यावापृथिव्यौ ! अस्मान् महतः (भयात्) रक्षतम् ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

(मैं) विस्तीर्ण बैठने के स्थान, नियम (पालन द्वारा) महान, रक्षा के साथ देवताओं को उत्पन्न करने वालीं (द्यौ और पृथिवी) को बुलाता हूं, जो सुन्दर रूप वालीं अमृत को धारण करती हैं, हे द्यौ और पृथिवी ! आप हमारी महान (भय) से रक्षा करें ॥ ६ ॥

द्यावापृथिव्यौ देवते, त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११।

उर्वीपृथ्वीबहुलेदूरेअन्ते उपब्रुवे
नमसायज्ञेअस्मिन्। दधातेयेसुभगे
सुप्रतूर्ती द्यावारक्षतंपृथिवीनोअभ्वात्॥ ७॥

उर्वी	विशाले	विशालों को
पृथ्वी०	विस्तीर्णे	विस्तारवालियोंको
बहुले०	बहुरूपे	बहुतरूप वालियीं को
दूरेअन्ते०	विप्रकृष्टान्ते	दूर तक सीमा वालियों को
उप	उप +	–
ब्रुवे	उप+ब्रुवे, स्तौमि	स्तुति करता हूं
नमसा	नमस्कारेण	नमस्कार के साथ
यज्ञे	यज्ञे	यज्ञ में
अस्मिन्	अस्मिन्	इसमें
दधाते	धारयतः	धारण करती हैं
ये०	ये	जो दोनों

सु॒ऽभगे॑॰	सौभाग्योपेते	सौभाग्य वाली
सु॒ऽप्रतूर्ती॑॰	सुवेगयुक्ते	खूब बेगवाली
द्यावा॑	द्यावा +	–
रक्ष॑तम्	रक्षतम्	रक्षा करो
पृ॒थि॒वी॒॰	द्यावा+पृथिवी, हेद्यावापृथिव्यौ!	हेद्यौ और पृथिवी
नः॒	अस्मान्	हमको
अभ्वा॑त्	महतः	महान से

संस्कृतार्थः ।

(अहम्) अस्मिन् यज्ञे विशाले विस्तीर्णे, बहुरूपे, विप्रकृष्टान्ते (च) द्यावापृथिव्यौ नमस्कारेण स्तौमि, सौभाग्योपेते सुवेगयुक्ते (च) ये (सर्वम्) धारयतः, हे द्यावापृथिव्यौ! अस्मान् महतः (भयात्) रक्षतम् ॥७॥

भाषार्थः ।

(मैं) इस यज्ञमें विशाल, विस्तीर्ण, बहुत रूपवाली और दूरतकसीमावाली द्यौ और पृथिवीको नमस्कारकेसाथ

स्तुति करता हूं, जो सौभाग्य वालीं और खूब वेगवालीं सब को धारण करती हैं, हे द्यौ और पृथिवी ! आप हम को महान (भय) से रक्षाकरें ॥ ७ ॥

द्यावापृथिव्यौ देवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

देवान्वायच्चकृमाकच्चिदागः
सखायंवासदमिज्जास्पतिं वा । इयं
धीर्भूयाअवयानमेषां द्यावारक्षतं
पृथिवीनोअभ्वात् ॥ ८ ॥

देवान्	देवान् (प्रति)	देवताओं (कीओर)
वा	वा	अथवा
यत्	यम्	जिसको
चकृम	कृतवन्तः स्मः	हमने किया है

ऋ०मं०१ सू०१८५ मं०८ (५०३२)

कत्	कत्+	–
चि॒त्	कत्+चित्, किञ्चित्	जो कुछ
आग॑ः	पापम्	पाप को
सखायम्	मित्रम् (प्रति)	मित्र (की ओर)
वा॒	वा	अथवा
स॒द॑म्	सदम् +	–
इत्	सदम्+इत् कस्मिंश्चित्काले	किसी काल में
जाःप॑तिम्	जामातरम् (प्रति)	जमाई (कीओर)
वा॒	वा	अथवा
इ॒यम्	इदम्	यह
धीः	स्तोत्रम्	स्तोत्र
भू॒या॒ः	भूयात् (पुरुषव्यत्ययया)	हो

अवऽयानम्	निवर्तकम्	हटाने वाला
एषाम्	तेषाम्	उनके
द्यावा	द्यावा+	–
रक्षतम्	रक्षनम्	आप दोनों रक्षा करो
पृथिवी॰	द्यावा+पृथिवी, हेद्यावापृथिव्यौ	हे द्यौ और पृथिवी
नः	अस्मान्	हम को
अभ्वात्	महतः	महानसे

संस्कृतार्थः ।

हे द्यावापृथिव्यौ ! (वयम्) देवान्प्रतिवा, मित्रम् (प्रति) वा, जामातरम् (प्रति) वा कस्मिंश्चित् काले यत् किञ्चित् पापं कृतवन्तःस्मः, तेषामिदं स्तोत्रं निवर्तकं भूयात्, (युवाम्) अस्मान् महतः (भयात्) रक्षतम् ॥ ८ ॥

भावार्थः ।

हे द्यौ और पृथिवी ! (हमने) देवताओं के प्रति वा मित्र के प्रति वा जामाता के प्रति किसी काल में जो कुछ पाप किया है, यह स्तोत्र उसके दूर करने वाला हो, (आप) हमको महान भय से बचाओ ॥ ८॥

द्यावापृथिव्यौदेवते,निचृत् त्रिष्टुप्छन्दः।११।०१।११।११

उभाशंसानर्यामामविष्टामुभे
मामूतीअवसासचेताम्। भूरिचिदर्यः
सुदास्तरायेषामदन्तइषयेमदेवाः।९

उभा	उभे	दोनों
शंसा	प्रशस्ये	प्रशंसनीय
नर्या	नृभ्योहिते	मनुष्यों के लिये हितकारी
माम्	माम्	मुझ को

अ॒वि॒ष्टा॒म्	रक्षताम्	रक्षा करें
उ॒भे॰	उभे	दोनों
माम्	माम्	मुझ को
ऊ॒ती॰	रक्षिके	रक्षिका
अव॑सा	रक्षया (सह)	रक्षा के साथ
स॒चे॒ता॒म्	सङ्गच्छेताम्	साथ रहें
भूरि॑	प्रभूतम्	बहुत
चि॒त्	(पूरणः)	–
अ॒र्यः	अरेः	शत्रु से
सु॒दाःऽत॑राय	दातृतराय	अधिक देने के लिये
इ॒षा	अन्नेन	अन्न से
मद॑न्तः	मादयन्तः	मद युक्त होते हुए

इषयेम	इच्छेम	हम इच्छा करें
देवाः	हे देवाः !	हे देवताओ ?

संस्कृतार्थः ।

हे देवाः ! नृभ्योहिते उभे प्रशस्ये (द्यावापृथिव्यौ) मां रक्षताम्, उभेरक्षके (सत्यौ) गुप्त्या (सह) मां सङ्गच्छेताम्, (वयम्) शत्रोः दातृतराय अन्नेन माद्यन्तः (सन्तः) प्रभूतम् (धनम्) इच्छेम॥ ९

भाषार्थः ।

हे देवो ! मनुष्य हितकारी दोनों प्रशंसा के योग्य (द्यौ और पृथिवी) मेरी रक्षा करें, और दोनों रक्षिका पालन करती हुईं मेरे साथ रहें,(हम) शत्रु से अधिक दानी होने के लिये अन्न से मोद करते हुए बहुत (धन) की इच्छा करें ॥ ९ ॥

द्यावापृथिव्यौ देवते, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

ऋतंदिवेतदवोचंपृथिव्या अभि

श्रावायप्रथमंसुमेधाः। पातामवद्या

दु॑रि॒ताद॒भीके॑ पि॒तामा॒ताच॑रक्षता॒म
वो॑भिः ॥ १० ॥

ऋ॒तम्	सत्यम्	सत्य को
दि॒वे	दिवे	द्यौ के लिये
तत्	तत्	उसको
अ॒वो॒च॒म्	उक्तवानस्मि	मैंने कहा है
पृ॒थि॒व्यै	पृथिव्यै	पृथिवी के लिये
अ॒भि॒ऽश्रा॒वा॑ः	अभितःश्रवणाय	चारों ओर से सुनने के लिये
प्र॒थ॒मम्	मुख्यम्	मुख्य को
सु॒ऽमे॒धाः	सुमेधायुक्तः	सुन्दर बुद्धि से युक्त
पा॒ताम्	रक्षतम्	रक्षा करें

ऋ०मं०१ सू०१८५ मं०१० (५०३८)

अ॒व॒द्यात्	निन्दनीयात्	निन्दा वाले से
दुः॒ऽइ॒तात्	अनिष्टपातात्	अनिष्ट घटना से
अ॒भीके॑	समीपे	समीपमें
पि॒ता	पिता	पिता
मा॒ता	माता	माता
च॒	च	और
र॒क्ष॒ता॒म्	पालयताम्	पालन करें
अवः॑ऽभिः	रक्षाभिः	रक्षाओं से

संस्कृतार्थः।

सुमेधायुक्तः (अहम्) अभितःश्रवणार्थं द्यावापृथिवीभ्यां तन्मुख्यं सत्यं कथितवानस्मि, (ते) समीपे (भूत्वा) निन्दनीयात् अनिष्टपातात् (चाऽस्मान्) रक्षताम्, पितामाता च (भूत्वा) रक्षाभिः अस्मान् पालयताम् ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

सुन्दर बुद्धि से युक्त हुए होते(मैंने)सबके सुनने के लिये द्यौ और पृथिवी के अर्थ उस मुख्य सत्य का उच्चारण किया है, वे समीप (हो कर) निन्दनीय और अनिष्ट घटना से (हमें) बचावें और पितामाता (बन कर) रक्षाओं के द्वारा हमारा पालन करें ॥१०॥

द्यावापृथिव्यौ देवते,त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११

इ॒दंद्या॑वापृथिवीस॒त्यम॑स्तु॒ पित॒
र्मात॒र्यदि॒होप॑ब्रु॒वेवा॑म् । भू॒तंदे॒वा
ना॑मव॒मेअवो॑भि वि॒द्यामे॒षंवृ॒जनं॑जी॒र
दा॑नुम् ॥ ११ ॥

इ॒दम्	इदम्	यह
द्या॒वा॒ पृथि॒वी॒॰	हे द्यावापृथिव्यौ !	हे द्यौ और पृथिवी !

सत्यम्	सत्यम्	सत्य
अस्तु	अस्तु	हो
पितः	हे पितः !	हे पिता !
मातः	हे मातः !	हे माता !
च	च	और
यत्	यत्	जो
इह	इह	यहां
उपब्रुवे	सामीप्येन कथयामि	पास होकर कहता हूं
वाम्	युवाम्	तुम दोनों को
भूतम्	भवतम्	आप दोनों हों
देवानाम्	देवानाम्	देवताओं के
अवमे०	समीपे (निघं०१।१२)	समीप

अवः॑ऽभिः	रक्षाभिः	रक्षाओं से
वि॒द्याम॑	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इ॒षम्	अन्नम्	अन्न को
वृ॒जन॑म्	बलम्	बल को
जी॒रऽदा॑नुम्	शीघ्रदानशीलताम्	शीघ्र दान के स्वभाव को

संस्कृतार्थः।

हे पितृमातृरूपे! द्यावापृथिव्यौ! इदं सत्यमस्तुयदिह युवाम् (अहम्) सामीप्येन कथयामि, देवानाम् (मध्ये- युवामेव) रक्षाभिः (अस्माकं) समीपे भवतम्, (वयम्) अन्नंबलं शीघ्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ ११ ॥

भाषार्थ।

हे पिता माता रूप द्यौ और पृथिवी ! जो कुछ मैं समीप (होकर) आप से कहता हूं वह सत्य हो, देवताओं के (बीच में आप ही) रक्षा के साथ (हमारे) समीप होवें, (हम) अन्न को बल को और शीघ्रदान के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ११ ॥

ऋ० मं०१ सू० १८६

विश्वेदेवादेवता, अगस्त्यऋषिः ।

विनियोगोलैङ्गिकः ।

सूक्त का भावार्थ ।

सब के प्रेरण करने वाले सवितादेव अन्न के द्वारा अच्छी तरह पूजा किये जाने के लिये हमारे यज्ञ में आवें, हे जवान देवताओ! जिस प्रकार आप हमारी स्तुति द्वारा समीप आकर मोद करें वैसा हो ॥ १ ॥ हमारें लिये मित्र अर्यमा और वरुण ये सब समान मन वाले देवता एकट्ठे होकर आवें, जिस प्रकार ये सब हमारे बढ़ाने वाले हों, और अत्यन्त प्रयत्न से हमारे बल को हीन न करें ॥ २ ॥ हे आर्य लोगो! मैं आपके प्रियतम अतिथि अग्नि की स्तुति करता हूं, जो स्तोत्रों से शत्रुओं के जीतने वाले और हम से प्रीति करने वाले हों, जिस प्रकार आर्य से स्तुति किये गए बुद्धिमान वरुण हमारे लिये सुन्दर यज्ञको और अन्नों को भरपूर करें ॥ ३ ॥ जिस प्रकार कोई एक ही दिन में गौ के एक थनमें अनेक रूप वाला दूध दोह लेवे, इस प्रकार मैं स्तोत्र को अनेक रूप वाला रचता हुआ जय की इच्छा से सहज से दोही जाने वालीगो की नाईं दिन रात आपके पास आकर नमस्कार के साथ प्रार्थना करता हूं ॥ ४ ॥ और आकाश में रहने वाली सर्पाकार विद्युत हमारे लिये सुख को करे, सिन्धु नदी बछड़े को पोषण करती हुई गौ की नाईं मनुष्यों को पोषण करती हुई जाती है, हे देवो! ऐसा करो जिस से हम जलों से उत्पन्न हुए अग्नि को जिन को मन के वेग वाले घोड़े ले जाते हैं अपने कल्याण के लिये प्रेरण करें ॥ ५ ॥ और त्वष्टा देव समीप आकर स्तोताओं के साथ

समान मन वाले हुए हमारी ओर आवें और वृत्र के मारने वाले मनुष्यों के पालक नरों में सब से बलवान इन्द्र यहां पर हमारे लिये आवें ॥ ६ ॥ और इन्द्र को घोड़े जोड़ कर आने के लिये प्रेरण करने वाली हमारी स्तुतियां इस जवान इन्द्र को ऐसे चाटती हैं जैसे गौएं बछड़े को, वे स्तुतियां नरों के बीच सब से अधिक आनन्द देने वाले इन्द्र को ऐसे प्राप्त होती हैं जैसे जमने वाली पत्नियां पति को ॥ ७ ॥ और बढ़े हुए बल वाले शत्रुओं के भक्षण करने वाले और मित्रों के पक्षपाती मरुत द्यौ और पृथिवी के साथ समान मन वाले होकर देवताओं की नाईं यज्ञ में बैठें जिन के बिन्दु युक्त घोड़ों से जुड़े हुए रथ जल के प्रवाहों की नाईं चलते हैं ।। ८ ॥ जब से इन मरुतों की महिमा अच्छी तरह से जानी गई, तब से यजमान कुशा बिछाए हुए यज्ञ का प्रयोग करते हैं। फिर इन की सेनाएं सब ऊसर भूमि को इस तरह तर करती हैं जैसे अच्छे दिन में बाणों से ॥ ९ ॥ हे आर्य लोगो! रक्षा के लिये अंश्विनों को आगे करो और पूषा को आगे करो, द्वेष से रहित विष्णु वायु और ऋभुपति इन्द्र सचमुच अपने अधीन बल वाले हैं, मैं सुख के लिये देवताओं को लौटा कर सामने करता हूं ॥ १० ॥ हे पूज्यदेवो! यह हमारी भक्ति जो कल्याण की इच्छा से देवताओं में प्रयत्न करती है, आपको चेष्टा कराने वाली और हमारे पास निवास कराने वाली हो, हम अन्न को बल को और ओघदान देने के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ११ ॥

विश्वेदेवादेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

आनइळाभिर्विदथेसुशस्ति वि-
श्वानरःसवितादेवएतु। अपियथा

ऋ०मं०१ सू०१८६मं०१ (५०४४)

युवानोमत्सथानो विश्वंजगदभि

पित्वेमनीषा ॥ १ ॥

आ	आ +	-
नः	अस्माकम्	हमारे
इळाभिः	अन्नैः	अन्नों द्वारा
विदथे	यज्ञे	यज्ञ में
सुशस्ति	सुष्ठु पूजार्थम् (सुपोलुक्)	अच्छी प्रकार पूजा के लिये
विश्वानरः	सर्वस्यनेता	सब का नेता
सविता	सविता	सविता
देवः	देवः	देव
एतु	आ + एतु, आगच्छतु	आवे

अपि॑	अपि	भी
यथा	यथा	जिस प्रकार
यु॒वा॒न॒ः	हे युवानः !	हे जवानो !
मत्स॑थ	मादयथः	मद से युक्त करते हो
न॒ः	अस्माकम्	हमारी
विश्व॑म्	सर्वम्	सम्पूर्ण को
जग॑त्	जगत्	जगत को
अ॒भि॒ऽपि॒त्वे	अभिप्राप्य	समीप आकर
म॒नी॒षा	स्तुत्या	स्तुति द्वारा

संस्कृतार्थः ।

सर्वस्यनेता सवितृदेवः अन्नैः सुष्ठुपूजार्थम् अस्मदीये यज्ञ आगच्छतु, हे युवानः ! (देवाः !) यथा (यूयम्) अस्मदीयया स्तुत्या अभिप्राप्य सर्वंजगत् मादयथः (तथा भवतु) ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

सब के प्रेरण करने वाले सवितादेव अन्नों के द्वारा अच्छी प्रकार पूजा के लिये हमारे यज्ञमें आवें हे जवान देवताओ! जिस प्रकार (आप) हमारी स्तुति द्वारा समीप आकर मोद करें (वैसा हो) ॥ १ ॥

विश्वेदेवादेवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।१ १।१ १।१ १।१ १

आनोविश्वआस्क्रागमन्तुदेवा
मित्रोअर्यमावरुणःसजोषाः । भुवन्
यथानोविश्वेवृधासःकरन्त्सुषाहा-
निथरंनशवः ॥ २ ॥

आ	आ +	–
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
विश्वे	सर्वे	सब
आस्क्राः	सहभूताः	इकट्ठे हुए

ग॒म॒न्तु॒	आ+गमन्तु, आगच्छन्तु	आवें
दे॒वाः	देवाः	देवता
मि॒त्रः	मित्रः	मित्र
अ॒र्य॒मा	अर्यमा	अर्यमा
वरु॑णः	वरुणः	वरुण
स॒जोषाः॑	समानमनस्काः	समान मन वाले
भु॑वन्	भवेयुः	हों
यथा॑	यथा	जिस प्रकार
नः॒	अस्माकम्	हमारे
विश्वे॑	सर्वे	सब
वृ॒धासः॑	वर्धयितारः	बढ़ाने वाले

करन्	कुर्युः	करें
सुऽसह्वा	अतिप्रयत्नेन	अत्यन्त प्रयत्न के साथ
विथुरम्	हीनम्	हीन को
न	न	नहीं
शवः	बलम्	बलको

संस्कृतार्थः ।

अस्मभ्यं मित्रोऽर्यमा वरुणः (चैते) सर्वे समान मनस्का देवाः सहभूताः (सन्तः) आगच्छन्तु, यथा (एते) सर्वे अस्माकं वर्धयितारो भवन्तु अतिप्रयत्नेन (चाऽस्माकम्) बलं हीनं नकुर्य्युः ॥ २ ॥

भावार्थः ।

हमारे लिये मित्र अर्यमा (और) वरुण (ये) सब समान मन वाले देवता इकट्ठे होकर आवें, जिस प्रकार ये सब हमारे बढ़ाने वाले हों (और) अत्यन्त प्रयत्न के साथ (हमारे) बल को हीन न करें ॥ २ ॥

विश्वेदेवा देवता, विराड् त्रिष्टुप्छन्दः ।११।९।११।११

प्रेष्ठं॑वो॒अति॑थिंगृणीषे॒ऽग्निं श॒स्ति
भि॑स्तु॒र्वणिः॑स॒जोषाः । अस॒द्यथा॑नो॒
वरु॑णःसुकी॒र्तिरिष॑श्चपर्षदरिगू॒र्तः
सू॒रिः ॥ ३ ॥

प्रेष्ठ॑म्	प्रियतमम्	अत्यन्त प्यारे को
व॒ः	युष्माकम्	तुम्हारे
अति॑थिम्	अतिथिम्	अतिथि को
गृ॒णी॒षे॒	स्तौमि (व्यत्ययेन मध्यमः)	स्तुति करता हूं
अ॒ग्निम्	अग्निम्	अग्नि को
श॒स्तिऽभि॑ः	स्तोत्रैः	स्तोत्रों से

ऋ०मं०१ सू०१८६ मं०३ (५०५०)

तु॒र्वणि॑ः	जेता	जीतने वाला
स॒ऽजोषा॑ः	प्रीतिकरः	प्रीति करने वाला
अस॑त्	भवेत्	हो
यथा॑	यथा	जिस प्रकार
नः॒	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
वरु॑णः	वरुणः	वरुण
सु॒ऽकी॒र्तिः	शोभनयशः	सुन्दर यश को
इष॑ः	अन्नानि	अन्नों को
च॒	च	और
प॒र्ष॒त्	पूरयेत्	भरपूर करे
अ॒रि॒ऽगू॒र्तः	आर्येण स्तुतः	आर्य से स्तुति किया गया
सू॒रिः	मेधावी	बुद्धिमान्

संस्कृतार्थः ।

(हे आर्याः !) (अहम्) युष्माकं प्रियतममतिथिमग्निंस्तौमि (यः) स्तोत्रैः (शत्रूणाम्) जेता (अस्माकम्)प्रीतिकरः (च) भवेत् यथा (च) आर्येणस्तुतो मेधावी वरुणोऽस्मभ्यं शोभनयशोऽन्नानि च पूरयेत् ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

(हे आर्य लोगो !) (मैं) आपके प्रियतम अतिथि अग्नि की स्तुति करता हूं , जो स्तोत्रों से शत्रुओं के जीतने वाले (और हम से) प्रीति करने वाले हों, (और) जिस प्रकार स्तुति किये गए बुद्धिमान वरुण हमारे लिये सुन्दर यश और अन्नों को भरपूर करें ॥ ३ ॥

विश्वेदेवा देवता,त्रिष्टुपूछन्दः ।११।११।११।११।

उपवएषेनमसाजिगीषोषासान
क्तासुदुघेवधेनुः। समानेअहन्विमि
मानोअर्कं विषुरूपेपयसिसस्मिन्न-
धन् ॥ ४ ॥

ऋ०मं०१सू०१८६ मं०४ (५०५२)

उप	उपेत्य	समीप आकर
वः	युष्माकम्	तुम्हारे
आ	आ+	–
ईषे	आ+ईषे, प्रार्थयामि	मैं प्रार्थना करता हूं
नमसा	नमस्कारेण	नमस्कार के साथ
जिगाषा	जेतुमिच्छया	जीतने की इच्छासे
उषासा नक्ता	अहनिरात्रौ च	दिन और रात्रि में
सुदघाऽइव	सुधोग्ध्री यथा	सहज से दोही जाने वाली जैसे
धेनुः	धेनुः	गौ
समाने	एकस्मिन्नेव	एक ही में

अहन्	अहनि	दिन में
वि॒ऽमिमा॑नः	विविधंमिमानः	अनेक प्रकार से नापता हुआ
अ॒र्कम्	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
विषु॑ऽरूपे	नानारूपाणि	अनेक रूप वाले
पय॑सि	पयसि	दूध में
सस्मि॑न्	समाने	एक ही म
ऊध॑न्	ऊधसि	थन म

संस्कृतार्थः ।

हे विश्वेदेवाः ! अहंएकस्मिन्नेव अहनि एकस्मिन्नेव ऊधसि नानारूपे पयसि स्तोत्रं विविधं मिमानः (सन्) जेतुमिच्छया सुदोग्ध्री धेनुरिव दिवारात्रिः युष्मानुपेत्य नमस्कारेण प्रार्थयामि ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे विश्वेदेवो ! मैं एक ही दिन में एक ही थन में अनेक रूप वाले दूध में स्तोत्र को नाना प्रकार

से नापता हुआ जीतने की इच्छा से सहज से दोही जाने वाली गौ की नाईं दिन रात आप के पास आकर नमस्कार के साथ प्रार्थना करता हूं ॥ ४ ॥

यहां सुदुघा गौ स्वयं ऋषि हैं, और स्तोत्र दूध हैं जो सहज से ऋषि के हृदय से निकलते हैं ; ऋषि कहते हैं कि जिस प्रकार साधारण मनुष्य एक दिन में एक थन से एक ही तरह का दूध दोह सकता है, मैं ऐसा नहीं हूं। मैं देवताओं की कृपा से एक ही दिन में एक थन रूप अपने हृदय से कई प्रकार के दूध रूपी स्तोत्रों को निकाल सकता हूं।

विश्वेदेवादेवता, निचृद्त्रिष्टुप्छन्दः।३ १।११।१०।११।

उ॒तनो॒ऽहि॑र्बु॒ध्न्यो॒३॑मय॑स्कः॒
शि॒शुंन॒पि॒प्युषी॑ववे॒ति॒सिन्धुः॑ । येन॒
न॑पा॒तम॒पांजु॒नाम॑ मनो॒जवो॒वृष॑णो॒यं
व॑हन्ति ॥ ५ ॥

उ॒त	अपिच	और
नः	अस्मभ्यम्	हमारेलिये

अहिः	सर्पः	सर्प
बु॒ध्न्य॑ः	आकाशेभवः	आकाशमें रहने वाला
मयः	सुखम्	सुख को
कः	करोतु	करे
शि॒शु॑म्	वत्सम्	बछड़े को
न	इव	की नाईं
पि॒प्युषी॑ ऽइव	आप्याययन्तीऽव	मानो पोषण करती हुई
वे॒ति॒	गच्छति	जाती है
सिन्धु॑ः	सिन्धुः	सिन्धु नदी
ये॑न	येन	जिस से
नपा॑तम्	वंशजम्	सन्तान को

अ॒पाम्	जलानाम्	जलों के
ज॒नाम॑	प्रेरयाम	हम प्रेरण करें
म॒न॒ःऽजु॑वः	मनोवेगाः	मन के वेग वाले
वृ॑षणः	नराश्वाः	नर घोड़े
यम्	यम्	जिस को
वह॑न्ति	वहन्ति	ले जाते हैं

संस्कृतार्थः।

अपिच्चाऽस्मभ्यम् आकाशेभवः सर्परूपः (विद्युत्) सुखं करोतु, सिन्धुर्नदी वत्सं आप्याययन्ती (गौः) इव गच्छति, येन (वयम्) जलानां वंशजम् (अग्निम्) प्रेरयाम यं मनोवेगा नराश्वा वहन्ति ॥ ५ ॥

भाषार्थः।

और हमारे लिये आकाश में रहने वाले सर्प रूप विद्युत सुख को करे, सिन्धु नदी बछड़े को पोषण करती हुई गौ की नाईं जाती है, जिस के द्वारा हम जलों के सन्तान (अग्नि) को प्रेरण करें जिस को मन के वेग वाले नर घोड़े लेजाते हैं ॥५॥

आशय के लिये देखो भावार्थ।

विश्वेदेवा देवता, त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।१०।११।

उ॒तन॒ईं॑त्वष्टाग॒न्त्वच्छा॒ स्मत्सू॒रिभि॑रभिपि॒त्वेस॒जोषाः॑ । आवृ॑त्र॒हेन्द्र॑श्चर्षणि॒प्रास्तु॑विष्ट॒मोन॒रांन॑ इ॒हग॑म्याः ॥ ६ ॥

उ॒त	अपिच	और
न॒ः	अस्मान्	हमारे प्रति
ई॒म्	(पूरणः)	–
त्वष्टा॑	त्वष्टा	त्वष्टा
आ	आ+	–
ग॒न्तु॒	आ+गन्तु आगच्छतु	आवे

अच्छ॑	प्रति	ओर
स्मत्	सह	साथ
सू॒रिभि॑ः	स्तोतृभिः (निघं० ३।१६)	स्तोताओं से
अ॒भि॒ऽपि॒त्वे	समीपमागत्य	पास आकर
स॒ऽजोषा॑ः	समानमनस्कः	एक मन वाला
आ	आ+	–
वृ॒त्र॒ऽहा	वृत्रस्य हन्ता	वृत्र के मारने वाला
इन्द्र॑ः	इन्द्रः	इन्द्र
च॒र्ष॒णि॒ऽप्राः	मनुष्याणांपालकः	मनुष्योंका पालक
तु॒विःऽत॑मः	बलवत्तमः	सब से अधिक बलवान
न॒राम्	नराणाम्	नरों के बीच

नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
इह	अत्र	यहां
गम्याः	आ+गम्याः आगच्छेत्	आवे

संस्कृतार्थः।

अपिच समीपमागत्य स्तोतृभिः समानमनस्कः त्वष्टा अस्मान् प्रति, आगच्छतु, वृत्रस्यहन्ता मनुष्याणांपालको नराणाम् (मध्ये) बलवत्तम इन्द्रः (च) अत्र अस्मदर्थमागच्छेत् ॥ ६ ॥

भावार्थः।

और समीप आकर स्तोताओं के साथ समान मन वाले त्वष्टा हमारी ओर आवें, (और) वृत्र के मारने वाले, मनुष्यों के पालक, नरों में सब से बलवान इन्द्र यहां पर हमारे लिये आवें ॥ ६ ॥

इन्द्रोदेवता, विराट् त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।१०।१०।

उतनईमतयोऽश्ववयोगाः शिशुं
नगावस्तरुणंरिहन्ति। तमींगिरो

ऋ०मं०१ सू०१८६मं०७ (५०६०)

ज॑नयो॒नपत्नीः॑ सु॒रभिष्ट॑मंन॒रां॑न

सन्त ॥ ७ ॥

उत	अपिच	और
नः	अस्माकम्	हमारी
ई॒म्	एनम्	इसको
म॒त॑यः	स्तुतयः	स्तुतियां
अश्व॑ऽ योगाः	अश्वयोजने प्रेरकाः	घोड़ोंके जोड़ने में प्रेरण करने वालीं
शिशु॑म्	वत्सम्	बछड़े को
न	इव	जैसे
गा॑वः	गावः	गौएं

तरु॑णम्	तरुणम्	जवान को
रि॒ह॒न्ति॒	लिहन्ति	चाटती हैं
तम्	तम्	उस को
ई॒म्	(पूरणः)	–
गि॑रः	स्तुतयः	स्तुतियां
जन॑यः	जनयित्र्यः	जनने वालीं
न	इव	जैसे
पत्नी॑ः	पत्न्यः	पत्नियां
सु॒र॒भिःऽत॑मम्	अतिशयेनानन्दप्रदम्	सबसे अधिक आनंद देने वाले को
न॒राम्	नराणाम् (मध्ये)	नरों में
न॒स॒न्त॒	प्राप्नुवन्ति	प्राप्त होती हैं

संस्कृतार्थः ।

अपिच अश्वयोजने प्रेरका अस्माकं स्तुतय एनं तरुणम् (इन्द्रम्) गावो वत्समिव लिहन्ति (ताः) स्तुतयः नराणां (मध्ये) अतिशयेनानन्दप्रदं तमेनं जनयित्र्यः पत्न्यः (पतिम्) इव प्राप्नुवन्ति ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

और घोड़े जोड़ने में प्रेरक हमारी स्ततियां इस जवान (इन्द्र) को ऐसे चाटती हैं जैसे गौएं बछड़े को, (वे) स्तुतियां नरों के बीच सब से अधिक आनन्द देने वाले उसको ऐसे प्राप्त होती हैं जैसे जनने वाली पत्नियाँ पति को ॥ ७ ॥

"घोड़े जोड़ने में प्रेरक" इसलिये कि इन्द्र स्तुतियों को सुनकर स्तोता के पास आने के लिये घोड़ों को जोड़ते हैं ।

मरुतो देवताः, त्रिष्टुप्छन्दः।१ १।१ १।१ १।१ १।

उ॒तनईं॑म॒रुतो॑वृ॒द्धसे॑नाः॒ स्मद्रो
द॑सी॒सम॑नसः सदन्तु । पृष॑दश्वा
सो॒ऽवन॑यो॒नरथा॑ रि॒शाद॑सोमित्र॒युजो॒
नदे॒वाः ॥ ८ ॥

उत	अपिच	और
नः	अस्माकम्	हमारे
ईम्	एनम्	इस को
मरुतः	मरुतः	मरुत
वृद्धऽसेनाः	प्रवृद्धबलाः	बढ़े हुए बल वाले
स्मत्	सह	साथ
रोदसी	द्यावापृथिव्योः	द्यौ और पृथिवी के
सऽमनसः	समानमनस्काः	एक मन वाले
सदन्तु	सीदन्तु	बैठें
पृषत्ऽअश्वासः	विन्दुयुक्ताश्वैर्योजिताः	बिन्दु वाले घोड़ों से जुड़े हुए

अवनयः	जलप्रवाहाः	जल के प्रवाह
न	इव	की नाईं
रथाः	रथाः	रथ
रिशादसः	शत्रूणामत्तारः	शत्रुओं के खाने वाले
मित्रऽयुजः	मित्राणांपक्ष पातिनः	मित्रोंके पक्षपाती
न	इव	की नाईं
देवाः	देवाः	देवता

संस्कृतार्थः।

अपिच प्रवृद्धबलाः शत्रूणामत्तारो मित्राणां पक्षपातिनः (च)मरुतो द्यावापृथिवीभ्यां सह समान मनस्काः (सन्तः) देवाइव अस्माकं (यज्ञे) सीदन्तु (येषाम्) विन्दुयुक्ताश्वैर्योजितारथाः जलप्रवाहा इव (सन्ति) ॥ ८ ॥

भाषार्थः।

और बढ़े हुए बलवाले शत्रुओं के भक्षण, करने वाले और मित्रों के पक्षपाती मरुत द्यौ और पृथिवी

के साथ समान मन वाले (होकर) देवताओं की नाईं (यज्ञ में) बैठें, (जिन के) विन्दु वाले घोड़ों से जुड़े हुए रथ जल के प्रवाहों की नाईं हैं ॥ ८ ॥

विश्वेदेवा देवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११

प्रनुयदे॑षांमहि॒नाचि॑कि॒त्रे प्रयु॑ञ्जतेप्र॒युज॒स्तेसु॑वृ॒क्ति। अध॒यदे॑षां सु॒दिने॒नशर॒द् विश्व॒मेरि॑णंप्रुषा॒यन्त॒ सेनाः॑ ॥ ९ ॥

प्र	प्रकर्षेण	अच्छी तरह से
नु	खलु	सचमुच
यत्	यदा	जब
ए॒षा॒म्	एषाम्	इनकी

महिना	महिमा	महिमा
चिकिते	विज्ञातम्	जानी गई
प्र	प्र+	–
युञ्जते	प्र+युञ्जते	प्रयोग करते है
प्रऽयुजः	प्रयोगान्	प्रयोगों को
ते	ते	वे
सुऽवृक्ति	सुबर्हिषः	जिन्होंने बर्हि को सुन्दर रीति से काटा है
अध	अथ	फिर
यत्	यत्	जो
एषाम्	एषाम्	इनका
सुऽदिने	सुदिने	सुन्दर दिन में

न	इव	की नाईं
अस्तः	वाणः	बाण
विश्वम्	सर्वम्	सबको
आ	आ +	–
इरिणम्	ऊषरभूमिम्	ऊसर भूमि को
प्रुषायन्त	आ+प्रुषायन्त क्लेदयन्ति	सब ओर से तर करती हैं
सेनाः	सेनाः	सेनाएं

संस्कृतार्थः ।

यदाखलु एषाम् (मरुताम्) महिमा प्रकर्षेण विज्ञातः (तदा) ते सुबर्हिषः (यजमानाः यज्ञस्य) प्रयोगान् प्रयुञ्जते,अनन्तरं यदेषां सेनाः(सन्तिताः) सर्वामूषरभूमिं सुदिनेवाणः (सेनाम्) इवसर्वतः क्लेदयन्ति ॥ ९ ॥

भावार्थः ।

सचमुच जब इन (मरुतां) की महिमा अच्छी तरह जानीगई (तब से) वे सुन्दर रीतिसे कुशा बि-

छाने वाले (यजमान, यज्ञ के) प्रयोगों को करते हैं फिर जो इनकी सेनाएं (हैं) वे सब ऊसर भूमि को ऐसे तर करती हैं जैसे सुन्दर दिन में बाण (सेना को) ॥ ९ ॥

विश्वेदेवा देवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।१०।११।१०।११

प्रो अश्विनाववसे कृणुध्वं प्रपूषणं स्वतवसो हि सन्ति ।
अद्वेषो विष्णुर्वात ऋभुक्षा अच्छा सुम्नाय ववृतीय देवान् ॥ १० ॥

प्रो०	अग्रे	आगे
अश्विनौ	अश्विनौ	अश्विनों को
अवसे	रक्षणाय	रक्षा के लिये
कृणुध्वम्	कुरुध्वम्	करो

प्र	अग्रे	आगे
पू॒षण॑म्	पूषणम्	पूषा को
स्वऽत॑वसः	स्वायत्तबलाः	अपने अधीन बल वाले
हि	खलु	सचमुच
सन्ति॑	सन्ति	हैं
अ॒द्वे॒षः	द्वेषरहितः	द्वेष से रहित
वि॑ष्णुः	विष्णुः	विष्णु
वा॑तः	वातः	वायु
ऋ॒भु॒क्षाः	ऋभूणांवर्तनिरिन्द्रः	इन्द्र
अच्छ॑	आभिमुख्येन	सामने
सु॒म्नाय॑	सुखाय	सुखके लिये

व॒वृ॒ती॒य	आवर्त्तयेयम्	मैं लौटाऊं
दे॒वान्	देवान्	देवताओं को

संस्कृतार्थः ।

(हे आर्य्याः !) रक्षणाय अश्विनौ अग्रे कुरुध्वम् पूषणम् (च) अग्रे (कुरुध्वम्), द्वेषरहितः, विष्णुः, वातः, ऋभूणांपतिः (इन्द्रश्च) स्वायत्तबलाः खलुसन्ति, (अहम्) देवान् सुखाय आभिमुख्येनावर्तयामि ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

हे आर्य लोगो ! रक्षा के लिये अश्विनों को आगे करो (और) पूषा को आगे करो, द्वेष से रहित विष्णु वायु और ऋभुओं के पति इन्द्र सच मुच अपने अधीन बलवाले हैं । मैं देवताओं को सुख के लिये सामने लौटाता हूं ॥ १० ॥

विश्वेदेवादेवताः,भुरिक्त्रिष्टुप्छन्दः ।१२।११।११।११

इ॒यंसावो॑अ॒स्मेदीधि॑तिर्यजत्रा

अ॒पिप्राणी॑च॒सद॑नीचभूयाः । निया

दे॒वे॒षुयत॑तेवसू॒यु वि॒द्यामे॒षंवृ॒जनं॑जी॒र
दा॑नुम् ॥ ११ ॥

इ॒यम्	इयम्	यह
सा	सा	वह
वः॒	युष्मदर्थम्	तुम्हारे लिये
अ॒स्मे०	अस्माकम्	हमारी
दीधि॑तिः	भक्तिः	भक्ति
य॒ज॒त्रा॒ः	हे पूजनीयाः	हे पूजनियो !
अ॒पि॒ऽप्राणी॑	चेष्टयित्री	चेष्टाकराने वाली
च॒	च	और
सद॑नी	निवास कारिणी	बसाने वाली
च	च	और

भू॒या॒ः	भवतु	हो
नि	नि+	–
या	या	जो
दे॒वेषु॑	देवेषु	देवताओं में
यत॑ते	नि+यततेप्रयतते	प्रयत्न करती है
व॒सु॒ऽयुः	कल्याणेच्छा युक्ता	कल्याण की इच्छा वाली
वि॒द्याम॑	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इ॒षम्	अन्नम्	अन्न को
वृ॒जन॑म्	बलम्	बल को
जी॒रऽदा॑नुम्	शीघ्रदान शीलताम्	शीघ्रदान के स्वभाव को

संस्कृतार्थः।

हे पूजनीयाः! [illegible]इयमस्माकं भक्तिः (युष्माकम्) चेष्टयित्री (अ[illegible]समीपे) निवासकारिणी च भवतु,

या कल्याणेच्छया देवेषु प्रयतते, (वयम्) अन्नं बलं शीघ्रदानशीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ ११ ॥

भाषार्थः ।

हे पूज्यो ! वह यह हमारी भक्ति (आप को) चेष्टाकराने वाली और (हमारे पास) निवास कराने वाली हो, जो कल्याण की इच्छा से देवताओं में प्रयत्न करती है,(हम) अन्न को बल को और शीघ्र दान के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ११ ॥

ऋ० मं०१ सू०१८७ ।

अन्नं देवता, अगस्त्य ऋषिः ।

विनियोगः–

१ । ११ अनेन सूक्तेन उपस्थितमन्नं निरुपतिष्ठेत (ऋग्विधान १।२७) ॥

सूक्त का भावार्थ ।

अब मैं महान बल को धारण करने वाले अन्न की स्तुति करता हूं जिस के बल से त्रितने वृत्र को जोड़ से जोड़ तक चीर डाला ॥ १ ॥ हे स्वादु अन्न ! हे मिठास से युक्त अन्न ! हमने तुझ को वरा है, तू हमारा रक्षक बन ॥ २ ॥ हे अन्न ! कल्याण रूप तू कल्याण युक्त रक्षाओं के साथ हमारी ओर आ, और स्वास्थ्य के देने वाला द्वेष से रहित सुखकारी और दूई न करने वाला मित्र बन ॥ ३ ॥ हे अन्न ! तेरे रस लोकों की न्याईं विस्तृत हैं और वायु की न्याईं द्यौ में फैले हुए हैं ॥ ४ ॥ हे पालन करने वाले, अत्यन्त स्वादु अन्न ! तेरे देने वाले और तेरे रसों के खाने वाले मनुष्य मोटी ग्रीवा वाले बैलों की न्याईं पुरुषार्थी होते हैं ॥ ५ ॥ हे अन्न ! महान जो देवता हैं उनका मन तुझ में स्थापित है, तेरी ध्वजा के नीचे बड़े बड़े सुन्दर कर्म किये गए हैं, इन्द्र ने तेरी ही सहायता से वृत्र को मारा है ॥ ६ ॥ हे अन्न ! वह जो मेघों का धन रूप जल बरसा है इसलिये पर्य्याप्त खाने के लिये हम को यहां पर प्राप्त हो ॥ ७ ॥ हे अन्न ! जो हम जलों के और ओषधियों के स्वल्प भाग को खाते हैं, हे अन्न ! तू बढ़ ॥ ८ ॥ हे सोम ! जो हम तुझे दूधसे और यवागू स मिला कर खाते हैं, हे

अन्न तू बढ़ ॥ ९ ॥ हे करम्भ रूप ओषधि ! तुम पुष्टि कारक हृदय के अनुकूल और उद्दीपन करने वाले बनो , हे अन्न तू बढ़ ॥१०॥ हे अन्न ! हमने उस तुझ से स्तुति के वचनों द्वारा हवियों का दोहन किया है जैसे गौसे करते हैं, जो तू देवताओं के साथ मोद करने वाला और हमारे साथ मोद करने वाला है ॥ ११ ॥

अन्नंदेवता, अनुष्टव्गर्भाउष्णिक्छन्दः।५।८।८।८

पितुंनुस्तोषं महोधर्माणंतविषीम् ।यस्यत्रितोव्योजसा वृत्रंविपर्वमर्दयत् ॥ १ ॥

पितुम्	अन्नम्	अन्नको
नु	इदानीम्	अब
स्तोषम्	स्तौमि	मैं स्तुति करता हूं
महः	महत्	महान
धर्माणम्	धारकम्	धारणकरनेवालेको

तविषीम्	बलम्	बल को
यस्य	यस्य	जिसके
त्रितः	त्रितः	त्रितने:
वि	वि+	–
ओजसा	बलेन	बलसे
वृत्रम्	वृत्रम्	वृत्रको
विऽपर्वम्	विच्छिन्नसन्धिकम् यथातथ	जोड़ से जोड़ तक
अर्दयत्	वि + अर्दयत् विदीरितवान्	चीर डाला

संस्कृतार्थः ।

इदानीम् अहं महतोबलस्यधारकम् अन्नंस्तौमि यस्यबलेन त्रितो वृत्रं विच्छिन्नसन्धिकम् (कृत्वा) विदीरितवान् ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

अब मैं महान बल को धारण करने वाले अन्न

की स्तुति करता हूं, जिस के बल से त्रित ने वृत्र को जोड़ से जोड़ तक चीर डाला ॥ १ ॥

विद्युत रूप में इन्द्र का ही नाम त्रित है।

अन्नंदेवता, गायत्रीछन्दः ।८।८८।

स्वादोपितोमधोपितो वयंत्वा

ववृमहे। अस्माकमविताभव ॥ २ ॥

स्वादो०	हे स्वादो	हे स्वादु
पितो०	अन्न	अन्न
मधो०	हेमाधुर्योपेत	हे मिठास वाले
पितो०	अन्न	अन्न
वयम्	वयम्	हम
त्वा	त्वाम्	तुझको

ववृमहे	वृतवन्तःस्मः	हमने बरा है
अस्माकम्	अस्माकम्	हमारा
अविता	रक्षकः	रक्षक
भव	भव	हो

संस्कृतार्थः ।

हे स्वादु अन्न ! हे माधुर्योपेत अन्न ! वयं त्वां वृतवन्तःस्मः (त्वम्) अस्माकं रक्षकोभव ॥ २ ॥

भाषार्थ ।

हे स्वादु अन्न ! हे मीठे अन्न ! हमने तुझ को बरा है (तू) हमारा रक्षक बन ॥ २ ॥

अन्नंदेवता, अनुष्टुप्छन्दः ।८।८।८।८।

उपनःपितवाचर शिवःशिवाभिरूतिभिः । मयोभुरद्विषेण्यः सखा सुशेवो अद्वयाः ॥ ३ ॥

उप	प्रति	ओर
नः	अस्मान्	हम को
पितो॰	हे अन्न !	हे अन्न !
आ	आ +	–
चर	आ + चर	आ
शिवः	मंगलरूपः	मंगलरूप
शिवाभिः	मंगल युक्ताभिः	मंगल युक्तों से
ऊतिऽभिः	रक्षाभिः	रक्षाओं से
मयःऽभुः	स्वास्थ्यस्य भावयिता	स्वस्थ्य के करने वाला
अद्विषेण्यः	द्वेषरहितः	द्वेषरहित
सखा	सखा	मित्र

सुशे॑वः	सुखकरः	सुखकारी
अद्व॑याः	द्वयरहितः	द्वय से रहित

संस्कृतार्थः ।

हे अन्न ! मंलगरूपः (त्वम्) मंगलरूपाभिः रक्षाभिःअस्मान् प्रतिआगच्छ, स्वास्थ्यस्यभावयिता द्वेषरहितः सुखकरः अद्वयः सखा (च भव) ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

हे अन्न ! कल्याणरूप (तू) कल्याण युक्त रक्षाओं के साथ हमारी ओर आ, (और) स्त्रास्थ्य के करने वाला द्वेष रहित सुख के करने वाला द्वय से रहित मित्र (हो) ॥ ३ ॥

अन्नंदेवता, गायत्रीछन्दः।८।८।८।

तव॒त्येपि॑तो॒रसा॒ रजां॒स्यनु॒वि-
ष्ठि॑ताः। दि॒विवाता॑इवश्रिता॒ः।४।

तव॑	तव	तेरे
त्ये	ते	वे
पि॒तो॒	हे अन्न !	हे अन्न
रसा॑:	रसाः	रस
रजां॑सि	लोकान्	लोकों को
अनु॑	अनुसृत्य	की न्याईं
विऽस्थि॑ताः	विस्तृताः	फैले हुए हैं
दि॒वि	दिवि	द्यौ में
वाता॑ःऽइव	वायवइव	वायुओं की न्याईं
श्रि॒ताः	श्रिताः	ठैरे हुए

संस्कृतार्थः ।

हे अन्न ! ते तव रसाः लोकाननु विस्तृताः वायव इव दिवि (चाऽपि) श्रिताः (सन्ति) ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे अन्न ! वे तेरे रस लोकों की न्याईं फैले हुए हैं (और) वायु की न्याईं द्यौ में (भी) ठैरे हुए (हैं) ॥ ४ ॥

अन्नंदेवता, अनुष्टुप् छन्दः । ८।८।८।८

तवत्येपितोददतस्तवस्वादिष्ठ
तेपितो । प्रस्वाद्मानोरसानां तुवि-
ग्रीवाइवेरते । ५ ।

तव	तव	तेरे
त्ये	ते	वे
पितो॰	हे अन्न	हे अन्न
ददतः	दातारः (ऋ०।१।७५।५)	देने वाले
तव	तव	तेरे

स्वादिष्ठ	हे स्वादुतम !	हे अत्यन्त स्वाद वाले
ते	ते	वे
पितो॰	हे पालक !	हे पालने वाले
प्र	प्र +	–
स्वाद्मानः	स्वादयितारः	खाने वाले
रसानाम्	रसानाम्	रसों के
तुविग्रीवाः ऽइव	स्थूलग्रीवाइव	मोटी ग्रीवा वालों की न्याईं
ईरते	प्र + ईरते चेष्टयन्ति	चेष्टा करते हैं

संस्कृतार्थः ।

हे पालक ! स्वादिष्ठ अन्न ! तवदातारस्ते (तव) रसानां स्वादयितारः (च) ते (मनुष्याः) स्थूलग्रीवाः (बलीवर्दाः) इव चेष्टयन्ति ॥ ५ ॥

ऋ०मं०१सू०१८७मं०५ (५०८४)

भावार्थः ।

हे पालन करने वाले, अत्यन्त स्वादु अन्न ! तेरे देने वाले वे (लोग) (और) तेरे रसों के खाने वाले वे (लोग) मोटी ग्रीवा वाले (बैलों) की न्याईं चेष्टा करनेवाले होते हैं ॥ ५ ॥

अन्नं देवता, विराडनुष्टुप्छन्दः ।७।७।८।८।

त्वेपि॑तोम॒हानां॑दे॒वानां॒मनो॑
हि॒तम् । अका॑रि॒चारु॑के॒तुना॒ तवा
हि॒मव॑सावधीत् । ६ ।

त्वे०	त्वयि	तुझ में
पि॒तो॒०	हे अन्न	हे अन्न
म॒हाना॑म्	महताम्	महानों का
दे॒वाना॑म्	देवानाम्	देवताओं का

मन॑ः	मनः	मन
हि॒तम्	स्थापितमस्ति	स्थापित है
अका॑रि	अकारि	किया गया
चारु॑	शोभनम्	सुन्दर
के॒तुना॑	ध्वजेन	ध्वजा से
तव॑	तव	तेरी
अहि॑म्	वृत्रम्	वृत्र को
अव॑सा	रक्षणेन	रक्षा से
अ॒व॒धी॒त्	हतवान्	मारा

संस्कृतार्थः ।

हे अन्न! महतां देवानां मनः त्वयि स्थापितम् (अस्ति) (तव) ध्वजेन शोभनम् (कर्म) कृतम्, तव रक्षणेन (इन्द्रः) वृत्रं हतवान् ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

हे अन्न! महान देवताओं का मन तुझ में स्थापित (है) तेरी ध्वजा से सुन्दर कर्म किये गए हैं (तेरी) रक्षा से (इन्द्र ने) वृत्र को मारा है ॥ ६ ॥

अन्नं देवता. अनुष्टुप्छन्दः ।८।८।८।८।

यददोपितोऽजगन् विवस्वपर्वतानाम् । अत्राचिन्नोमधोपितोऽरं भक्षायगम्याः । ७ ।

यत्	यत्	जो
अदः	अदः	वह
पितो०	हे अन्न	हे अन्न
अजगन्	प्राप्तवान्	प्राप्त हुआ है

वि॒वस्व॑	धनम् (सा०भ०)	धन
पर्व॑तानाम्	मेघानाम्	मेघों का
अत्र॑	तत्र	वहां
चि॒त्	(पूरणः)	–
न॒ः	अस्मान्	हम को
म॒धो॒	हे मधुर !	हे मीठे
पि॒तो॒	हे अन्न	हे अन्न
अर॑म्	पर्य्याप्तम्	पर्य्याप्त (काफी)
भ॒क्षाय॑	भक्षणाय	खाने के लिये
ग॒म्या॒ः	प्राप्नुहि	तू प्राप्त हो

संस्कृतार्थः ।

हे अन्न ! यत् मेघानाम् अदोधनं प्राप्तवान् हे मधुर अन्न ! पर्य्याप्त भक्षणाय अस्मान् अत्र-प्राप्नुहि ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

हे अन्न ! जो मेघों का वह (जल रूप) धन प्राप्त हुआ है इसलिये, हे मीठे अन्न ! पर्य्याप्त खाने के लिये हम को यहां पर प्राप्त हो ॥ ७ ॥

अन्नंदेवता, निचृद्गायत्रीछन्दः ७।८।८।

यदपामोषधीनां परिंशमारिशामहे । वातापेपीवइद्भव ॥ ८ ॥

यत्	यत्	जो
अपाम्	अपाम्	जलों के
ओषधीनाम्	ओषधीनाम्	ओषधियों के
परिंशम्	स्वल्पंभागम्	थोड़े भाग को
आऽरिशाम	भक्षयामः	हम खाते हैं

वाता॑पे	हे अन्न	हे अन्न
पीव॑ः	प्रवृद्धः	बढ़ा हुआ
इत्	(शरणः)	–
भ॒व॒	भव	तू हो

संस्कृतार्थः ।

हे अन्न ! यत् (वयम्) अपामोषधीनाम् (च) स्वल्पंभागं भक्षयामः, हे अन्न ! (त्वम्) वृद्धोभव ॥ ८

भाषार्थः ।

हे अन्न ! जो (हम) जलों के (और) ओषधियों के थोड़े भाग को खाते हैं, हे अन्न तू बढ़ ॥ ८ ॥

सोमोदेवता, गायत्रीछन्दः ।८।८।८।

यत्ते॑सो॒मगवा॑शि॒रो यवा॑शि॒रो

भजा॑महे । वाता॑पे॒पीवइद्भ॑व ॥ ९ ॥

यत्	यत्	जो

ते॒	तव	तेरे
सो॒म॒	हे सोम	हे सोम
गोऽआ॑शिरः	क्षीरेणमिश्रितम्	दूधसे मिश्रित को
यव॑ऽआशिरः	यवाग्वामिश्रितम्	यवागुसेमिश्रित को
भजा॑महे	सेवामहे	हम सेवन करतेहैं
वाता॑पे	हे अन्न	हे अन्न
पीव॑ः	प्रवृद्धः	बढ़ा हुआ
इत्	(पूरण)	–
भ॒व॒	भव	तू हो

संस्कृतार्थः।

हे सोम! यत् (वयम्) तव क्षीरेणमिश्रितं यवाग्वामिश्रितम् (चाऽन्नम्) सेवामहे, हे अन्न! (अतः,) त्वं वृद्धो भव ॥ ९ ॥

भाषार्थः।

हे सोम जो हम तेरे दूध से मिले हुए (और) यवागू से मिले हुए (अन्न) को सेवन करते हैं, (इसलिये) हे अन्न! तू बढ़ ॥ ९ ॥

ओषधिर्देवता, गायत्रीछन्दः ।८।८।८।

क॒र॒म्भओ॑षधेभ॒व पीवो॑हृ॒क्कउ॑दार॒
थिः। वाता॑पे॒पीव॒इद्भ॑व ॥ १० ॥

क॒र॒म्भः	करम्भरूपः	करंभरूप
ओ॒ष॒धे॒	हे ओषधे	हे ओषधि
भ॒व॒	भव	तू हो
पीव॑ः	पुष्टिकारकः	पुष्टि कारक
हृ॒क्कः	हृद्यः	हृदय के अनुकूल
उ॒दा॒रथिः	उद्दीपयिता	उद्दीपन करनेवाला

वातापे	हे अन्न !	हे अन्न
पीव:	वृद्धः	बढ़ा हुआ
इत	(पूरणः)	–
भव	भव	तू हो

संस्कृतार्थः ।

हे ओषधे ! करम्भरूपः (त्वम्) पुष्टिकारकः हृद्यः उद्दीपयिता (च) भव, हे अन्न ! त्वंवृद्धो भव ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

हे ओषधि ! करम्भ रूप (तुम) पुष्टि कारक हृदय के अनुकूल (और) उद्दीपन करने वाले बनो, हे अन्न तू बढ़ ॥ १० ॥

दही के साथ मिले हुए जो के सत्तू को करंभ कहते हैं ।

अन्नं देवता, स्वराडनुष्टुप्छन्दः।२।३।८।८।

तंत्वावयंपितोवचोभि र्गावोन

ह॒व्यासुषू॑दिम । दे॒वेभ्य॑स्त्वासध॒-
मा॑दम॒स्मभ्यं॑त्वासध॒माद॑म् ॥ ११ ॥

तम्	तस्मात् (पंचम्यर्थे द्वितीया)	उससे
त्वा॒	त्वत् (,,)	तुझ से
व॒यम्	वयम्	हमने
पि॒तो॒ ०	हे अन्न !	हे अन्न
वचः॑ऽभिः	वचोभिः	बचनों से
गावः॑	गावः	गौएं
न	इव	जैसे
ह॒व्या	हव्यानि	हवियों को
सु॒सू॒दि॒म॒	क्षारितवन्तः स्मः	निकाला है

दे॒वेभ्य॑ः	देवेभ्यः	देवताओं के लिये
त्वा॒	त्वाम्	तुझको
स॒ध॒माद॑म्	सहमादयितारम्	साथ मोद करने वाले को
अ॒स्मभ्य॑म्	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
त्वा॒	त्वाम्	तुझ को
स॒ध॒माद॑म्	सहमादयितारम्	साथ मोद करने वाले को

संस्कृतार्थः ।

हे अन्न ! वयं तस्मात् त्वत् (स्तुति) वचनैः गवेभ्य इव हव्यानि क्षारितवन्तः स्मः (यःत्वम्) देवेभ्यः सहमादयिता अस्मभ्यं सहमादयिता (च असि) ॥ ११

भाषार्थः ।

हे अन्न ! हमने उस तुझ से (स्तुति के) बचनों द्वारा हवियों को निकाला है जैसे गौओं से, (जो तू) देवताओं के साथ मोद करने वाला (और) हमारे साथ मोद करने वाला (है) ॥ ११ ॥

ऋ०मं०१ सू०१८८।

अग्निर्देवता, अगस्त्यऋषिः।

विनियोगोलैङ्गिकः।

सूक्त का भावार्थ।

हे सहस्रों के जेता अग्नि देव! आप प्रदीप्त किये जाकर देवताओं के साथ राज्य करते हैं, बुद्धिमान आप देव दूत बन कर हवियों को ले जाओ ॥ १ ॥ नियम पर चलने वाले मनुष्य के लिये यज्ञ मिठास से युक्त होता है, और शरीरों के रक्षक अग्नि सहस्रों को धारण करते हैं ॥ २ ॥ हे अग्नि! आप बुलाए जाकर और स्तुति किये जाकर यज्ञ के भागी देवताओं को हमारे लिये लाओ, आप सहस्रों के देने वाले हैं ॥३॥ हे आदित्यो! ऋत्विजों ने हजार वीरों के बैठने के योग्य बर्हि को बिछाया है जिस पर आप बिराजते हैं ॥ ४ ॥ सब पर शासन करने वाले, पूरी तरह शासन करने वाले, बलवान शक्तिमान बहुत अत्यन्त बहुत जो यज्ञ के द्वार हैं उन्होंने यजमान के लिये घृत को बरसाया है ॥ ५ ॥ सुन्दर आभूषणों वाली और सुन्दर रूप वाली दिन और रात अधिक शोभा के साथ विराजती हैं वे यहां पर बैठें ॥ ६ ॥ प्रियबचन वाले, मुख्य, बुद्धिमान दैव्य होता हमारे इस यज्ञ को यजन करें ॥ ७ ॥ भारती, इडा और सरस्वती जिन सब आप को मैं पास से स्तुति करताहूं, वे आप हम को यश के लिये प्रेरण करें ॥ ८ ॥ समर्थ त्वष्टा ने सचमुच रूपों को और सब पशुओं का प्रकट किया है, हे त्वष्टा! हमारे लिये यज्ञ द्वारा उनकी वृद्धि को सम्पादन करो ॥ ९ ॥ हे वनस्पति! आप अपनी शक्ति से देवताओं के लिये अन्न को उत्पन्न करो, अग्नि देव हवियों को स्वादु

बनावें ॥ १० ॥ देवताओं के आगे चलने वाले अग्नि देव के लिये स्तोत्र गाया जाता है, वह स्वाहा करने पर चमकते हैं ॥ ११ ॥

समिद्धोऽग्निर्देवता, गायत्रीछन्दः ।८।८।८।

समिद्धोअद्यराजसि देवोदेवैः
सहस्रजित् । दूतो हव्या कविर्वह ॥१॥

सम्ऽइद्धः	समिद्धः	प्रज्वलित
अद्य	अद्य	आज
राजसि	ईशिषे	राज्य करते हो
देवः	देवः	देवता
देवैः	देवैः (सह)	देवताओं के साथ
सहस्रऽजित्	हे सहस्रजेतः !	हे हजारों के जीतने वाले
दूतः	दूतः	दूत

हव्या	हव्यानि	हवियों को
कविः	मेधावी	बुद्धिमान
वह	नय	ले जाओ

संस्कृतार्थः ।

हे सहस्रजेतः! (अग्ने!) देवः (त्वम्) समिद्धः (सन्) देवैः सह अद्य ईशिषे, मेधावी दूतः (त्वम्) हव्यानि नय ॥ १ ॥

भावार्थः ।

हे सहस्रों के जीतने वाले! (अग्नि) देव (आप) प्रज्वलित (होकर) देवताओं के साथ आज राज करते हो, बुद्धिमान दूत (आप) हवियों को ले जाओ! ॥ १ ॥

यह आप्री सूक्त है देखो पृ० २७२, २७३।

तनूनपादग्निर्देवता, गायत्रीछन्दः ।८।८।८।

तनूनपादृतं यते मध्वा यज्ञः समज्यते। दधत्सहस्रिणीरिषः ॥ २ ॥

ऋ०मं०१ सू०१८८मं०२ (५०९८)

तनूऽनपात्	शरीराणांरक्षकः (ऋ०१।१३।२)	शरीरों का रक्षक
ऋतम्	ऋतम्	नियम को
यते	गच्छते	चलते हुए के लिये
मध्वा	माधुर्य्येण	मिठास से
यज्ञः	यज्ञः (विभक्ते; सुः)	यज्ञ
सम्	सम्+	–
अज्यते	सम् + अज्यते, संयुज्यते	संयुक्त होता है
दधत्	धारयन्	धारण करता हुआ
सहस्रिणीः	सहस्राणि	हजारों को
इषः	रसानि	रसों को

संस्कृतार्थः ।

ऋतं गच्छते मनुष्याय यज्ञः, माधुर्य्येण संयुज्यते तनूनां रक्षकः (अग्निश्च) सहस्राणि रसानि धारयन् (विद्यते) ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

ऋत पर चलने वाले मनुष्य के लिये यज्ञ मिठास से युक्त होता है और शरीरों के रक्षक (अग्नि) हजारों रसों को धारण करते हैं ॥ २ ॥

तनूनपात के लिये देखो पृ० २७५ ।

इळोऽग्निर्देवता गायत्रीछन्दः ।८।८।८

आजुह्वानोनईड्योदेवाँआव
क्षियज्ञियान्। अग्नेसहस्रसाअसि॥३

आऽजुह्वानः	आहूयमानः	बुलाया जाकर
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिए
ईड्यः	स्तुत्यः	स्तुति के योग्य
देवान्	देवान्	देवताओं को
आ	आ+	–
वक्षि	आ+वक्षि, आवह	लाओ

यज्ञियान्	यज्ञभागिनः	यज्ञके भागियों को
अग्ने	हे अग्ने	हे अग्नि !
सहस्रऽसाः	सहस्रस्यदाता	हजारों के देने वाला
असि	असि	तू है

संस्कृतार्थः।

हे अग्ने ! (त्वम्) हूयमानःस्तुत्यः च (सन्) अस्मभ्यं यज्ञभागिनोदेवानावह (त्वम्) सहस्रस्य दाताऽसि ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

हे अग्नि ! (आप) बुलाए जाकर और स्तुति किये जाकर हमारे लिये यज्ञ के भागी देवताओं को लाओ (आप) सहस्र के देने वाले हैं ॥ ३ ॥

ईडय अग्नि के लिये देखो पृ० २७८।

वर्हिरग्निर्देवता, गायत्रीछन्दः ।८।८।

प्राचीनंबर्हिरोजसा सहस्रवीरम
स्तृणन्। यत्रादित्याविराजथ ॥४॥

प्राचीनम्	प्रागग्रम्	पूर्व की ओर अग्रवाली को
बर्हिः	बर्हिः	कुशा को
ओजसा	चातुर्येण (आ०को०)	चतुराई से
सहस्रऽवीरम्	सहस्रवीर योग्यम्	हजारों वीरों के योग्य को
अस्तृणन्	आस्तृतवन्तः	बिछाया है
यत्र	यत्र	जहां
आदित्याः	हे आदित्याः !	हे आदित्यो !
विऽराजथ	विराजथ	आप विराजते हो

संस्कृतार्थः ।

हे आदित्याः ! (ऋत्विजः) सहस्रवीरोपेतंबर्हिः चातुर्येण आस्तृतवन्तः यत्र (यूयम्) विराजथ ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे आदित्यो ! (ऋत्विजों ने) हजार वीरों के

योग्य बर्हि को चतुराई से बिछाया है, जिस पर आप बिराजते हैं ॥ ४ ॥

बर्हि के लिये देखो पृ० २८० ॥

दुरोऽग्निर्देवता, गायत्री छन्दः ।८।८।८

वि॒राट् स॒म्राड्वि॒भ्वीः प्र॒भ्वीर्ब॒ह्वीश्च॒-
भू॑यसीश्च॒ याः । दुरो घृ॒ता॑न्य॑क्षरन् ॥५॥

वि॒ऽराट्	ये विश्वं शासन्ति (विभक्तेःलुः)	सब पर शासन करने वाले
स॒म्ऽराट्	ये सम्यग् शासन्ति	पूरी तरह शासन करने वाले
वि॒ऽभ्वीः	बलवन्ति (आ०को०)	बल वाले
प्र॒ऽभ्वीः	शक्तिमन्ति (आ०को०)	शक्ति वाले
ब॒ह्वीः	बहूनि	बहुत
च॒	च	और

भूय॑सीः	अतिप्रभूतानि	अत्यन्त बहुत
च॒	(पूरणः)	–
याः	यानि	जो
दुरः॑	(यज्ञ-)द्वाराणि	(यज्ञके)द्वार
घृ॒तानि॑	घृतानि	घृत को
अ॒क्ष॒र॒न्	क्षरितवन्तः	बरसाया है

संस्कृतार्थः ।

विश्वंशासन्ति सम्यग्शासन्ति बलवन्ति शक्तिमन्ति बहूनि अतिप्रभूतानि च यानि (यज्ञ-)द्वाराणि (सन्ति तानि) घृतानि क्षरितवन्त्यासन् ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

सब पर शासन करने वाले, पूरी तरह शासन करने वाले, बलवान शक्तिमान, बहुत और अत्यन्त बहुत जो (यज्ञ के) द्वार (हैं उन्होंने) घृत को बरसाया है ॥ ५ ॥

द्वार के लिये देखो पृ० २८२ ।

उषासानक्तोऽग्निर्देवता, गायत्रीछन्दः ।८।८।८।

सुरुक्मे हि सुपेशसाऽधि श्रियावि-
राजतः। उषासावेह सीदताम् ॥ ६ ॥

सुऽरुक्मे	शोभनाभरणे	सुन्दर भूषणों वाला
हि	खलु	सचमुच
सुऽपेशसा	शोभनरूपे	सुन्दर रूप वालीं
अधि	अधिकम्	अधिक
श्रिया	शोभया	शोभा के साथ
विऽराजतः	विराजतः	विराजते हैं
उषसौ	उषासानक्तौ	दिन और रात
आ	आ+	–

इह	इह	यहां
सीदताम्	आ + सीदताम् उपविशताम्	बैठें

संस्कृतार्थः।

शोभनाभरणे शोभनरूपे (च) उषासानक्ते शोभाधिक्येन विराजतः खलु, (ते) इह उपविशताम् ॥ ६ ॥

भाषार्थः।

सुन्दर आभूषणों वाली सुन्दर रूप वालीं दिन और रात सचमुच अधिक शोभा के साथ विराजती हैं, वे यहां बैठें ॥ ६ ॥

नक्तोषासा के लिये देखो पृ० २८४।

दैव्यौहोताराावग्निर्देवता, गायत्रीछन्दः।८८।

प्रथमाहिसुवाचसा होतारा-

दैव्याकवी।यज्ञंनोयक्षतामिमम् ।७।

प्रथमा	मुख्यौ	मुख्य
हि	खलु	सचमुच

ऋ०मं०१ सू०१८८ मं०७ (५१०६)

सुऽवाचसा	प्रियवचनौ	प्यारे बचनों वाले
होतारा	होतारौ	होता
दैव्या	दैव्यौ	दैव्य
कवी०	मेधाविनौ	बुद्धिमान
यज्ञम्	यज्ञम्	यज्ञ को
नः	अस्माकम्	हमारे
यक्षताम्	यजताम्	जयन करें
इमम्	इमम्	इस को

संस्कृतार्थः ।

प्रियवचनौ मुख्यौ मेधाविनौ दैव्यौ होतारौ अस्माकमिमं यज्ञं यजतांखलु ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

प्रिय वचन वाले, मुख्य, बुद्धिमान दैव्य होता हमारे इस यज्ञ को यजन करें ॥ ७ ॥

दैव्य होताओं के लिये देखो पृ०२८६

त्रिस्रोदेव्योऽग्निर्देवता, निचृद्गायत्रीछन्दः।८।८।७

भारतीळेसरस्वति यावःसर्वा
उपह्वये।तानश्चोदयतश्रिये ॥ ८ ॥

भारति	हे भारति !	हे भारती !
इळे	हे इळे !	हे इळा !
सरस्वति	हेसरस्वती !	हे सरस्वती !
याः	याः	जिनको
वः	युष्मान्	तुमको
सर्वाः	सर्वाः	सबको
उपऽह्वये	उपेत्यस्तौमि	मैं पास आकर स्तुति करता हूं
ताः	ताः	वे
नः	अस्मान्	हमको

चोदयत	प्रेरयत	प्रेरण करो
श्रिये	यशोऽर्थम्	यशके लिये

संस्कृतार्थः ।

हे भारति ! हे इळे ! हे सरस्वति ! याःसर्वा-युष्मानुपेत्य (अहम्) स्तौमि, ताः (यूयम्) अस्मान् यशोऽर्थं प्रेरयत ॥ ८ ॥

भाषार्थः ।

हे भारती, इडा और सरस्वी जिन सब आप को मैं समीपसे स्तुति करता हूं वे (आप) हमको यश के लिये प्रेरण करें ॥ ८ ॥

इडा और सरस्वती के लिये देखो पृ० २८८, भारती को मंत्र १। १३। ९ में नहीं पढ़ा है ॥

त्वष्टाऽग्निर्देवता, गायत्रीछन्दः ।८।८।८

त्वष्टारूपाणिहिप्रभुः पशून्
विश्वान्त्समानजे । तेषांनःस्फाति
मायज ॥ ९ ॥

त्वष्टा॑	त्वष्टा	त्वष्टा
रू॒पाणि॑	रूपाणि	रूपों को
हि	खलु	सचमुच
प्र॒ऽभुः	समर्थः	समर्थ
प॒शून्	पशून्	पशुओं को
विश्वा॑न्	सर्वान्	सब को
स॒म्ऽआ॒न॒जे	व्यक्तीकृतवान्	प्रकट किया है
तेषा॑म्	तेषाम्	उनकी
न॒ः	अस्मभ्यम्	हमारेलिये
स्फा॒तिम्	वृद्धिम्	वृद्धिको
आ	आ+	-

य॒ज॒	आ+यज, यज्ञेन सम्पादय	यज्ञ द्वारा संपादन कर

संस्कृतार्थः ।

समर्थः त्वष्टा रूपाणि सर्वान् पशून् (च) खलु व्यक्तीकृतवान् (हेत्वष्टः !) अस्मभ्यं तेषां वृद्धिः यज्ञेन सम्पादय ॥ ९ ॥

भावार्थः ।

समर्थ त्वष्टाने सच मुच रूपों को और सब पशुओं को प्रकट किया है (हे त्वष्टा !) हमारे लिये उनकी वृद्धि को यज्ञ द्वारा सम्पादन करो ॥ ९ ॥

त्वष्टा के लिये देखो पृ० २९० ॥

वनस्पतिरग्निदेवता, गायत्रीछन्दः ।८।८।८

उप॒त्मन्या॑वनस्पते॒ पाथो॑दे॒वेभ्यः॑सृज । अ॒ग्निर्ह॒व्यानि॑सिष्वदत्
॥ १० ॥

उ॑प	उप+	–
त्मन्या॑	आत्म-शक्त्या	अपनी शक्ति से

(५१११) ऋ०मं०१ सू०१८८मं०१०

व॒न॒स्प॒ते॒	हे वनस्पते !	हे वनस्पति !
पा॑थः	अन्नम्	अन्न को
दे॒वेभ्यः॑	देवेभ्यः	देवताओं के लिये
सृ॒ज॒	उप+सृज, उत्पादय	उत्पन्न करो
अ॒ग्निः	अग्निः	अग्नि
ह॒व्या॑नि	हव्यानि	हवियों को
सि॒स्व॒द॒त्	स्वदयतु	स्वाद वाला बनावे

संस्कृतार्थः ।

हे वनस्पते ! (त्वम्) आत्मशक्त्या देवेभ्योऽन्नमुत्पादय, अग्निर्हव्यानि स्वदयतु ॥ १० ॥

भावार्थः ।

हे वनस्पते ! (आप) अपनी शक्ति से देवताओं के लिये अन्न को उत्पन्न करो, अग्नि हवियों को स्वादु करें ॥ १० ॥

वनस्पति के लिये देखो प्र० २९१ ।

स्वाहाकृतिरग्निर्देवता, गायत्रीछन्दः ।८।८।८

पुरोगा अग्निर्देवानां गायत्रेण
समज्यते। स्वाहाकृतीषु रोचते ॥११॥

पुरःऽगाः	पुरोगामी	अगवैया
अग्निः	अग्निः	अग्नि
देवानाम्	देवानाम्	देवाताओं का
गायत्रेण	स्तोत्रेण	स्तोत्र से
सम्	सम्+	–
अज्यते	सम् + अज्यते, संयोज्यते	संयुक्त किया जाता है
स्वाहाऽकृतीषु	स्वाहाकारेषु (सत्सु)	स्वाहा शब्द के कहने पर

रोचते	दीप्यते	चमकता है

संस्कृतार्थः ।

देवानां पुरोगामी अग्निर्गायत्रीछन्दसा संयोज्यते, (यः) स्वाहाकारेषु (सत्सु) दीप्यते ॥ ११ ॥

भाषार्थः ।

देवताओं के अगवैया अग्नि स्तोत्र से संयुक्त किये जाते हैं, (वह) स्वाहा करने पर चमकते हैं॥११॥

स्वाहा के लिये देखो पृ० २९३।

ऋ० मं० १ सू० १८९ ।

अग्निर्देवता, अगस्त्य ऋषिः ।

विनियोगः—

१-८। एतत् सूक्तं प्रातरनुवाकाश्विनशस्त्रयो स्त्रैष्टुभे छन्दसि विनियुक्तम् (आ० ४। १५। १)।

१-४। आद्याश्चतस्रः श्रावणीकर्मणि विनियुक्ताः (आ०गृ०२।१।४)।

१-२। आद्ये द्वे आग्नेयपशौ वपापुरोडाशयोरनुवाक्ये (आ०३।७।५)।

१। आद्या प्रायणीयेष्टौ आग्नेयस्यानुवाक्या (आ० ४। ३। २)।

१। एषैवोदयनीये याज्या च (आ० ४। ३।२)।

२-४। द्वितीय चतुर्थ्यौ आयुष्कामेष्ट्यां संयाज्ये (आ०२।१०।४)।

४। चतुर्थी आग्नेयपशौ हविषोऽनुवाक्या च (आ०३।७।५)।

५। अच्युताय भौमायैककपाल पुरोडाशहोमे आशयमभिजुहुयात् (आ० गृ० २। १। ६)।

सूक्त का भावार्थ।

हे देव अग्नि! सब नियमों को जानते हुए आप हम को सुख सम्पत्ति के लिये सुमार्ग से लेजाओ और कुटिल पाप को हम से दूर करो, हम आप के तांई बहुत २ नमस्कार करते हैं ॥ १ ॥ हे अग्नि! आप स्तुति किये जाकर कल्याणों द्वारा हमको सब दुःखों के पार करके पालन करो, आप हमारे लिये चौड़ी और बहुत विस्तार वाली पुरी बनो और पुत्र और सन्तान के लिये रोगों के शमन करने वाले और भयों के दूर करने वाले हों ॥ २ ॥ हे अग्नि! आप हम से रोगों को अलग करो, अग्नि की पूजा से रहित प्रजाएं रोगी होने योग्य हैं, हे पूज्य देव! सब देवताओं के साथ पृथिवी को हमारे लिये सुखदायक बनाओ

॥ ३ ॥ हे अग्नि ! अपने प्यारे घर में प्रदीप्त हो कर आप हमको निरन्तर रक्षाओं द्वारा पालन करो, हे अत्यन्त जवान ! हे बल वाले ! आप के स्तोता को न आज और न ओर दिन भय प्राप्त हो ॥ ४ ॥ हे बलवान अग्नि ! आप हम को पाप के ताईं और दुःख देने वाले शत्रु के ताईं मत छोड़ो, न हम को दांत से काटने वाले सर्पादि के ताईं और न विना दांत वाले हिंसक के ताईं सौंपो ॥ ५ ॥ हे नियम के लिये उत्पन्न ! अग्निदेव ! आप जैसा ही स्तुति किया जाकर, सब हिंसकों से और निन्दा करने वालों से हमारे-लिये शरण देने योग्य है, सच मुच आप कुटिलता करने वालों के बोरने वाले हैं ॥ ६ ॥ हे अग्नि ! आप देने वाले और न देने वाले मनुष्य में विवेचना करते हुए प्रातः काल में जाते हैं, हे पूजनीय ! आप दिन के छिपने पर मनुष्य के लिये वशीभूत हों और अपने आपको भक्तों से कोट की न्याईं सिंगारने हैं ॥ ७ ॥ हम मान के पुत्रों ने इस जयशील अग्नि के ताईं स्तुति के वचन कहे हैं, हम ऋषियों के साथ सहस्रों धनों को भोगें और अन्न बल और शीघ्र दान के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ८ ॥

अग्निर्देवता, त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११।

अग्नेनयसुपथाराये अस्मान्
विश्वानिदेववयुनानिविद्वान् । युयो
ध्य१स्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठांते
नम उक्तिंविधेम ॥ १ ॥

ऋ०मं०१सू०१८९ मं०१ (५१११)

अग्ने	हे अग्ने !	हे अग्नि !
नय	नय	ले चल
सुऽपथा	सुमार्गेण	सुमार्ग से
राये	सुखसंपत्तये	सुख संपत्ति के लिये
अस्मान्	अस्मान्	हम को
विश्वानि	सर्वान्	सब को
देव	हे देव !	हे देव
वयुनानि	नियमान्	नियमों को
विद्वान्	जानन्	जानता हुआ
युयोधि	पृथक् कुरु	अलग करो
अस्मत्	अस्मत्तः (विभक्तेर्लुक्)	हम से

जुहुराणम्	कुटिलम्	कुटिल को
एनः	पापम्	पाप को
भूयिष्ठाम्	अतिप्रभूतम्	अत्यन्त बहुत को
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
नमःऽउक्तिम्	नमस्कारोच्चारणम्	नमस्कार के उच्चारण को
विधेम	कुर्मः	हम करते हैं

संस्कृतार्थः ।

हे देव ! अग्ने ! सर्वान् नियमान् जानन् (त्वम्) अस्मान् सुखसम्पत्त्यर्थं शोभनमार्गेण नय, कुटिलं पाप मस्मत्तः पृथक् कुरु, (वयम्) तुभ्यमतिप्रभूतं नमस्कारोच्चारणं कुर्मः ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

हे देव अग्नि ! सब नियमों को जानते हुए आप हम को सुख सम्पत्ति के लिये सुमार्ग से ले जाओ, कुटिल पाप को हम से दूर करो, हम आपके लिये अत्यन्त बहुत नमस्कार उच्चारण करते हैं, ॥ १ ॥

ऋ०मं०१ सू०१८९ मं०२ (५११८)

अग्निर्देवता, त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११।

अग्नेत्वंपारयानव्योअस्मा-
न्त्स्वस्तिभिरतिदुर्गाणिविश्वा ।
पूश्चपृथ्वीबहुलानउर्वी भवातोका
यतनयायशंयोः ॥ २ ॥

अग्ने	हे अग्ने !	हे अग्नि
त्वम्	त्वम्	तू
पारय	पालय	पालन कर
नव्यः	स्तुत्यः	स्तुति के योग्य
अस्मान्	अस्मान्	हम को
स्वस्तिऽभिः	कल्याणैः	कल्याणों द्वारा

अति॑	अतिक्रमय्य	उलंघवा कर
दु॒ःऽगानि॑	दुःखानि	दुःखों को
विश्वा॑	विश्वानि	सब को
पूः	पुरी	पुरी
च॒	च	और
पृ॒थ्वी	पृथ्वी	चौड़ी
ब॒हु॒ला	महती	बड़ी
न॒ः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
उ॒र्वी	विस्तीर्णा	विस्तार वाली
भव॑	भव,	तू हो
तो॒काय॑	पुत्राय	पुत्र के लिये
तन॑याय	सन्तानाय	सन्तान के लिये

शम्	(रोगाणाम्) शमनम्	(रोगों का) शमन रूप
योः	(भयानाम्) पृथक्करणम्	(भयों के) अलग करने वाला

संस्कृतार्थः।

हे अग्ने ! स्तुत्यस्त्वं कल्याणैः सर्वाणि दुखान्यतिक्रमय्य अस्मान् पालय, (त्वम्) अस्मभ्यं पृथ्वी महती विस्तीर्णा च पुरीभव, पुत्राय सन्तानाय (च) रोगाणां शमनरूपं भयानाम् (च) पृथक्ककरणंरूपं भव ॥ २ ॥

भाषार्थः।

हे अग्नि ! स्तुति क्रियेगए आप कल्याणों द्वारा हम को सब दुखों से लंघाकर पालन करें, आप हमारे लिये चौड़ी महान् विस्तार वाली पुरी बनें, और पुत्र और सन्तान के लिये रोगों के शमन रूप और भयों के दूर करने वाले हों ॥ २ ॥

अग्निर्देवता, त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११।

अग्नेत्वमस्मद्युयोध्यमीवा अनग्निचाअभ्यमन्तकृष्टीः। पुनरस्म

भ्यं॑ सुवि॒ताय॑ देव॒ क्षां॑ विश्वे॑भिर॒मृते॑-
भिर्यजत्र ॥ ३ ॥

अग्ने॑	हे अग्ने !	हे अग्नि !
त्वम्	त्वम्	तू
अ॒स्मत्	अस्मत्	हम से
यु॒यो॒धि	पृथक् कुरु	अलग कर
अमी॑वाः	रोगान्	रोगों को
अन॑ग्निऽत्राः	अग्नि रहिताः	अग्नि से रहित
अ॒भिऽ अम॑न्त	अभ्यमितुंयोग्याः (सा० भा०)	रोगी होने योग्य
कृ॒ष्टीः	प्रजाः	प्रजाएं
पुन॑ः	पुनः	फिर

अ॒स्मभ्य॑म्	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
सु॒वि॒ताय॑	सुखाय	सुख के लिये
दे॒व॒	हे देव !	हे देव !
द्याम्	पृथिवीम्	पृथिवी को
विश्वे॑भिः	सर्वैः	सब के साथ
अ॒मृते॑भिः	मरणरहितैः(देवैः)	देवताओं के साथ
य॒ज॒त्र॒	हे यष्टव्य !	हे पूज्य

संस्कृतार्थः।

हे अग्ने ! त्वमस्मद्रोगान् पृथक् कुरु, अग्नि (पूजा) रहिताः प्रजाः रोगैः प्रापयितुं योग्याः (सन्ति), हे यष्टव्य देव ! पुनः सर्वैर्मरणरहितैः देवैः सह पृथिवीमस्मभ्यं सुखाय (कुरु) ॥ ३ ॥

भाषार्थः।

हे अग्नि ! आप हम से रोगों को अलग करो, अग्नि की पूजासे रहित प्रजाएं रोगी होने योग्य (हैं)

हे पूज्य देव ! फिर सब देवताओं के साथ पृथिवी को हमारे ताईं सुख के लिये करो ॥ ३ ॥

अग्निर्देवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।३/१।३१।३।३१।

पाहिनोअग्नेपायुभिरजस्रैरुत
प्रियेसदनआशुशुक्वान् । मातेभयंज
रितारंयविष्ठ नूनंविदन्माऽपरंसह-
स्वः ॥ ४ ॥

पाहि	पाहि	रक्षा कर
नः	अस्मान्	हम को
अग्ने	हे अग्ने ।	हे अग्नि !
पायुऽभिः	रक्षणैः	रक्षाओं से
अजस्रैः	अनवरतैः	निरन्तरों से

ऋ०मं०१ सू०१८९ मं०४ (५१२४)

उ॒त	अपिच	और भी
प्रि॒ये	प्रिये	प्यारे में
सद॑ने	गृहे	घर में
आ	आ+	–
शु॒शु॒क्वान्	आ+शुशुक्वान् प्रदीप्तः (सन्)	प्रदीप्त होकर
मा	मा	मत
ते॒	तव	तेरे
भ॒यम्	भयम्	भय
ज॒रि॒ता॑रम्	स्तोतारम्	स्तोता को
य॒वि॒ष्ठ॒	हे युवतम !	हे अत्यन्त जवान !
नू॒नम्	इदानीम्	आज
वि॒द॒त्	प्राप्नोतु	प्राप्त हो

मा	मा	मत
अ॒प॒रम्	अन्यदिवसम्	और दिन
स॒ह॒स्व॒ः	हे बलवन् !	हे बलवान्

संस्कृतार्थः ।

हे अग्ने ! प्रियगृहे प्रदीप्त (त्वम्) अस्मान् अनवरतैः रक्षणैःपाहि, हे युवतम ! हे बलवन् ! तव स्तोतारम् इदानीम् अन्य दिवसे (च) भयं न प्राप्नोतु ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे अग्नि ! प्यारे घर में प्रदीप्त (आप) हम को निरन्तर रक्षाओं द्वारा पालन करो, हे अत्यन्त जवान, हे बल वाले ! आपके स्तोता को न आज (और) न और दिन भय प्राप्त हो ॥ ४ ॥

अग्निर्देवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

मानो॑अ॒ग्नेऽव॑सृजोअ॒घाया॑ वि॒-
ष्यवे॑रि॒पवे॑दु॒च्छुना॑यै । माद॒त्वते॒

ऋ०मं०१सू०१८९ मं०५ (५१२६)

दशतेमादतेनो मारीषतेसहसावन्

परादाः ।५।

मा	मा	मत
नः	अस्मान्	हम को
अग्ने	हे अग्ने !	हे अग्नि
अव	अव+	–
सृजः	अव+सृजः, त्यज	तू छोड़
अघाय	पापाय	पाप के ताईं
अविष्यवे	आक्रमणंकुर्वते	आक्रमण करने वाले के लिये
रिपवे	शत्रवे (लिङ्गव्यत्ययश्छन्दसः)	शत्रु के लिये
दुच्छुनायै	दुःखदायिने	दुःख देने वाले के लिये

मा	मा	मत
द॒त्वते॑	दन्तवते	दांतों वाले के लिये
दश॑ते	दशनवते	डसने वाले के लिये
मा	मा	मत
अ॒दते॑	दन्तहीनाय	दांतों से हीन के लिये
न॒ः	अस्मान्	हम को
मा	मा	मत
रिष॑ते	हिंसकाय	हिंसा करने वाले के लिये
स॒ह॒सा॒ऽव॒न्	हे बलवन् !	हे वलवान्
परा॑	परा+	–
दा॒ः	परा+दाः, समर्पय	सौंप

संस्कृतार्थः ।

हे बलवन् ! अग्ने ! (त्वम्) अस्मान् पापाय, आक्रमणं कुर्वते दुःखदायि शत्रवे (च) मा त्यज मा (च) अस्मान् दन्तवते दशनवते मा दन्त हीनाय, हिंसकाय (च) समर्पय ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे बल वाले अग्नि ! (आप) हमको पाप के ताईं (और) दुःख देने वाले शत्रु के ताईं मत छोड़ो, न हम को दांत वाले काटने वाले (सर्पादि) के ताईं (और) न बिना दान्त वाले हिंसक के ताईं सौंप ॥ ५ ॥

अग्निर्देवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।१ १।१ १।१ १।१ १।

विघत्वाववाँऋतजातयंसद्गृ-
णानोअग्नेतन्वे३वरूथम् । विश्वाद्
रिरिक्षोरुतवा निनित्सोरभिह्रुताम
सिहिदेवविष्पट ॥ ६ ॥

वि	वि+	–
घ	एव	ही
त्वाऽवान्	त्वत्सदृश्	तेरे जैसा
ऋतऽजात	हे ऋतायोत्पन्न!	हे ऋत के लिये उत्पन्न हुए २ हैं
यंसत्	वि + यंसत् दातुमर्हति	देने योग्य है
गृणानः	स्तुतः	स्तुति किया गया
अग्ने	हे अग्ने !	हे अग्नि
तन्वे	शरीराय	शरीर के लिये
वरूथम्	शरणम्	शरण को
विश्वात्	सर्वस्मात्	सब से
रिरिक्षोः	हिंसकात्	हिंसक से

उ॒त॑	उत +	-
वा॒	उत + वा	अथवा
नि॒नि॒त्सोः	निन्दकात्	निन्दक से
अ॒भि॒ऽह्रु॑ताम्	कौटिल्यंकुर्वताम्	कुटिलता करने वालों का
अ॑सि	असि	तू है
हि	खलु	सचमुच
दे॒व॒	हे देव !	हे देव !
वि॒ष्पट्	विदारकः (आ०को०)	चीरने वाला

संस्कृतार्थः।

हे ऋताचारपन्न ! देव ! अग्ने ! त्वत्सदृश् एव स्तेनः (सन्) सर्वस्माद् हिंसकाद् निन्दकाद्वा (अस्माकम्) शरीरार्थं (शरणं) दातुमर्हति, (त्वम्) खलु कौटिल्यंकुर्वतां विदारकोऽसि ॥ ६ ॥

भाषार्थः।

हे ऋत के लिये उत्पन्न! अग्नि देव! आप जैसा ही स्तुति किया जाकर सब हिंसकों से और निन्दा करने वालों से (हमारे) शरीर के लिये शरण देने योग्य है, सचमुच आप कुटिलता करने वालों के चीरने वाले हैं ॥ ६ ॥

अग्निर्देवता, त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११।

त्वंताँअ॑ग्नउ॒भया॒न्विवि॒द्वान
वेषि॑प्रपि॒त्वेमनु॑षोयजत्र । अ॒भि॒पि॒-
त्वेम॑नवे॒शास्यो॑भूर्मर्मृ॒जेन्य॑उ॒शिग्भि॒-
र्नाक्रः॥ ७ ॥

त्वम्	त्वम्	तू
तान्	तान्	उन को
अ॒ग्ने॒	हे अग्ने !	हे आग्न !

ऋ०मं०१सू०१८९मं०५ (५१३२)

उ॒भया॑न्	उभयविधान्	दोनों प्रकार वालों को
वि	विविच्य	विवेचना पूर्वक
वि॒द्वान्	जानन्	जानता हुआ
वेषि॑	गच्छसि	तू जाता है
प्र॒ऽपि॒त्वे	प्रातःकाले	प्रातः काल में
मनु॑षः	मनुष्यान्	मनुष्यों को
य॒ज॒त्र॒	हे यष्टव्य !	हे पूज्य !
अ॒भि॒ऽपि॒त्वे	दिनात्यये	दिन छिपने पर
मन॑वे	मनुष्यार्थम्	मनुष्यों के लिये
शास्य॑ः	वशवर्ती	वशीभूत
भू॒ः	भव	तू हो

मर्मृजेन्यः	प्रसाधितव्यः	सिंगारने योग्य
उशिक्ऽभिः	कामयमानैः	भक्तों से
न	इव	जैसे
अक्रः	प्राकारः	कोट

संस्कृतार्थः ।

हे अग्ने ! त्वम् उभयविधान् तान् मनुष्यान् विविच्य जानन् (सन्) प्रातःकाले गच्छसि हे यष्टव्य ! (त्वम्) दिनात्यये(सति) मनुष्यार्थं वशीभव कामयमानैः प्राकार इव प्रसाधितव्यः(च भव) ॥७॥

भाषार्थः ।

हे अग्नि ! आप उन दोनों तरह के मनुष्यों को विवेचना पूर्वक जानकर प्रातःकाल में जाते हैं, हे पूजनीय, आप दिनके छिपने पर मनुष्य के लिये वशीभूत हो और भक्तों से कोट की न्याईं सिंगार ने योग्य (हों) ॥ ७ ॥

उन दोनों तरह के मनुष्य अर्थात् देने वाला और न देने वाला।

अग्निर्देवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

अवो॑चामनि॒वच॑नान्यस्मि॒न् मान॑स्यसू॒नुःस॑हसा॒नेअ॒ग्नौ । व॒यंस॒हस्र॒मृषि॑भिःसनेम वि॒द्यामे॒षंवृ॒जनं॑जी॒रदा॑नुम् ॥ ८ ॥

अवो॑चाम	उक्तवन्तःस्मः	हमने कहा है
नि॒ऽवच॑नानि	स्तुतिवाक्यानि	स्तुति के वचनों को
अ॒स्मि॒न्	अस्मिन्	इस में
मान॑स्य	मानस्य	मान के
सू॒नुः	पुत्राः	पुत्र
स॒ह॒सा॒ने	जयशीले	जयशील में

अग्नौ	अग्नौ	अग्नि में
वयम्	वयम्	हम
सहस्रम्	सहस्रम्	हजार को
ऋषिऽभिः	ऋषिभिः	ऋषिओं के साथ
सनेम	सम्भजेमहि	भोगें
विद्याम	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इषम्	अन्नम्	अन्न को
वृजनम्	बलम्	बल को
जीरऽदानुम्	शीघ्रदानशीलताम्	शीघ्र दान के स्वभाव को

संस्कृतार्थः।

मानस्यपुत्राः (वयम्) अस्मिन् जयशीले अग्नौ स्तुतिवचनानि, उ[illegible] [illegible]ः,वयम् ऋषिभिः (सह)

१ स्रम् (धनम्) सभम्जेमहि, अन्नं बलं शीघ्र दान शीलताम् (च) प्राप्नुयाम ॥ ८ ॥

भाषार्थः ।

हम मान के पुत्रों ने इस जयशील अग्नि में स्तुति के वचन कहे हैं, हम ऋषियों के साथ सहस्रों (धनों) को भोगें, (और) अन्न को बल को और शीघ्र दान देनेके स्वभाव को प्राप्त करें।८।

NEPAL SANSKRIT UNIVERSITY 1986 A.D.
पुस्तकालय

ऋ० मं० १ सू० १९०

बृहस्पतिर्देवता, अगस्त्य ऋषिः ।

विनियोगः—

२ । ७ द्वितीया सप्तमीच बार्हस्पत्येपशौ वपायाज्या (आ० ३ । ७ । ९) ।

शिष्टाणां विनियोगोलैङ्गिकः ।

सूक्तका भावार्थ ।

हे आर्य गण! द्वेष से रहित श्रेष्ठ और स्तुति के योग्य बृहस्पति को स्तोत्रों द्वारा बढ़ाओ, जिस वाणी के नेता, सुन्दर कान्ति वाले और स्तुति किए गए के वचनको देवता और मनुष्य आदर के साथ सुनते हैं ॥ १ ॥ उसको योग्य वाणी प्राप्त होती हैं, जिस ने देवभक्तों की धारा प्रवाह को छोड़ा है, वही विस्तार वाले लोकों का प्रकाशक और सृष्टि की आदि में मातरिश्वा हुआ है ॥ २ ॥ स्तुति शीलता, नमस्कार का ऊंचा करना और मंत्रद्रष्टा होना ये सब गुण बृहस्पति देते हैं, जैसे दोनों बाहु से मानो सविता ताप और प्रकाश को देता है, जो कोई भी अजेय वन पशु की नाईं भयानक, बलवान और हिंसा के भय से रहित है वह सब इस बृहस्पति के बल से है ॥ ३ ॥ जो यश के धारण करने वाला विद्वान घोड़े की न्याईं भ्रम करता है, उसका यश द्यौ और पृथिवी में फैलता है और वृत्र जैसे मायावी पुरुषों को प्रति दिन बृहस्पति के बाण प्राप्त होते हैं जैसे मृगों को ॥ ४ ॥ हे देव बृहस्पति! जो धनवान पापी आपको निकम्मे बैल की नाईं मानते हुए आप की कृपा से जीते हैं, आप उन मूर्खों को सुन्दर धन नहीं देते हो, वरन उस दुष्ट से घृणा ही करते हो ॥ ५ ॥ हे बृहस्पति! आप

सुमार्ग में चलने वाले मनुष्य के लिये सुन्दर घास वाले रस्ते की नाईं हैं, और जो दुष्टों का शासन करता है उस के लिये प्रसन्न मित्र की नाईं हैं, जो द्वेष से रहित होकर हम को देखते हैं, वे क्लेशों से घिरे हुए भी निर्विघ्न हुए २ ठैरें ॥ ६ ॥ जिस को स्तुति के गीत ऐसे प्राप्त होते हैं, जैसे किनारों में भंवर वाली बहने वाली नदियां समुद्र को प्राप्त होती हैं, वह गीध की दृष्टि वाले बृहस्पति पार लंघने के स्थान और डुबाऊ जलको बीच से देखते हैं ॥ ७ ॥ इस प्रकार बहुतों के लिये उत्पन्न बलवान श्रेष्ठ और पूज्य देव बृहस्पति स्वीकार किए गए हैं, वह स्तुति किये जाकर हमारे लिये वीर और गौओं सहित धन को देवें और हम अन्न को बल को और शीघ्र दान के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ८ ॥

बृहस्पतिर्देवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

अनर्वाणंवृषभंमन्द्रजिह्वं बृहस्पतिंवर्धयानव्यमर्कैः । गाथान्यः
सुरुचोयस्यदेवा आशृण्वन्तिनवमानस्यमर्ताः ॥ १ ॥

अनर्वाणम्	द्वेषरहितम्	द्वेष से रहित को
वृषभम्	श्रेष्ठम्	श्रेष्ठ को

मन्द्रऽजिह्वम्	मनोज्ञवाचम्	सुहावनी वाणी वाले को
बृहस्पतिम्	बृहस्पतिम्	बृहस्पति को
वर्धय	वर्धय	तू बढ़ा
नव्यम्	स्तुत्यम्	स्तुति के योग्य को
अर्कैः	स्तोत्रैः	स्तोत्रों से
गाथान्यः	वाण्यानेतुः	वाणी के नेता का
सुऽरुचः	शोभनकान्तिमतः	सुन्दर कान्ति वाले की
यस्य	यस्य	जिस की
देवाः	देवाः	देवता
आऽशृण्वन्ति	आदरेण-शृण्वन्ति	आदर के साथ सुनते हैं

नवमानस्य	स्तूयमानस्य (कर्मणिकर्तृप्रत्ययः)	स्तुति किये जाते हुए की
मर्ताः	मनुष्याः	मनुष्य

संस्कृतार्थः।

(हेआर्यगण !) द्वेषरहितं श्रेष्ठंस्तुत्यम् (च) बृहस्पतिं स्तोत्रैर्वर्धय, वाण्यानेतुः शोभनकान्तिमतः स्तूयमानस्य यस्य (वाचम्) देवा मनुष्याः (च) आदरेण शृण्वन्ति ॥ १ ॥

भाषार्थः।

(हे आर्यगण !) द्वेष से रहित श्रेष्ठ और स्तुति के योग्य वृहस्पति को स्तोत्रों से बढ़ाओ, जिसवाणी के नेता, सुन्दर कान्ति वाले और स्तुति किये गए के वचन को देवता और मनुष्य आदर के साथ सुनते हैं ॥ १ ॥

वृहस्पतिर्देवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।१३।११।

तमृत्वियाउपवाचः सचन्ते सर्गो-
नयोदेवयतामसर्जि । बृहस्पतिः

स ह्य॒ञ्जो वरां॑सि॒ विभ्वाभ॑व॒त् समृ॒-
ते मा॑त॒रिश्वा॑ ॥ २ ॥

तम्	तम्	उस को
ऋ॒त्विया॑ः	अनुरूपाः (आ०को०)	योग्य
उप॑	उप +	–
वा॑चः	वाचः	वाणियां
स॒च॒न्ते॒	उप+सचन्ते, प्राप्नुवन्ति	प्राप्त होती हैं
स॒र्ग॑ः	धारा	धारा
न	इव	की न्याईं
यः	यः	जिसने
दे॒व॒ऽय॒ताम्	देवकामानाम्	देव भक्तों की

अस॑र्जि	मुक्तवान् (व्यत्ययः)	छोड़ा है
बृ॒ह॒स्पति॑ः	बृहस्पतिः	बृहस्पति
सः	सः	वह
हि	एव	ही
अ॒ञ्ज॑ः	प्रकाशकः	प्रकाश करने वाला
व॒रां॑सि	विस्तृतानाम् (षष्ठ्यर्थे द्वितीया)	विस्तृत (लोकों) का
वि॒ऽभ्वा॑	महान्	महान
अभ॑वत्	सम्+अभवत्	हुआ है
सम्	+सम्	-
ऋ॒त	ऋते	दैवीनियम में
मा॒त॒रिश्वा॑	मातरिश्वा	मातरिश्वा

संस्कृतार्थः।

तम् अनुरूपा वाचः प्राप्नुवन्ति यो देवकामानां धारेवमुक्तवान् स एव विस्तृतानाम् (लोकानाम्) प्रकाशको बृहस्पतिः ऋते महान् (मातरिश्वा) अभवत् ॥ २ ॥

भाषार्थः।

उस का योग्य वाणी प्राप्त होती हैं जिसने देव भक्तों की धारा को छोड़ा है, वह ही विस्तार वाले (लोकों) का प्रकाशक बृहस्पति दैवीनियम में महान मातरिश्वा हुआ है॥ २॥

बृहस्पति अग्नि का ही अध्यात्मिक नामहै जो देवभक्ति के देने वाला है उसी का प्रथम रूप सृष्टिकी आदि में मातरिश्वा है। मातरिश्वा के लिये देखो पृ० ६९७॥

बृहस्पतिर्दैवता, त्रिष्टुप्छन्दः।१२।१३।११।१२।

उप॑स्तुति॒ंनम॑स॒उद्य॑तिं च॒
श्लोकं॑यंसत्सवि॒तेव॒प्रबा॒हू। अ॒स्य
क्रत्वाऽह॑न्य॒यो॒३॒॑र्यो अस्ति॑ मृ॒गोनभी॒-
मो॑अ॒रक्ष॒सस्तु॑विष्मान्॥ ३॥

उपऽस्तुतिम्	शीलताम्	स्तुति के स्वभाव को
नमसः	नमस्कारस्य	नमस्कार के
उत्ऽयतिम्	उत्क्रमम्	ऊपर उठाने को
च	च	और
श्लोकम्	मंत्रम्	मंत्र को
यंसत्	प्र+यंसत प्रयच्छति	देता है
सविताऽइव	सवितेव	सविता की न्याईं
प्र	+प्र	–
बाहू॰	बाहुभ्याम् (तृतीयार्थेप्रथमा)	दोनों भुजाओं से
अस्य	अस्य	इस के
क्रत्वा	बलेन	बल से

अ॒ह॒न्य॑ः	अजय्यः (आ०को०)	अजेय
यः	यः	जो
अस्ति॑	अस्ति	है
मृ॒गः	वनपशुः	बन पशु
न	इव	की न्याईं
भी॒मः	भयानकः	भयानक
अ॒र॒क्षस॑ः	हिंसारहितस्य	हिंसा रहित के
तु॒वि॑ष्मान्	बलवान्	बलवाला

संस्कृतार्थः।

(बृहस्पतिः) स्तुति शीलतां नमस्कारस्य उच्छ्रयं मन्त्र (इष्टिंच) सवितेव बाहुभ्यां प्रयच्छति, यः (कश्चित्) अजेयो वनपशुरिवभयानकः बलवान् (चास्ति सः) अस्य हिंसारहितस्य (बृहस्पतेः) बलेन (अस्ति) ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

बृहस्पति स्तुतिका स्वभाव,नमस्कार को उठाने का शील और मन्त्र (दर्शन की शक्ति) देते हैं जैसे सविता दोनों बाहु से मानो (प्रकाश और ताप को देता है) जो (कोई भी) अजेय बन पशु की न्याईं भयानक (और) बलवान् है (वह) इस हिंसा रहित (बृहस्पति) के बल से ही है ॥ ३ ॥

बृहस्पतिर्देवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

अ॒स्यश्लोको॑दि॒वीय॑ते पृथि॒-
व्या॒मत्यो॑नयंसद्य॒क्षभृ॒द्विचे॑ताः ।
मृ॒गाणां॒नहे॒तयो॒यन्ति॑चे॒मा बृह॒-
स्पते॒रहि॑मायाँअ॒भिद्यून् ॥ ४ ॥

अ॒स्य	अस्य	इस का
श्लोकः॑	यशः	यश

दि॒वि	दिवि	द्यौ में
ई॒य॒ते॒	व्याप्नोति	फैल जाता है
पृ॒थि॒व्याम्	पृथिव्याम्	पृथिवी में
अत्य॑ः	अश्वः	घोड़ा
न	इव	की न्याई
यं॒स॒त्	यतते	यत्न करता है
य॒क्ष॒ऽभृत्	यज्ञस्यधारकः	यक्ष के धारण करने वाला
विऽचे॑ताः	विचेताः	विद्वान्
मृ॒गाणा॑म्	मृगान् (द्वितीयार्थेषष्टी)	मृगों को
न	इव	की न्याइं
हे॒त॑यः	शस्त्राणि	शस्त्र

यन्ति॑	प्राप्नुवन्ति	प्राप्त होते हैं
च॒	च	और
इ॒माः	इमानि	ये
बृ॒हस्पते॑ः	बृहस्पतेः	बृहस्पति के
अहि॑ऽमायान्	वृत्रवद्मायाविनः	वृत्र की न्याइ माया वालों को
अ॒भि	अभि+	–
द्यून्	अभि+द्यून्, प्रति दिनम् अल्पे समये इत्यर्थः	प्रतिदिन

संस्कृतार्थः।

अस्य यशो दिवि पृथिव्याम् (च) व्याप्नोति (यः) यज्ञस्यधारको विचेताः अश्वइव यतते, च बृहस्पतेश्च इमानि शस्त्राणि वृत्रवद्मायाविनः (पुरुषान्) प्रतिदिनम् मृगान् इव प्राप्नुवन्ति ॥ ४ ॥

भाषार्थः।

इसका यश द्यौ और पृथिवी में फैलता है, जो यज्ञ के धारण करने वाला विद्वान् घोडे की न्याईं श्रम करता है, और बृहस्पति के ये शस्त्र वृत्र की नाईं माया वाले (पुरुषों को) प्रति दिन मृगों की नाईं प्राप्त होते हैं ॥ ४ ॥

बृहस्पतिर्देवता, त्रिष्टुप्छन्दः।१।१।१।१।१।१।१

येत्वा॑देवोस्रि॒कंमन्य॑मानाः पा॒पा-
भ॒द्रमु॑प॒जीव॑न्तिप॒ज्राः । नदू॒ढ्ये॒३॒ष-
नु॑ददासिवा॒मं बृह॑स्पते॒चय॑स॒इत्
पि॑यारुम् ॥ ५ ॥

ये	ये	जो
त्वा॒	त्वाम्	तुझ को
दे॒व	हे देव !	हे देव

उ॒स्रि॒कम्	गतवयस्कं वृषभम्	बूढे बैल को
मन्य॑मानाः	मन्यमानाः	मानते हुए
पा॒पाः	पापाः	पापी
भ॒द्रम्	कल्याणरूपम्	कल्याण रूपी को
उ॒प॒ऽजीव॑न्ति	(त्वाम्) उपजीवन्ति	(तेरे) सहारे जीते हैं
प॒ज्राः	धनवन्तः (आ०को०)	धनवान्
न	न	नहीं
दु॒ःऽध्ये॑	दुर्बुद्धिभ्यः (वचनव्यत्ययः)	मूर्खों के लिये
अ॑नु	अनु+	–
द॒दा॒सि॒	अनु+ददासि, अनुकूलं प्रयच्छसि	तू अनुकूल देता है

वा॒मम्	वननीयम् (धनम्)	सुन्दर धन को
बृह॒स्पते	हे बृहस्पते !	हे बृहस्पति !
चय॑से	जुगुप्ससे (आ०को०)	घृणा करते हो
इत्	एव	ही
पि॑यारुम्	दुष्टम्	दुष्ट को

संस्कृतार्थः ।

हे देव ! बृहस्पते ! ये धनवन्तः पापाः त्वां गत वयस्कं वृषभं मन्यमानाः सन्तः (तव) कल्याणम् अनुजीवन्ति (त्वं तेभ्यः) दुर्बुद्धिभ्यो वननीयं धनं न प्रयच्छसि (प्रत्युत तान्) दुष्टाञ्जुगुप्ससे एव ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे देव ! बृहस्पति ! जो धनवान पापी आपको बूढ़ा बैल मानते हुए (अपने) कल्याण के सहारे जीते हैं, आप उन मूर्खों को सुन्दर धन नहीं देते हो, (वरन) उन दुष्टों से घृणा ही करते हो ॥ ५ ॥

बूढ़ा बैल मानते हुए अर्थात निकम्मा जानते हुए, और इसलिये स्तुति और पूजा न करते हुए बृहस्पति के दिये भोगों को भोगते हैं।

बृहस्पतिर्देवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

सुप्रैतुःसूयवसोनपन्था दुर्नियन्तुः परिप्रीतोनमित्रः। अनर्वाणोअभियेचक्षतेनोऽपीवृताअपोर्णुवन्तोअस्थुः॥ ६ ॥

सुऽप्रैतुः	सुगन्तुः	अच्छे रस्ते जाने वाले के
सुऽयवसः	शोभन घासमयः	सुन्दर घास वाला
न	इव	की न्याईं
पन्थाः	मार्गः	मार्ग
दुःऽनियन्तुः	दुष्टानांनियमितुः	दुष्टोंके नियम पर चलाने वाले के

परि॑ऽप्रीतः	सर्वतःप्रसन्नः	सब ओर से प्रसन्न हुआ २
न	इव	की न्याईं
मि॒त्रः	सखा	मित्र
अ॒न॒र्वाणः॑	द्वेषहिताः (भा० को०)	द्वेष से रहित
अ॒भि	अभि+	–
ये	ये	जो
चक्ष॑ते	अभि+चक्षते, पश्यन्ति	देखते हैं
न॒ः	अस्मान्	हम को
अपि॑ऽवृताः	वेष्टिताः	घिरे हुए
अ॒प॒ऽऊ॒र्णु॒वन्तः॑	अवरोधरहिताः	निर्विघ्न
अ॒स्थु॒ः	तिष्ठन्तु (लोडर्थेलिट्)	ठैरें

संस्कृतार्थः ।

(हे बृहस्पते ! त्वम्) सुमार्गेणगन्तुः (मनुष्यस्य) शोभनघासमयो मार्गइव (असि) दुष्टानां नियमितुः (च) सर्वतः प्रसन्नः सखेव (असि) ये द्वेषरहिताः (सन्तः) अस्मान् पश्यन्ति (ते क्लेशैः) परिवृताअपि अवरोध रहिताः तिष्ठन्तु ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

(हे बृहस्पति आप) अच्छे रस्ते जाने वाले मनुष्य के लिये सुन्दर घास वाले मार्ग की नाईं हैं, (और) दुष्टों के शासन करने वाले के सब तरह से प्रसन्न मित्र की नाईं हैं, जो द्वेष से रहित होकर हम को देखते हैं, वे (क्लेशोंसे) घिरे हुए भी निर्विघ्न ठैरें ।६।

बृहस्पतिर्देवता, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

संयंस्तुभो॒ऽवन॑यो॒नयन्ति॑ समु॒द्रं
नस्र॒वतो॒रोध॑चक्राः । सवि॒द्वाँ उ॒भयं॑
चष्टेअ॒न्तर्बृह॒स्पति॒स्तर॒ आप॑श्च॒गृ॑ध्रः ॥ ७॥

सम्	सम्+	–
यम्	यम्	जिस को
स्तुभ॑ः	स्तुतिगीतानि	स्तुति के गीत
अव॑नयः	नद्यः (निघं० १।१३)	नदियां
न॒	इव	की न्याईं
यन्ति॑	सम्+यन्ति, प्राप्नुवन्ति	प्राप्त होती हैं
स॒मु॒द्रम्	समुद्रम्	समुद्र को
न	इव	जैसे
स्र॒वत॑ः	स्रवन्त्यः	बहती हुईं
रोध॑ऽचक्राः	कूलेषुआवर्त- युक्ताः	गढ़ों में भंवर वालीं
सः	सः	वह
वि॒द्वान्	जानन्	जानता हुआ

उ॒भय॑म्	द्वयम्	दोनों को
च॒ष्टे॒	पश्यति	देखता है
अ॒न्तः	मध्यतः	बीच से
बृह॒स्पति॑ः	बृहस्पतिः	बृहस्पति
त॑रः	तरणस्थानम्	पार लंघने के स्थान को
आप॑ः	आपः	जलों को
च॒	च	और
गृ॑ध्रः	गृध्ररूपः	गीध रूप

संस्कृतार्थः।

यं स्तुतिगीतानि कूलेष्वावर्तयुक्ताः स्रवन्त्योनद्यः समुद्रमिव प्राप्नुवन्ति सः, गृध्ररूपो बृहस्पतिः तरण स्थानम् अगाधजलं च, उभयं जानन् (सन्) मध्यतः पश्यति ॥ ७ ॥

भाषार्थः।

जिसको स्तुति के गीत इस तरह प्राप्त होते

हैं जैसे गढ़ों में भंवर वाली बहने वाली नदियां समुद्र को, वह गीध रूप बृहस्पति पार लंघने के स्थान और डुबाऊ जल दोनोंको बीचसे देखता है।७

आशय यह है कि वह गीध की दृष्टि वाला जानता है कि किस मार्ग पर चलने से मनुष्य को भय है और किस मार्ग पर चलने से अभय है। उसकी स्तुति सेही मनुष्य भयके मार्गसे बच सकता है।

बृहस्पतिर्देवता, त्रिष्टुप्छन्दः।१।१।१।१।१।१।१।१।

ए॒वाम॒हस्तु॑विजा॒तस्तुवि॑ष्मा॒न्
बृह॒स्पति॑र्वृष॒भोधा॑यिदे॒वः । स॑नः
स्तु॒तोवी॒रव॑द्धातु॒गोम॑द् वि॒द्यामे॒षंवृ॒-
जनं॑जी॒रदा॑नुम् ॥ ८ ॥

ए॒व	एवम्	इस प्रकार
म॒हः	पूज्यः	पूज्य
तु॒वि॒ऽजा॒तः	बह्वर्थमुत्पन्नः	बहुतों के लिये उत्पन्न

ऋ०मं०१ सू०१९० मं०८ (५१५८)

तुवि॑ष्मान्	बलवान्	बलवाला
बृ॒ह॒स्पति॑ः	बृहस्पतिः	बृहस्पति
वृ॒ष॒भः	श्रेष्ठः	श्रेष्ठा
धा॒यि॒	अधायि	धारण किया गया है
दे॒वः	देवः	देव
सः	सः	वह
न॒ः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
स्तु॒तः	स्तुतः	स्तुति किया हुआ
वी॒रऽव॑त्	वीरोपेतम्	वीरों वाले को
धा॒त॒	ददातु	धारण करे
गोऽम॑त	गोभिर्युक्तम्	गौओं वाले को

वि॒द्या॑म	प्राप्नुयाम	हम प्राप्त करें
इ॒षम्	अन्नम्	अन्न को
वृ॒ज॑नम्	बलम्	बल को
जी॒रऽदा॑नुम्	शीघ्रदानशीलताम्	शीघ्र दान के स्वभाव को

संस्कृतार्थः।

एवं बह्वर्थमुत्पन्नो बलवान् श्रेष्ठोदेवो बृहस्पतिः पूज्यः स्वीकृतोऽभूत्, सः स्तुतः (सन्) अस्मभ्यं वीरोपेतं गोभिर्युक्तम् (च) धनम् ददतु (वयम्) अन्नं बलं शीघ्रदान शीलताम् (च) प्राप्नुयाम । ८।

भाषार्थः।

इस प्रकार बहुतों के लिये उत्पन्न बलवान् श्रेष्ठ देव बृहस्पति पूज्य स्वीकार किया गया है, वह स्तुति किये (जाकर) हमारे लिये बीर और गौओं सहित धन को देवें, (और हम) अन्न को बल को और शीघ्रदान के स्वभाव को प्राप्त करें ॥ ८ ॥

ऋ०मं०१ सू० १९१।

अप्तृण सूर्यादेवताः अगस्त्य ऋषिः।

विनियोगोलैङ्गिकः-

१-१६। कङ्कतोनेति सूक्तंतु विषार्तः प्रयतोजपेत्। विषं न क्रमतेचास्य सर्पाद्दृष्टि विषादपि। यत्कीटलूतासुविषं दंष्ट्र वृश्चिक तश्च यत्। मूलं च कृत्रिमंचैव जपन्सर्वमपोहति। ऋग्वि० १।२८।

१६। अध्यायोपाकरणोत्सर्गयोरेषाविनियुक्ता (आ०गृ०सू० ३।५।५)

सूक्त का भावार्थ।

विषैले जीव, वा, न विष वाला, अथवा जल का जीव, जो दोनों जलन उत्पन्न करने वाले हैं, ये बिना देखे विष से दिग्ध कर देते हैं ॥ १ ॥ विष को हरने वाली ओषधि पास आती हुई विषैले जीव को मारती है, और लौट कर जाती हुई भी मारती है, कूटी जाती हुई भी मारती है, और पीसी जाती हुई पीसती है ॥ २ ॥ शर, कुशर, दर्भ, सैर्य, मौंज और वैरिण ये सब अदृष्ट जीव मिल कर विष से दिग्ध कर देते हैं ॥ ३ ॥ जब गौएं गोठ में बैठ जाती हैं, मृग अपने बिलों में घुस जाते हैं, और मनुष्यों की चेष्टाएं निद्रा में डूबी हुई होती हैं। तब अदृष्ट विषैले जीव विष से दिग्ध कर देते हैं ॥ ४ ॥ ये स्वयं न दिखने वाले और सब को देखने वाले विषैले जीव सायं समय की बाट देखते हुए चोरों की न्याईं देखे जाते हैं हे मनुष्यो ! इन से सावधान रहो ॥ ५ ॥ हे विषैले जीवो ! द्यौ तुम्हारा पिता है, पृथिवी माता है सोम भ्राता और अदिति बहन है स्वयं न दिखने वाले और सब को देखने वाले तुम चुप

ठैरो और सुख से शयन करो ॥ ६ ॥ हे विषैले जीवो ! जो तुम कंधे से चलने वाले, जो अंग से चलने वाले, जो सूई केसे डंक वाले जो बहुत विष वाले और जो कोई न दीखने वाल तुम हो वे सब मिल कर चले जाओ ॥ ७ ॥ सब से देखे जाने वाले और अदृष्ट जीवों के मारने वाले सूर्य सब अदृष्ट जीवों को और सब राक्षसियों को विनाश करते हुए पूर्व दिशा में उदय होरहे हैं ॥ ८ ॥ सब से देखे जाने वाले और अदृष्ट जीवों के मारने वाले वह अदिति के पुत्र सूर्य बहुत प्रकार से सब विषों को नाश करते हुए पर्वतों से ऊपर ऊंचढ़े हैं ॥ ९ ॥ मैं सूर्य में विष को और मद्य वाले के घर में चर्म को लटकाता हूं, सचमुच वह नहीं मरेगा, न हम मरेंगे, उस का मार्ग दूर है, हे विष ! अश्वारूढ़ सूर्य ने तुझे मीठा मद्य बना दिया है ॥ १० ॥ हे विषैले जीव ! उस थोड़ी शक्ति वाली श्वेत तित्तरी ने तेरा विष खा लिया है, वह अवश्य नहीं मरेगी न हम मरेंगे उसका मार्ग दूर है हे विष ! अश्वारूढ़ सूर्य ने तुझे मीठा मद्य बना दिया है ॥ ११ ॥ इक्कीस चिंगाड़ियों ने विष के बल को भक्षण करलिया है वे अवश्य नहीं मरती हैं न हम मरते हैं, उसका रस्ता दूर है, हे विष ! अश्वारूढ़ सूर्य ने तुझ को मीठा मद्य बना दिया हैं ॥ १२ ॥ मैंने विष के नाश करने वाली सब निन्नानवें नदियों का नाम लेलिया है, उसका रस्ता दूर है हे विष ! अश्वारूढ़ सूर्य ने तुझे मीठा मद्य बना दिया है ॥ १३ ॥ हे विषैले जीव ! इक्कीस मोरनी और वे सात बहन नदियां तेरे विष को लेगई हैं, जैसे घड़े वाली स्त्रियां जल को ले जाती हैं ।१४। छोटासा विष कीट है उस नीच को पत्थर से कुचलता हूं, यहां से विष दूरवर्ती देशों को लौटता है ॥ १५ ॥ विष कीट पर्वत से निकल कर बोला, कि बिच्छू का विष तुच्छ है, हे बिच्छू तेरा विष तुच्छ है ॥ १६ ॥

ऋ०मं०१ सू० १९१।

अप्तृण सूर्यादेवताः अगस्त्य ऋषिः।

विनियोगोलैङ्गिकः-

१-१६। कङ्कतोनेति सूक्तंतु विषार्तः प्रयतोजपेत्। विषं न क्रमतेचास्य सर्पाद्दृष्टिं विषादपि। यत्कीटलूतासुविषं दंष्ट्रि वृश्चिक तश्च यत्। मूलं च कृत्रिमंचैव जपन्सर्वमपोहति। ऋग्वि० १।२८।

१६। अध्यायोपाकरणोत्सर्गयोरेषाविनियुक्ता (आ०गृ०सू० ३।५।५)

सूक्त का भावार्थ।

विषैले जीव, वा, न विष वाला, अथवा जल का जीव, जो दोनों जलन उत्पन्न करने वाले हैं, ये बिना देखे विष से दिग्ध कर देते हैं ॥ १ ॥ विष को हरने वाली ओषधि पास आती हुई विषैले जीव को मारती है, और लौट कर जाती हुई भी मारती है, कूटी जाती हुई भी मारती है, और पीसी जाती हुई पीसती है ॥ २ ॥ शर, कुशर, दर्भ, सैर्य, मौंज और वैरिण ये सब अदृष्ट जीव मिल कर विष से दिग्ध कर देते हैं ॥ ३ ॥ जब गौएं गोठ में बैठ जाती हैं, मृग अपने बिलों में घुस जाते हैं, और मनुष्यों की चेष्टाएं निद्रा में डूबी हुई होती हैं। तब अदृष्ट विषैले जीव विष से दिग्ध कर देते हैं ॥ ४ ॥ ये स्वयं न दिखने वाले और सब को देखने वाले विषैले जीव सायं समय की बाट देखते हुए चोरों की न्याईं देखे जाते हैं हे मनुष्यो! इन से सावधान रहो ॥ ५ ॥ हे विषैले जीवो! द्यौ तुम्हारा पिता है, पृथिवी माता है सोम भ्राता और अदिति बहन है स्वयं न दिखने वाले और सब को देखने वाले तुम चुप

ठैरो और सुख से शयन करो ॥ ६ ॥ हे विषैले जीवो ! जो तुम कंधे से चलने वाले, जो अंग से चलने वाले, जो सूई केसे डंक वाले जो बहुत विष वाले और जो कोई न दीखने वाल तुम हो वे सब मिल कर चले जाओ ॥ ७ ॥ सब से देखे जाने वाले और अदृष्ट जीवों के मारने वाले सूर्य सब अदृष्ट जीवों को और सब राक्षसियों को विनाश करते हुए पूर्व दिशा में उदय होरहे हैं ॥ ८ ॥ सब से देखे जाने वाले और अदृष्ट जीवों के मारने वाले वह अदिति के पुत्र सूर्य बहुत प्रकार से सब विषों को नाश करते हुए पर्वतों से ऊपर ऊंचढ़े हैं ॥ ९ ॥ मैं सूर्य में विष को और मद्य वाले के घर में चर्म को लटकाता हूं, सचमुच वह नहीं मरेगा, न हम मरेंगे, उस का मार्ग दूर है, हे विष ! अश्वारूढ़ सूर्य ने तुझे मीठा मद्य बना दिया है ॥ १० ॥ हे विषैले जीव ! उस थोड़ी शक्ति वाली श्वेत तित्तरी ने तेरा विष खा लिया है, वह अवश्य नहीं मरेगी न हम मरेंगे उसका मार्ग दूर है हे विष ! अश्वारूढ़ सूर्य ने तुझे मीठा मद्य बना दिया है ॥ ११ ॥ इक्कीस चिंगाड़ियों ने विष के बल को भक्षण करलिया है वे अवश्य नहीं मरती हैं न हम मरते हैं, उसका रस्ता दूर है, हे विष ! अश्वारूढ़ सूर्य ने तुझ को मीठा मद्य बना दिया हैं ॥ १२ ॥ मैंने विष के नाश करने वाली सब निन्नानवें नदियों का नाम लेलिया है, उसका रस्ता दूर है हे विष ! अश्वारूढ़ सूर्य ने तुझे मीठा मद्य बना दिया है ॥ १३ ॥ हे विषैले जीव ! इक्कीस मोरनी और वे सात बहन नदियां तेरे विष को लेगई हैं, जैसे घड़े वाली स्त्रियां जल को ले जाती हैं ।१४। छोटासा विष कीट है उस नीच को पत्थर से कुचलता हूं, यहां से विष दूरवर्ती देशों को लौटता है ॥ १५ ॥ विष कीट पर्वत से निकल कर बोला, कि बिच्छू का विष तुच्छ है, हे बिच्छू तेरा विष तुच्छ है ॥ १६ ॥

ऋ०मं०१सू०१९१मं०१ (५११२)

अप्तृणसूर्या देवताः, अनुष्टुप् छन्दः ।७।८।८।८

कङ्कतोनकङ्कतोऽथोसतीनकङ्कतः । द्वावितिप्लुषीइतिन्य१दृष्टाअलिप्सत ॥ १ ॥

कङ्कतः	विषमयोजीवः (आ० को०)	विष वाला जीव
न	न	न
कङ्कतः	विषमयोजीवः	विष वाला जीव
अथो०	अपिवा	अथवा
सतीनऽ-कङ्कतः	उदकचारीविषमयोजीवः (सतीनमितिउदकनामनिघं० १।१२)	ज़ल में विचरने वाला जीव
द्वौ	द्वौ	दो
इति	इति	यह

प्लुषी॒॰	दाहकौ	जलाने वाले
इति॑	इति निश्चयः	यह निश्चय है
नि	नि +	–
अ॒दृष्टा॑ः	अदृष्टः	विना देखे
अ॒लि॒प्स॒त॒	विषेणाञ्जन्ति	विष से युक्त करते हैं

संस्कृतार्थः ।

विषमयोजीवः न विषमयो (वा) अपि वा उदकचारी विषमयो जीवः द्वावपि दाहकौ इति (निश्चयः एते) अदृष्टाः विषेणाञ्जन्ति ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

विषैले जीव वा नविषैले अथवा जल में विचरने वाले विषैले जीव दोनों जलन उत्पन्न करने वाले यह हैं (निश्चय है) ये विना देखे विष से युक्त कर देते हैं ॥ १ ॥

अप्तृण सूर्या देवताः, अनुष्टुप् छन्दः ।८।८।८।८

अ॒दृष्टा॑न्हन्त्याय॒त्यथो॑ हन्तिपराय॒ती । अथो॑ अवघ्न॒ती ह॒न्त्यथो॑पिनष्टिपिंष॒ती ॥ २ ॥

अ॒दृष्टा॑न्	अदृष्टान्	न दीखे हुओं को
ह॒न्ति॒	हन्ति	मारती है
आ॒ऽय॒ती	आगच्छती	आती हुई
अथो॒॰	अपिच	और भी
ह॒न्ति॒	हन्ति	मारती है
प॒रा॒ऽय॒ती	परागच्छती	लौटती हुई
अथो॒॰	अपिच	और भी

अवऽघ्नती	कुट्टिता	कूटी जाती :ई
हन्ति	हन्ति	मारती है
अथो॰	अपिच	और भी
पिनष्टि	पिनष्टि	पीसती हैं
पिंषती	पिष्टासती	पिसी हुई

संस्कृतार्थः।

(विषहरणोषधिः) आगच्छती सती, अदृश्यमानान् (विषमयान्जीवान्) हन्ति अपिच परागच्छती (सती) हन्ति, कुट्टिता (सत्यऽपि) हन्ति, पिष्टासत्यऽपिच पिनष्टि ॥ २ ॥

भाषार्थः।

(विष को हरने वाली ओषधि) आती हुई अदृष्ट (विषैले जीवों को) मारती है और लौटती हुई भी मारती है, कूटी जाती हुई भी मारती है और पीसी जाती हुई भी पीसती है ॥ २ ॥

ऋ०मं०१ सू० १९१ म०२ (५१६४)

अप्तृण सूर्या देवताः, अनुष्टुप् छन्दः ।८।८।८।८

अ॒दृष्टा॑न्हन्त्याय॒त्यथो॑ह॒न्तिपराय॒ती । अथो॑अवघ्न॒तीह॒न्त्यथो॑पिनष्टिपिंष॒ती ॥ २ ॥

अ॒दृष्टा॑न्	अदृष्टान्	न दीखे हुओं को
ह॒न्ति॒	हन्ति	मारती है
आ॒ऽय॒ती	आगच्छती	आती हुई
अथो॒॰	अपिच	और भी
ह॒न्ति॒	हन्ति	मारती है
प॒रा॒ऽय॒ती	परागच्छती	लौटती हुई
अथो॒॰	अपिच	और भी

अ॒व॒ऽघ्न॒ती	कुट्टिता	कूटी जाती हुई
ह॒न्ति॒	हन्ति	मारती है
अथो॰	अपिच	और भी
पि॒न॒ष्टि॒	पिनष्टि	पीसती हैं
पि॒ंष॒ती	पिष्टासती	पिसी हुई

संस्कृतार्थः ।

(विषहरणौषधिः) आगच्छती सती, अदृश्यमानान् (विषमयानजीवान्) हन्ति अपिच परागच्छती (सती) हन्ति, कुट्टिता (सत्यऽपि) हन्ति, पिष्टासत्यऽपिच पिनष्टि ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

(विष को हरने वाली ओषधि) आती हुई अदृष्ट (विषैले जीवों को) मारती है और लौटती हुई भी मारती है, कूटी जाती हुई भी मारती है और पीसी जाती हुई भी पीसती है ॥ २ ॥

अप्तृणसूर्यादेवताः निचृदनुष्टुप्छन्दः ।७।७।८।८

श॒रासः॒ कुश॑रासो द॒र्भासः॑ सै॒र्या॑ उ॒त । मौ॒ञ्जाअ॒दृष्टा॑वैरि॒णाः सर्वे॑ सा॒कंन्य॑लिप्सत ॥ ३ ॥

श॒रासः॑	शराः	शर
कुश॑रासः	कुशराः	कुशर
द॒र्भासः॑	दर्भाः	दर्भ
सै॒र्याः	सैर्याः	सैर्य
उ॒त	च	और
मौ॒ञ्जाः	मौञ्जाः	मौंज
अ॒दृष्टाः॑	अदृष्टाः	अदृष्ट

वैरिणाः	वैरिणाः	वैरिण
सर्वे	सर्वे	सब
साकम्	मिलित्वा	मिलकर
नि	नितराम्	अत्यन्त
अलिप्सत	विषेणाङ्जन्ति	(विषसे) युक्त करते हैं

संस्कृतार्थः ।

शराः, कुशराः, दर्भाः, सैर्याः, मौङ्जाः, वैरिणाश्च (अदृष्टाः एते) सर्वे मिलित्वा निनरां विषेणाङ्जन्ति॥३

भाषार्थः ।

शर, कुशर, दर्भ, सैर्य, मौंज, (और) वैरिण (ये) सब अदृष्ट (जीव) मिलकर विष से युक्त करते हैं ॥ ३ ॥

शर, कुशर, दर्भ, सैर्य, मौंज, और वैरिण ये सब अदृष्ट विषैले जीव विशेष हैं जो इन घासों में रहते हैं ॥

अप्तृण सूर्यादेवताः, निचृद् अष्टुप् छन्दः ।८।८।७।८

निगावोगोष्ठेअसदन्निमृगासो-

ऋ०मं०१ सू०१९१ मं०४ (५११८)

अविक्षत । निके॒तवो॒जना॑ना॒ं न्य१॒॑-
दृष्टा॑अलिप्सत ॥ ४ ॥

नि	नि+	–
गा॑वः	गावः	गौएँ
गो॒ऽस्थे	गोष्ठे	गौष्ठ में
अ॒स॒द॒न्	नि+असदन्, निषण्णाःभवन्ति	बैठी होती हैं
नि	नि+	-
मृ॒गा॑सः	[illegible]	हिरन
अ॒वि॒क्ष॒त	नि+अविक्षत, निविष्टाभवन्ति	घुस जाते हैं
नि	नि+(अभवन्,) निमग्नाःभवन्ति	डूबी हुई होती हैं
के॒त॑वः	चेष्टाः	चेष्टाएं

जनानाम्	मनुष्याणाम्	मनुष्यों की
नि	नितराम्	अत्यन्त
अदृष्टाः	अदृष्टाः	न दीखे हुए
अलिप्सत	विषेणन्यञ्जन्ति	खूब (विष से) संयुक्त करते हैं

संस्कृतार्थः

(यदा) गावो गोष्ठे निषण्णाः भवन्ति, मृगाः (स्वालये) निविष्टाः भवन्ति मनुष्याणां बुद्धयः (च) निद्रायाम् निमग्नाः भवन्ति (तदा) अदृष्टाः (विषमयाजीवाः) विषेणन्यञ्जन्ति ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

(जब) गौएं गोठ में बैठ जाती हैं मृग (अपने बिलोंमें) घुस जाते हैं मनुष्यों की चेष्टाएं (नींदमें) डबी हुई होती हैं (तब) अदृष्ट (विषैलेजीव) विषसे युक्त कर देते हैं ॥ ४ ॥

अप्तृण सूर्यादेवताः, अनुष्टुप् छन्दः ।८।८।८।८

एतउत्येप्रत्यदृश्रन् प्रदोषंत-

स्क॑राइव । अदृ॑ष्टावि॒श्व॑दृष्टाः॒

प्रति॑बुद्धाअभूतन ॥ ५ ॥

ए॒ते	एते	ये
ऊ॑म्०	(पूरणः)	–
त्ये	ते	वे
प्रति॑	प्रति+	–
अ॒दृ॒श्र॒न्	प्रति+अदृश्रन्, प्रतिदृश्यन्ते	देखे जाते हैं
प्र॒दो॒षम्	सायंसमयम्	सायंकाल को
तस्क॑राःऽइव	चोराइव	चोरों की न्याईं
अदृ॑ष्टाः	अदृश्यमानाः	न दीखने वाले
विश्व॑-ऽदृष्टाः	सर्वेषांद्रष्टारः	सब के देखने वाले

प्रतिऽबुद्धाः	सावधानाः	सावधान
अभूतन	भवत (लोडर्थे लङ्)	तुम हो

संस्कृतार्थः ।

(हेनराः!) ते एते (स्वयम्) अदृश्यमानाः सर्वेषांद्रष्टारः(च) विषमयाजीवाःसायम्(प्रतीक्षमाणाः) चोराइव प्रतिदृश्यन्ते, (अतः) सावधाना भवत ॥५॥

भाषार्थः ।

(हेमनुष्यो!) वे थे (स्वयं) न दिखने वाले (और) सब को देखने वाले (विषैले जीव) सायंकाल को (बाट देखते हुए) चोरों की न्याईं देखे जाते हैं (इस लिये) साव धान रहो ॥ ५ ॥

अप्तृण सूर्या देवताः, अनुष्टुप् छन्दः ।१।८।७।८

द्यौर्वःपितापृथिवीमाता सोमो-
भ्राताऽदितिःस्वसा । अदृष्टावि-
श्वदृष्टास्तिष्ठतेळयतासुकम् ॥६॥

ऋ०मं०१ सू०१९१ मं०६ (५१७२)

द्यौः	द्यौः	द्यौ
व॒ः	युष्माकम्	तुम्हारा
पि॒ता	पिता	पिता
पृ॒थि॒वी	पृथिवी	पृथिवी
मा॒ता	माता	माता
सोम॑ः	सोमः	सोम
भ्राता॑	भ्राता	भाई
अदि॑तिः	अदितिः	अदिति
स्वसा॑	भगिनी	बहिन
अदृ॑ष्टाः	अदृश्यमानाः	न दीखने वाले
विश्व॑-ऽदृष्टाः	सर्वद्रष्टारः	सब के देखने वाले

तिष्ठ॑त	तिष्ठत	ठैरो
इ॒ळय॑त	स्वपित	शयन करो
सु	सुखेन	सुख से
क॒म्	(पूरणः)	–

संस्कृतार्थः ।

(हे विषमयाजीवाः !) द्यौर्युष्माकं पिता, पृथिवी माता, सोमो भ्राता, अदितिः (च) भगिनी (अस्ति) अदृश्यमानाः सर्वेषां द्रष्टारः (च यूयम्) तिष्ठत, सुखेन स्वपित ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

(हे विषैले जीवो!) द्यौ तुम्हारा पिता (है) पृथिवी माता है, सोम भ्राता (और) अदिति बहन (है) न दिखने वाले (और सब का) देखने वाले (तुम चुप) ठैरो (और) सुख से शयन करो ॥ ६ ॥

अप्तृण सूर्यादेवताः, अनुष्टुप् छन्दः ।८।८।८।८

येअंस्या॒येअङ्ग्या॑ः सू॒चीकाये॒-

प्रकङ्कताः । अदृष्टाःकिञ्चनेहवः
सर्वेसाकंनिजस्यत ॥ ७ ॥

ये	ये	जो
अंस्याः	अंसगाः	कंधों से चलने वाले
ये	ये	जो
अङ्ग्याः	अङ्गगाः	अंग से चलने वाले
सूचीकाः	सूचीकदशनाः	सूई कैसे डंक वाले
ये	ये	जो
प्रकङ्कताः	प्रकृष्टविषाः	बहुत विष वाले
अदृष्टाः	अदृश्यमानाः	न दीखने वाले
किम्	किम् +	–

चन	किम्+चन	कोई भी
इह	इह	यहां
वः	युष्माकम्	तुम्हारा
सर्वे	सर्वे	सब
साकम्	मिलित्वा	मिल कर
नि	नि+	–
जस्यत	नि+जस्यत, नितरांगच्छत (निघं० २।१४)	नितान्त चले जाओ

संस्कृतार्थः ।

(हे विषमया जीवाः) ये (यूयम्) अंसगा, ये अङ्गगाः, ये, सूचीकदशनाः, ये प्रकृष्ट विषाः ये केचन अदृश्यमानाः (स्थ,एते यूयम्) सर्वे मिलित्वा नितरां गच्छत ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

(हे विषैले जीवो!) जो (तुम) कंधे से चलने

वाले, जो अंग से चलने वाले, जो सूई के से डंक वाले, जो बहुत विष वाले, और जो कोई न दीखने वाले (हो) (वे तुम) सब मिलकर नितान्त चले जाओ ॥ ७ ॥

अप्तृण सूर्या देवताः,अनुष्टुप्छन्दः ।८।८।७।८

उत्पुरस्तात्सूर्यएति विश्वदृष्टो अदृष्टहा । अदृष्टान्त्सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वाश्च यातुधान्यः॥८

उत्	उत्+	–
पुरस्तात्	पूर्वस्यांदिशि	पूर्व दिशा में
सूर्यः	सूर्यः	सूर्य
एति	उत्+एति	उदय होता है

विश्व-ऽदृष्टः	सर्वैर्द्रष्टव्यः	सब से देखने योग्य
अदृष्टऽहा	अदृश्यमानानाम् जीवानाम्हन्ता	अदृष्ट जीवों के मारने वाला
अदृष्टान्	अदृश्यमानान्	न दिखने वालों को
सर्वान्	सर्वान्	सब को
जम्भयन्	विनाशयन्	नाश करता हुआ
सर्वाः	सर्वाः	सब को
च	च	और
यातुऽधान्यः	राक्षसीः	राक्षसियों को

संस्कृतार्थः।

सर्वैर्द्रष्टव्यः, अदृश्यमाना नाम् (जीवानाम्) हन्ता (च) सूर्यः सर्वान् अदृश्यमानान् सर्वाराक्षसीश्च विनाश यन् (सन्) पूर्वस्यां दिशि उदेति॥ ८॥

भाषार्थः ।

सबसे देखे जाने वाले, अदृष्ट (जीवों के) मारने वाले सूर्य सब अदृष्ट (जीवों) को और सब राक्षसियों को विनाश करते हुए पूर्व दिशा में उदय होते हैं ॥ ८ ॥

अप्तृणसूर्यादेवताः, अनुष्टुप् छन्दः ।८।८।८।८

उदपप्तदसौसूर्यः पुरुविश्वानिजूर्वन् । आदित्यःपर्वतेभ्यो विश्वदृष्टोअदृष्टहा ॥ ९ ॥

उत्	उत्+	–
अपप्तत्	उत्+अपप्तत्, ऊर्ध्वमगच्छत्	ऊंचा चढ़ा है
असौ	असौ	वह
सूर्यः	सूर्यः	सूर्य

पुरु	बहुविधम्	बहुत प्रकार से
विश्वानि	सर्वाणि	सब को
जूर्वन्	विनाशयन्	नाश करता हुआ
आदित्यः	अदितेःपुत्रः	अदिति का पुत्र
पर्वतेभ्यः	पर्वतेभ्यः	पहाड़ों से
विश्वऽदृष्टः	सर्वैर्द्रष्टव्यः	सब से देखने योग्य
अदृष्टऽहा	अदृश्यमानानाम् (जीवानाम्) हन्ता	न दिखने वाले (सर्पों) के मारने वाला

संस्कृतार्थः।

सर्वैर्द्रष्टव्यः, अदृश्यमानानाम् (जीवानाम्) हन्ता (च) असौ अदितेः पुत्रः सूर्यः बहुप्रकारेण सर्वाणि (विषाणि) विनाशयन् (सन्) पर्वतेभ्यः ऊर्ध्वमगच्छत् ॥ ९ ॥

भाषार्थः ।

सब से देखे जाने वाले, (और) अदृष्ट जीवों के मारने वाले वह अदिति के पुत्र सूर्य बहुत प्रकार के सब (विषों) को नाश करते हुए पर्वतों से ऊपर ऊंचे चढ़े हैं ॥ ९ ॥

अप्तृणसूर्यादेवताः, महा पंक्तिश्छन्दः ८।८।७।६।१०।९ ।

सूर्ये विषमासजामि दृतिंसुरावतोगृहे । सोचिन्नुनमराति नोवयंमरामारेअस्ययोजनंहरिष्ठा मधुत्वामधुलाचकार ॥ १० ॥

सूर्ये	सूर्ये	सूर्य में
विषम्	विषम्	विष को
आ	आ+	–

स॒जा॒मि॒	आ+सजामि, आसक्तंकरोमि	लटकाता हूं
हृ॑तिम्	चर्म	चर्म को
सुरा॑ऽवतः	सुरावतः	मद्यवाले के
गृ॒हे	गृहे	घर में
सः	सः	वह
चि॒त्	(पूरणः)	—
नु	खलु	अवश्य
न	न	नहीं
म॒रा॒ति॒	म्रियते	मरता है
नो०	नच	और नहीं
व॒यम्	वयम्	हम
म॒रा॒म॒	म्रियामहे	मरते हैं

आ॒रे	दूरे	दूर
अ॒स्य॒	अस्य	इसका
योज॑नम्	मार्गः	मार्ग
ह॒रि॒ऽस्थाः	अश्वारूढः	घोड़ों पर चढ़े हुए ने
मधु॑	मधुरम्	मीठे को
त्वा॒	त्वाम्	तुझ को
म॒धु॒ला	मध्यम् (आ० को०)	मद्य को
च॒का॒र॒	कृतवान्	किया है

संस्कृतार्थः ।

(अहम्) सूर्ये विषं, चर्म (च) सुरावतो गृहे आसक्तं करोमि, स खलु न म्रियते, न च वयं म्रियामहे अस्य मार्गो दूरे (अस्ति) (हे विष !) अश्वारूढः (सूर्य्यः) त्वां [illegible]ुरं मध्यम् कृतवान् ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

मैं सूर्य में विषको और मद्य वाले के घर में चर्म को लटकाता हूं, वह अवश्य नहीं मरेगा, न हम मरेंगे, उसका मार्ग दूर (है) (हे विष!) अश्वारूढ़ सूर्य्य ने तुझे मीठा मद्य बना दिया है ॥ १०॥

अप्तृणसूर्यादेवताः, महापंक्तिश्छन्दः ।८।८।७।६।१०।२

इयत्तिकाशकुन्तिका सकाजघासतेविषम् । सोचिन्नुनमरातिनोवयंमरामारे अस्ययोजनंहरिष्ठा मधुत्वामधुलाचकार ॥ ११ ॥

इयत्तिका	अल्पशक्तिका	थोड़ी शक्ति वाली
शकुन्तिका	शकुनी	शकुनी
सका	सा	उसने
जघास	भक्षितवती	खाया है

ते	तव	तेरे
विषम्	विषम्	विष को
सो०	सा (उइतिपूरणः)	वह
चित्	(पूरणः)	–
नु	खलु	अवश्य
न	न	नहीं
मराति	म्रियते	मरती है
नो०	नच	और नहीं
वयम्	वयम्	हम
मराम	म्रियामहे	मरते हैं
आरे	दूरे	दूर में
अस्य	अस्य	इस के

योज॑नम्	मार्गः	मार्ग
ह॒रि॒ऽस्थाः	अश्वारूढः	घोड़े पर चढ़े हुए ने
मधु॑	मधुरम्	मीठे को
त्वा॒	त्वाम्	तुझ को
म॒धु॒ला	मद्यम्	मद्य को
च॒का॒र॒	कृतवान्	किया है

संस्कृतार्थः ।

(हे विषमयजीव) सा अल्पशक्तिका शकुनी तव विषं भक्षितवती, सा खलु न म्रियते नच वयं म्रियामहे, अस्य मार्गो दूरे (अस्ति) हे विष! अश्वारूढः (सूर्यः) त्वां मधुरं मद्यं कृतवान् ॥ ११ ॥

भाषार्थः ।

हे विषैले जीव! उस थोड़ी शक्ति वाली शकुनिने तेरा विष खालिया है, वह अवश्य नहीं मरेगी न हम मरेंगे, उसका मार्ग दूर (है) (हे विष!) अश्वारूढ़ (सूर्य) ने तुझे मीठा मद्य बना दिया है ॥ ११ ॥

ऋ०मं०१सू०१९१मं०१२ (५१८९)

अप्तृणसूर्यदेवताः, महापंक्तिः,छन्दः ।७।६।१०।२

त्रिःसप्तविष्पुलिङ्गका विषस्यपुष्यमक्षन् । ताश्चिन्नुनमरन्तिनोवयंमरामारेअस्ययोजनंहरिष्ठामधुत्वामधुलाचकार ॥ १२ ॥

त्रिः	त्रिगुणिताः	तिगुने
सप्त	सप्त	सात
विष्पुलिङ्गकाः	अग्निकणिकाः	अग्निकीचिनगारियों ने
विषस्य	विषस्य	विष की
पुष्यम्	बलम्	बल को

अ॒त्स॒न्	भक्षितवत्यः	भक्षण किया है
ता॑ः	ताः	वे
चि॒त्	(पूरणः)	–
नु	खलु	अवश्य
न	न	नहीं
म॒र॒न्ति॒	म्रियन्ते	मरती है
नो॰	नच	और नहीं
व॒यम्	वयम्	हम
म॒रा॒म॒	म्रियामहे	मरें
आ॒रे	दूरे	दूर में
अ॒स्य॒	अस्य	इस के
योज॑नम्	मार्गः	मार्ग

ह॒रि॒ऽस्थाः	अश्वारूढः	घोड़ों पर चढ़े हुए ने
मधु॑	मधुरम्	मीठे को
त्वा॒	त्वाम्	तुझ को
म॒धु॒ला	मद्यम्	मद्यको
च॒का॒र॒	कृतवान्	किया है

संस्कृतार्थः ।

त्रिगुणिताः सप्त, अग्नि कणिकाः विषस्य बलं भक्षितवत्यः, ताः खलु न म्रियन्ते नच वयं म्रियामहे, अस्य मार्गो दूरे (अस्ति) हे विष ! अश्वारूढः (सूर्यः) त्वां मधुरं कृतवान् ॥ १२ ॥

भाषार्थः ।

इक्कीस चिनगारियोंने विषके बल को भक्षण कर लिया है, वे अवश्य नहीं मरती हैं, न हम मरते हैं, उस का रस्ता दूर (है), हे विष! अश्वारूढ़ सूर्य ने तुझ को मीठा मद्य बना दिया है ॥ १२ ॥

अप्तृणसूर्यादेवताः, महाबृहती छन्दः ।७।८।१०।९

नवानांनवतीनां विषस्यरोपुषीणाम् । सर्वासामग्रभंनामारेऽस्ययोजनंहरिष्ठा मधुत्वामधुलाचकार ॥ १३ ॥

नवानाम्	नवानाम्	नौ के
नवतीनाम्	नवतीनाम्	नब्बों के
विषस्य	विषस्य	विष के
रोपुषीणाम्	लोपयित्रीणाम्	नाश करने वालियों के
सर्वासाम्	सर्वासाम्	सब के
अग्रभम्	गृहीतवानस्मि,	ग्रहण किया है

नाम॑	नामानि (विभक्तेलुक्)	नामों को
आ॒रे	दूरे	दूर में
अ॒स्य॒	अस्य	इसका
योज॑नम्	मार्गः	रस्ता
ह॒रि॒ऽस्थाः	अश्वारूढः	घोड़े पर चढ़े हुए ने
मधु॑	मधुरम्	मीठे को
त्वा॒	त्वाम्	तुझ को
म॒धु॒ला	मद्यम् (आ० को०)	मद्य को
च॒का॒र॒	कृतवान्	बनाया है

संस्कृतार्थः।

(अहम्) नवाधिक नवतीनां विषलोपयित्रीणां सर्वासां नामानि गृहीतवानस्मि, अस्य मार्गो दूरे (अस्ति), हे विष ! अश्वारूढः (सूर्यः) त्वां मधुरं मद्यं कृतवान् ॥ १३ ॥

भाषार्थः।

(मैंने) निन्नानवें विषके नाश करने वाली सब का नाम ले लिया है, उसका रस्ता दूर (है), हे विष ! अश्वारूढ़ सूर्य ने तुझे मीठा बना मद्य बना दिया है ॥ १३ ॥

अप्तृणसूर्यादेवताः, निचृदनुष्टुप्छन्दः ।७।८।८।८

त्रिःसप्तमसूर्यः सप्तस्वसारोअग्रुवः । तास्तेविषंविजभ्रिरउदकंकुम्भिनीरिव ॥ १४ ॥

त्रिः	त्रिगुणिताः	तिगुनी
सप्त	सप्त	सात
मयूर्यः	मयूर्यः	मोरनियों ने
सप्त	सप्त	सात

ऋ०मं०१ सू०१९१मं०१४ (५११२)

स्वसा॑रः	भगिन्यः	बहिनों ने
प॒यु॑वः	नद्यः (निघं० १।१३)	नदियों ने
ताः	ताः	उन्हों ने
ते॒	तव	तेरे
वि॒षम्	विषम्	विष को
वि	वि+	–
ज॒भ्रि॒रे॒	वि+जभ्रिरे, हृतवत्यः	लेगईं हैं
उ॒द॒कम्	उदकम्	जल को
कु॒म्भिनी॑ः ऽइव	कुम्भधारिण्यः (स्त्रियः) इव	घड़े वाली (स्त्रियों) की न्याईं

संस्कृतार्थः ।

(हे विषमयजीव !) त्रिगुणिताःसप्तम यूयं:, भगिनीभूताः सप्तनद्यः (च) कुम्भ धारिण्यः (स्त्रियः) उदकमिव तवविषं हृतवत्यः ॥ १४ ॥

भाषार्थः ।

(हे विषैले जीव !) इक्कीस मोरनियां और वे भगनी रूप सात नदियां तेरे विष को लेगई हैं जैसे घड़े वाली स्त्रियां जल को (ले जाती हैं) ॥ १४ ॥

अप्तृणसूर्यादेवताः, अनुष्टुप् छन्दः ।८।८।८।८

इयत्तकः कुषुम्भकस्तकं भिन-
द्म्यश्मना । ततो विषं प्रवावृते परा-
चीरनुसंवतः ॥ १५ ॥

इयत्तकः	अल्पशरीरः	छोटा सा
कुषुम्भकः	विषकीटः	विषका कीडा
तकम्	कुत्सितम्	नीच को
भिनद्मि	भिनद्मि	मैं कुचलता हूं
अश्मना	पाषाणेन	पत्थर से

ततः	अतः	यहां से
विषम्	विषम्	विष
प्र	प्र+	–
वर्तते	प्र+वृत् ते, प्रवृत्तं भवति	लौटता है
पराचीः	दूरस्थान्	दूर होने वालों को
अनु	प्रति	की ओर
समऽवतः	प्रदेशान्	प्रदेशों को

संस्कृतार्थः ।

अल्पशरीरो विषकीटः (तम्) कुत्सितम् (अहम्) पाषाणेन भिनद्मि, अतो, विषं, दूरस्थान् प्रदेशान् प्रति प्रवृत्तं भवति ॥ १५ ॥

भाषार्थः ।

छोटासा विष कीट है, उस नीच को (मैं) पत्थर से कुचलता हूं, यहां से विष दूर देशों को लौटता है ॥ १५ ॥

।प्तृणसूर्यदेवताः, अनुष्टुप् छन्दः ।८।८।८।८

कुषुम्भकस्तदब्रवीद् गिरेः प्रवर्तमानकः । वृश्चिकस्यारसंविषमरसंवृश्चिकतेविषम् ॥ १६ ॥

कुषुम्भकः	विषकीटः	विष के कीड़े ने
तत्	एतत्	यह
अब्रवीत्	उक्तवान्	कहा
गिरेः	पर्वतात्	पर्वत से
प्रऽवर्तमानकः	निःसरन्	निकलता हुआ
वृश्चिकस्य	वृश्चिकस्य	बिच्छू का

अरसम्	रसरहितम् तुच्छामत्यर्थः	तुच्छ
विषम्	विषम्	विष
अरसम्	तुच्छम्	तुच्छ
वृश्चिक	हे वृश्चिक !	हे विच्छू
ते	तव	तेरा
विषम्	विषम्	विष

R
Acc 25009
29061

NEPAL SANSKRIT UNIVERSITY
पुस्तकालय

संस्कृतार्थः॥

विषकीटः पर्वताद् निःसरन् एतदुक्तवान् (यत्) वृश्चिकस्य विषं तुच्छम् (अस्ति) हे वृश्चिक ! तव विषं तुच्छम् (अस्ति) ॥ १६ ॥

भाषार्थः ।

विष का कीड़ा पर्वत से निकल कर बोला (कि) बिच्छूका विष तुच्छ (है), हे बिच्छू ! तेरा विष तुच्छ है ॥ १६ ॥

इति शताधिकं एकोनवतितमं सूक्तं समाप्तम्
समाप्तंच प्रथमं मण्डलम् ॥
यहां पहला मण्डल समाप्त हुआ ।

NEPAL SANSKRIT UNIVERSITY, 1986 A.D.
पुस्तकालय